

# शोध कल्पतरु

An International Multidisciplinary Research Journal

अंक 9

अप्रैल 2013 - जून 2013

*A Refereed Journal, Published Tri-monthly*



संयोजक, सम्पादक

डॉ० मनोज कुमार सिंह

हिन्दी विभाग,

भारतीय विश्वविद्यालय,

बाराबंकी

अध्यक्ष, सम्पादक

अमिताभ तेलंग

सम्पादक :

डॉ० विद्या सिंह

डॉ० लक्ष्मण केशव पाण्डेय

सह सम्पादक :

गरिमा सिंह

JOURNAL OF THE AKHIL BHARATIYA BHASHA EVAM

SAHITYA ANUSHILAN SAMITI

10. सीता : स्त्री अस्मिता की ध्वजवाहिका  
-हनी दर्शन 88-95
11. पार्वतलक्ष्मण तथा भीमदशरथ में साम्य  
-उमा आर्या 98-108
12. आधुनिक हिन्दी नाटक में श्रेय और धारा का अन्तर्द्वन्द्व : 'अपाक का एक दिन'  
-प्रियंका कुमारी मिश्रा 109-114
13. रेणु के उपन्यासों में सारी का संघ  
-प्रदीप कुमार शर्मा 115-121
14. समसामयिक सामाजिक निवृत्तियों का समाधान: स्मृति व वेदों अनुसार  
-डॉ. पृथ्वि शर्मा 122-127
15. दर्शन की व्यावहारिक उपयोगिता : पर्यावरण-प्रदूषण के विशेष संदर्भ में  
-डॉ. शब्दा राव 128-132
16. रेणु की राजनीतिक दृष्टि और मूल्य जीवन  
-प्रियंका 133-137
17. व्यावहार्यदर्शन में जाति की अभ्यारण  
-डॉ. सोमवीर 138-153
18. मैथिली पुरुषा श्रं अशा साहित्य में ग्रामीण जीवन  
-कंचनजीत डौर 154-159
19. आधुनिक भारत में महिला राजनीतिकरण  
-निवेद्यानंद तिवारी 160-167
20. स्त्री अस्मिता और कुम्मा सोबती का उपन्यास-साहित्य  
-विजयलक्ष्मी 168-177
21. स्वामी निवेद्यानन्द की दृष्टि में कर्म एवं कर्तव्य  
-डॉ0 उपेन्द्र कुमार त्रिपाठी 178-185
22. साहित्य और युगबंध  
-डॉ0 संतोष कुमार 186-191
23. दृष्टि, स्थिति एवं प्रत्यक्ष विषयक चिन्तन : स्वामी इयानन्द जारखती के परिप्रेक्ष्य में  
-हरेदी सात गौना 192-202
24. जन चेतना का क्रांति चिन्तन  
-नीलम देवी 203-207
25. 1930-40 के दशक में प्रमुख चिन्तन आन्दोलन  
-सुरील कुमार सिंघ 208-213
26. योगेश्वरी की समीक्षा  
-डॉ0 मनुदेव 214-223

99. वापसीवर्षा में मिनासाबाराबादन की नं. 2/20
100. रीमिनिस्सन्स, बंगाली चित्रकारसुत 3/ 64।
101. पन्ना मिश्रा की सिल्वन अन्वेषण अवलोकन आलेख 7 भाग-सिल्वन and एथिक्स, एक प्रतिष्ठा संस्कृतिय, सिद्धीप्रियति। मण्डल 2, पृ. 8
102. पानना पारदर्शनपत्रम्, कन्नड, कन्नड, 5/ 145
103. कर्त्तिकी विद्या सम्बन्धि, शैलेश्वर शर्मा, भाग्यशतक, भाग्यशतक श्रुतव्याचन।
104. ग्रीष्म कल्पवृक्ष (कल्पवृक्ष)। नया कन्नड, 9/ 23-34
105. कन्नड (कन्नड) 34 अंक, गुरु मिश्रा, 3/ 371
106. वापसीवर्षा 20.22-38 शीत
107. वापसीवर्षा (श्रीवर्ष) प्रदीप, 3/ 91
108. कन्नड (कन्नड) 34 अंक, गुरु मिश्रा, 3/ 371। वापसीवर्षा (कन्नड)।

### सहायक ग्रन्थ-सूची :

1. वापसीवर्षा (कन्नड)। गुरु मिश्रा, वापसीवर्षा (कन्नड)। 2006
2. वापसीवर्षा (कन्नड)। गुरु मिश्रा, वापसीवर्षा (कन्नड)। 2006
3. वापसीवर्षा (कन्नड)। गुरु मिश्रा, वापसीवर्षा (कन्नड)। 2006
4. वापसीवर्षा (कन्नड)। गुरु मिश्रा, वापसीवर्षा (कन्नड)। 2006
5. वापसीवर्षा (कन्नड)। गुरु मिश्रा, वापसीवर्षा (कन्नड)। 2006
6. वापसीवर्षा (कन्नड)। गुरु मिश्रा, वापसीवर्षा (कन्नड)। 2006
7. वापसीवर्षा (कन्नड)। गुरु मिश्रा, वापसीवर्षा (कन्नड)। 2006
8. वापसीवर्षा (कन्नड)। गुरु मिश्रा, वापसीवर्षा (कन्नड)। 2006
9. वापसीवर्षा (कन्नड)। गुरु मिश्रा, वापसीवर्षा (कन्नड)। 2006
10. वापसीवर्षा (कन्नड)। गुरु मिश्रा, वापसीवर्षा (कन्नड)। 2006
11. वापसीवर्षा (कन्नड)। गुरु मिश्रा, वापसीवर्षा (कन्नड)। 2006
12. वापसीवर्षा (कन्नड)। गुरु मिश्रा, वापसीवर्षा (कन्नड)। 2006
13. वापसीवर्षा (कन्नड)। गुरु मिश्रा, वापसीवर्षा (कन्नड)। 2006
14. वापसीवर्षा (कन्नड)। गुरु मिश्रा, वापसीवर्षा (कन्नड)। 2006
15. वापसीवर्षा (कन्नड)। गुरु मिश्रा, वापसीवर्षा (कन्नड)। 2006
16. वापसीवर्षा (कन्नड)। गुरु मिश्रा, वापसीवर्षा (कन्नड)। 2006
17. वापसीवर्षा (कन्नड)। गुरु मिश्रा, वापसीवर्षा (कन्नड)। 2006



## आधुनिक हिन्दी नाटक में प्रेम और यथार्थ का अन्तर्द्वन्द्व : "आषाढ़ का एक दिन"

\*प्रियंका कुमारी मिश्रा

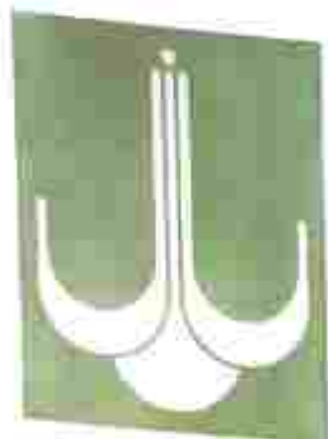
**'संवेदनशील' को अभिव्यक्त कर 'वेदों' से सब बोलकर बदलना व्यक्तिगत दिग्दर्शक बदलाने वाला साहित्य ही सादृश्यशास्त्र कहलाता है।'**

नाट्यशास्त्रीय भक्तानुति ने लीकृतता के अनुकरण को ही नाटक कहा है- 'लोककृतानुकरण नाट्यशास्त्रात्मा कृतम्।'। जैसा कि हिन्दी नाटक की परम्परा तो संस्कृत साहित्य की परम्परा से जुड़ी रही है, अभिव्यक्ति के माध्यम शब्द और दृश्य से सांस्कृतिकरण का मार्ग सरल, सुगम रहा है। इसी नाट्य परम्परा में प्रयोगशील नाटककार के रूप में मोहन राकेश का व्यक्तित्व अवलंबित हुआ। कहा जाता है -

'समकालीन रंगमंचना की पहचान का पहला प्रमाणित संकेत है मोहन राकेश।' अधिकांश नाटकों की रचना न करने पर भी ये नाटक क्षेत्र के मस्तीहा कहलाए, यह या केवल प्रयोगशील नाटककार थे बल्कि वैयक्तिक और सामाजिक समस्याओं पर भी उनकी दृष्टि बराबर केंद्रित रही है। उन्होंने कुल तीन नाटक लिखे - आषाढ़ का एक दिन, लहरी का राजपत्र, आगे-आगे, उनके संघर्षमय जीवन का प्रतिफलन उनकी रचनाओं में देखने को मिलता है। लेकिन उनकी जिन्दगी जितनी उत्कृष्ट हुई थी, उतनी रचनाएँ उनकी ही तुलनी हुई हैं। जिस तरह वह अपने जीवन में उन्मुख एवं स्वतंत्र रहे उसी प्रकार उनके पात्र भी सभी संघर्षों से मुक्त हैं।

'आषाढ़ का एक दिन' आधुनिक हिन्दी नाटक में ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य पर रचा गया ऐसा कथार्थ है, जो आज के जीवन को विभंगता,

\*गोप कपूर, हिन्दी विभाग, ऊर्जा विनू विद्याविद्यालय, बागलौर-221005



ISSN - 0974-651x

# JHARKHAND JOURNAL OF SOCIAL DEVELOPMENT

## ARTICLES

A Comparative Study of Empowerment Status of Working and Non-working Women: with Special Reference to Industrial Town of Jamshedpur

Smita Paul &  
Madhumita Das Gupta

An Evaluation of Performance of Prime Minister Employment Generation Programme in Simdega District of Jharkhand

Nilima Rose Kullu

Malnutrition in 0-6 Age Group in Urban Areas of Jharkhand:

Archana Kumari

A Case Study of Karamtali area of Ranchi Town

Causes Of Unemployment Among Female Graduates In Ranchi Town

Zaya Altamas

Women Empowerment Through MGNREGA: A Case Study of Ranchi District

Jhumur S Roy & Jyoti Prakash

A Comparative Study on Growth of Production and Productivity of Major Vegetables and Fruits in Jharkhand:

Birju Prasad Dangri

Changing Pattern of Crop Diversification of Indian Agriculture

A Study on Inter-District Analysis of Paddy Production in

South Chhotanagpur Division Across The State of Jharkhand

Marketing of Horticulture Crops in India : A Way to Diversification in Agriculture

India's Approaches to The South China Sea: Priorities and Balances

A Comparative Macro Economic Policies of Some Countries : An Evaluation

Role of Innovation and Planning in Achieving Sustainable development:

A Comprehensive Analysis

Ural Household Labour : Wage Structure and Income Consumption Pattern in India

Flood Hazard and Risk of Socio-Economic Vulnerability in North Bihar

Impact of MGNREGA on Rural Labour Migration in India : An Assessment

Impact of Essential Hypertension on Punctuality and General Well Being

Mahesh Prasad & Ratikanta Dash  
Dewashish Kumar

Ratanjit De

Neelu Kumari

Archana Kumari

Nitesh Raj

Sharda Kumari

Praveen Kumar Jha &

Ratikanta Dash

Mukesh Kumar

Binod Kumar Singh &

Satish Kumar Singh

# JOURNAL OF JHARKHAND SOCIAL DEVELOPMENT

ISSN - 0974-651X

## CONTENT

Volume - XIV

Number - 1 & 2

2022

A Bi-annual Peer Reviewed Refereed Journal of *Jharkhand Development Forum*, Ranchi

### ARTICLE

- A Comparative Study of Empowerment Status of Working and Non-working Women: with Special Reference to Industrial Town of Jamshedpur  
An Evaluation of Performance of Prime Minister Employment Generation Programme in Simdega District of Jharkhand  
Malnutrition in 0 – 6 Age Group in Urban Areas of Jharkhand: A Case Study of Karamtali area of Ranchi Town  
Causes of Unemployment Among Female Graduates in Ranchi Town  
Women Empowerment Through Mgnrega: A Case Study of Ranchi District
- A Comparative Study on Growth of Production and Productivity of Major Vegetables and Fruit in Jharkhand  
Changing Pattern of Crop Diversification of Indian Agriculture
- A Study on Inter-District Analysis of Paddy Production in South Chhottanagpur Division Across The State of Jharkhand  
Marketing of Horticulture Crops in India : A Way to Diversification in Agriculture  
India's Approaches to The South China Sea: Priorities and Balances  
A Comparative Macro Economic Policies of South Countries : An Evaluation  
Role of Innovation and Planning in Achieving Sustainable development: A Comprehensive Analysis  
Rural Household Labour : Wage Structure and Income Consumption Pattern in India  
Flood Hazard and Risk of Socio-Economic Vulnerability in North Bihar
- Impact of MGNREGA on Rural Labour Migration in India : An Assessment  
Impact of Essential Hypertension on Punctuality and General Well Being
- Smita Paul &  
Madhumita Das Gupta  
Nilima Rose Kullu  
Archana Kumari  
Zaya Altamas  
Jhumur S Roy &  
Jyoti Prakash  
Birju Prasad Dangri  
Mahesh Prasad  
& Ratikanta Dash  
Dewashish Kumar  
Ratanjit De  
Neelu Kumari  
Archana Kumari  
Nitesh Raj  
Sharda Kumari  
Praveen Kumar Jha &  
Ratikanta Dash  
Mukesh Kumar  
Binod Kumar Singh &  
Satish Kumar Singh

# JHARKHAND JOURNAL OF SOCIAL DEVELOPMENT

## Particular of the Journal

- |                                                                                                                                           |   |                                                                               |
|-------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|---|-------------------------------------------------------------------------------|
| 1. Place of Publication                                                                                                                   | : | Ranchi, Jharkhand                                                             |
| 2. Period of Publication                                                                                                                  | : | Half-Yearly                                                                   |
| 3. Printers Name                                                                                                                          | : | Shreejee Offset                                                               |
| Whether citizen of India                                                                                                                  | : | Yes                                                                           |
| Address                                                                                                                                   | : | Sardar Chowk, Hazaribog<br>Jharkhand                                          |
| 4. Publisher's Name                                                                                                                       | : | Prakash Chandra Deogharia                                                     |
| Whether citizen of India                                                                                                                  | : | Yes                                                                           |
| Address                                                                                                                                   | : | 63, New A.G. Colony,<br>Opp. DAV School,<br>Ranchi - 834 002,<br>Jharkhand    |
| 5. Name and address of individuals who own the newspaper and partners of shareholders, holding more than one percent of the total capital | : | 'Jharkhand Development Forum<br>63, New A.G. Colony Kadru<br>Ranchi - 834 002 |

I, Prakash Chandra Deogharia, hereby declare that the particular given above are true to the best of my knowledge and belief.

Sd/-  
Prakash Chandra Deogharia  
Publisher

ISSN - 0974-651X

*Jharkhand*

# SOCIAL JOURNAL OF DEVELOPMENT

A Bi-annual Journal of *Jharkhand Development Forum*, Ranchi

Editor  
Prakash Chandra Deogharia  
Dept. of Economics  
K.E.U., Hazaribag  
Jharkhand



Website : [www.jedindia.org](http://www.jedindia.org)



## CHANGING PATTERN OF CROP DIVERSIFICATION OF INDIAN AGRICULTURE

**Mahesh Prasad**

Associate Professor, Dept. of Economics  
V.P. College, Bhubna, Kaimur, V.K.S. University, Ara (Bihar)

**Ratikanta Dash**

Associate Professor, P.G. Dept. of Economics  
Magadh University, Bodh Gaya

*The agriculture sector at present employs 60 percent of the country's work force. With the development of alternative sources of employment in the rural areas, viz., agro industries, supportive infrastructure, etc., it is hoped that the share of population dependent on agriculture will come down, though not commensurately, by the year 2020. It is hoped that 45-50 per cent of the population will be dependent on agriculture by that time.*

*In spite of the impressive achievements, the Indian agricultural sector continues to face poor infrastructure conditions. Less than 36 per cent of the cultivated land is under any assured irrigation system.*

**Keywords:** Agriculture, Diversification and Crops.

### INTRODUCTION

India is a country of about one billion people. More than 70 percent of India's population lives in rural areas where the main occupation is agriculture. Indian agriculture is characterized by small farm holdings. The average farm size is only 1.57 hectares. Around 93 per cent of farmers have land holdings smaller than 4 ha and they cultivate nearly 55 percent of the arable land.

Crop diversification is intended to give a wider choice in the production of a variety of crops in a given area so as to expand production related activities on various crops and also to lessen risk. Crop diversification in India is generally viewed as a shift from traditionally grown less remunerative crops to more remunerative crops. The crop shift (diversification) also takes place due to governmental policies and thrust on some crops over a given time, for example creation of the Technology Mission on Oilseeds (TMO) to give thrust on oilseeds production as a national need for the country's requirement for less dependency on imports. Market infrastructure development and certain other price related supports also induce crop shift. Often low volume high-value crops like spices also aid in crop diversification.

Crop diversification and also the growing of large number of crops are practiced in rain fed lands to reduce the risk factor of crop failures due to drought or less rains. Crop substitution and shift are also taking place in the areas with distinct soil problems.



### **Crop Production and Economics Scenario**

The agriculture sector at present employs 60 percent of the country's work force. With the development of alternative sources of employment in the rural areas, viz., agro industries, supportive infrastructure, etc., it is hoped that the share of population dependent on agriculture will come down, though not commensurately, by the year 2020. It is hoped that 45-50 per cent of the population will be dependent on agriculture by that time.

India has made tremendous progress in the agricultural sector over the last 50 years. From hand to mouth conditions in the early sixties, we have not only become self reliant in food grains but have acquired sufficient resilience to tide over the adverse conditions.

In spite of the impressive achievements, the Indian agricultural sector continues to face poor infrastructure conditions. Less than 36 per cent of the cultivated land is under any assured irrigation system.

As a result, the productivity levels of many major crops in India do not compare very favorably with the yield obtained in agriculturally advanced countries. Further, these factor coupled with high illiteracy constrain the farmer's ability to shift to more remunerative cropping patterns in response to market signals. Therefore, their capacity to take advantage of the opportunities presented by liberalization of trade is limited. The country's agriculture has gained in strength and resilience since independence, although growth in agriculture is highly skewed over regions and crops.

However, the agriculture sector in India is now faced with intense and external pressures arising from the impact of policies of economic liberalization. Efficient and effective management of agriculture will be crucial in the years to come for acquiring enduring self-reliance and ensuring sustainable growth with an emphasis on consideration of equity.

### **Crop Diversification in the Indian Perspective**

With the advent of modern agricultural technology, especially during the period of the Green Revolution in the late sixties and early seventies, there is a continuous surge for diversified agricultural in terms of crops, primarily on economic considerations.

- Resource related factors covering irrigation, rainfall and soil fertility.
- Technology related factors covering not only seed, fertilizer, and water technologies but also those related to marketing, storage and processing.
- Household related factors covering food and fodder self-sufficiency requirement as well as investment capacity.
- Price related factors covering output and input prices as well as trade policies and other economic policies that affect these prices either directly or indirectly.
- Institutional and infrastructure related factor covering farm size and other economic

policies that affect these prices either directly or indirectly.

- Institutional and infrastructure related factors covering farm size and tenancy arrangements, research, extension and marketing systems and government regulatory policies.

Obviously, these factors are not watertight but inter-related. For instance, the adoption of crop technologies is influenced not only by resource related factors but also by institutional and infrastructure factors. Similarly, government policies- both supportive and regulatory in nature-affect both the input and output prices. Likewise, special government programmes also affect area allocation and crop composition. More importantly, both the economic liberalization policies as well as the globalization process are also exerting strong pressures on the area allocation decision of farmers, essentially through their impact on the relative prices of inputs and output.

Similarly, economic factors play a relatively stronger role in influencing the crop pattern in areas with a better irrigation and infrastructure potential. In such areas, commercialization and market networks co-evolve to make the farmers more dynamic and highly responsive to economic impulses.

### **Consequences of Crop Pattern Changes**

Turning now to the Socio-economic and environmental consequences of crops pattern changes the Green Revolution technologies have fomented, among other things, an increasing tendency towards crop specialization and commercialization of agriculture. While these developments have positive effects on land/labor productivity and net farm income, they have also endangered a number of undesirable side effects like reduced farm employment and crop imbalances. Besides, crop pattern changes also lead to serious environmental consequences that take such forms as groundwater depletion, soil fertility loss and water logging and salinity- all of which can reduce the productive capacity and growth potential of agriculture over the long-term.

Agricultural policies in the past have witnessed a series of iterative changes following the economic reforms during the 1990s that marked a significant departure from the past. Though many of the reform processes were not initiated to directly affect the agriculture sector, it was affected indirectly (Chand, 2004). The mounting stock of food grains has partly been due to the weak purchasing power of the poor in the country. Nevertheless, the problem associated with buffer stock management and degradation of natural resources in some regions has triggered a debate to redefine the agricultural policies. As a remedial measure, it has been suggested that India should diversify its agriculture and get a foothold in the world market (Radhakrishna and Reddy, 2004). The diversified and accelerated agricultural growth would enhance the food security by improving the purchasing power of the poor in the perplexing situation of shrinkage in agricultural holdings, declining new investments in agriculture and increasing degradation of natural resources (Joshi et al., 2004).

Diversification is an integral part of the process of structural transformation of an economy. As in other developing countries, Indian economy is also diversifying at the macro level with the secondary and tertiary sectors becoming progressively more important in terms of their contributions to national income as well as disposition of the workforce.

Within the agriculture, some of the sub-sectors are progressively occupying a more significant place than the crop production, and within the crop-mix, the so-called superior cereals are progressing faster than the inferior cereals.

However, the factors promoting diversification and the speed with which the changes occur vary under different situations (Vyas, 1996). Moreover, before a sincere attempt is made to suggest policies with regard to diversification, a thorough probe into the pattern and mode of diversification needs to be attempted. The present study was planned to schematize the pattern and ways of diversification across various states/crops in India.

Further, it was also intended to decipher various determinants of diversification in India and their implications on agricultural economy and trade.

### **Diversification and Its Components**

Diversification is basically understood as signifying the shift from the agricultural to the industrial domain. But, the intricacies underlying the diversification are many and need threadbare understanding. Though the former type of diversification indicates shift from one crop to another crop or from one enterprise/sub-sector to another enterprise/sub-sector, the other type of diversification may involve income-enhancing enterprises in addition to the existing ones. In essence, the diversification to commercial crops/commodities becomes an essential strategy that can increase incomes in agriculture, minimize risks due to crop failures and above all, earn foreign exchange. Planned diversification increases both individual and social gains (Haque, 1996). This diversification strategy can be designed to help alleviate poverty, generate employment and conserve environment (Hayami and Otsuka, 1995).

In India, diversification has occurred both across and within the crop, livestock, forestry and fishery sectors. Within the agriculture, the share of output and employment in the non-crop sectors, i.e. animal husbandry, forestry and fisheries, has been gradually increasing. Thus, diversification is taking place in terms of moving away from crop production to other agricultural activities. More significant changes are taking place within the crop sector, as is evident from the changes in cropping pattern, shown later.

### **Determinants of Diversification**

Diversification offers a wider choice in the production of crops in the given area. The shift in cultivation from traditional, less-remunerative crops to higher-value crops leads to higher incomes for the producer. At the same time, cultivation of a variety of crops reduces risk. Several factors can induce a shift in the crops grown. These include government policies that promote specific crops, development of infrastructure like roads and markets, and relative profitability of crops.

The horizontal diversification is the increase in the number of crops grown given the economical rationality of this expansion. The extent of horizontal diversification can be gauged empirically through Simpson's index of diversification (SID). The Simpson index for major states was computed to evaluate the extent of diversification at two-points of time.

India is a country of about one billion people. More than 70 percent of India's population lives in rural areas where the main occupation is agriculture. Indian agriculture is characterized by small farm holdings. The average farm size is only 1.57 hectares. Around 93 percent of farmers have land holdings smaller than 4 ha and they cultivate nearly 55 percent of the arable land. On the other hand, only 1.6 of the farmers have operational land holdings above 10 ha and they utilize 17.4 percent of the total cultivated land. Due to diverse agro-climatic conditions in the country, a large number of agricultural items are produced. Broadly, these can be classified into two groups - foodgrains crops and commercial crops. Due to the challenge of feeding our vast population and the experience of food shortages in the pre-independence era, 'self reliance' in foodgrains has been the cornerstone of our policies in the last 50 years. Around 66 percent of the total cultivated area is under foodgrain crops (cereals and pulses). Concurrently, commercial agriculture developed for whatever reasons in the pre-independent phase also kept flourishing during the post independent period. Commercial agriculture not only catered to the domestic market but has also been one of the major earners of foreign exchange for the country.

Crop diversification is intended to give a wider choice in the production of a variety of crops in a given area so as to expand production related activities on various crops and also to lessen risk. Crop diversification in India is generally viewed as a shift from traditionally grown less remunerative crops to more remunerative crops. The crop shift (diversification) also takes place due to governmental policies and thrust on some crops over a given time, for example creation of the Technology Mission on Oilseeds (TMO) to give thrust on oilseeds production as a national need for the country's requirement for less dependency on imports. Market infrastructure development and certain other price related supports also induce crop shift. Often low volume high-value crops like spices also aid in crop diversification. Higher profitability and also the resilience/stability in production also induce crop diversification, for example sugar cane replacing rice and wheat. Crop diversification and also the growing of large number of crops are practiced in rainfed lands to reduce the risk factor of crop failures due to drought or less rains. Crop substitution and shift are also taking place in the areas with distinct soil problems. For example, the growing of rice in high water table areas replacing oilseeds, pulses and cotton; promotion of soybean in place of sorghum in vertisols (medium and deep black soils) etc.

### **CROP PRODUCTION AND ECONOMIC SCENARIO**

The share of the agriculture sector in the total GDP has declined rapidly and this trend will continue. By 2020, the share of agriculture in the total GDP of the country is likely to be reduced to 15 percent due to faster development of non-agriculture sectors. The agriculture sector at present employs 60 percent of the country's work force. With the development of

---

alternative sources of employment in the rural areas, viz., agro industries, supportive infrastructure, etc., the share of population dependent on agriculture will come down, though not commensurately, by the year 2020. It is 45-50 percent of the population is dependent on agriculture by that time.

India's performance during the post-independence period has been a matter of pride and satisfaction. The agricultural sector has left behind the era of shortages and dependence on imports and arrived at a stage of self-sufficiency and occasional surpluses. The Green, White, Yellow and Blue revolutions have been landmarks that have been claimed and recognized the world over. India is now the largest producer of wheat, fruits, cashew nut, milk and tea in the world and second largest producer of vegetables and fruits. India is the largest producer, consumer and exporter of spices in the world and the largest exporter of cashew. Foodgrains production has increased four-fold since independence, from 51 million tonnes (Mt) during 1950/51 to 203 Mt during 1998/99. The scourge of severe food shortages is now a thing of the past as is the dependence on imports. India's agriculture has passed through four distinct phases of strategy: a) starting with the intensification of efforts in identified areas, using traditional technology and expansion of area during the pre-Green Revolution period; b) through a new strategy of use of modern inputs and high yielding varieties in irrigated areas during the late sixties and the seventies, (Green Revolution); c) further through a period of greater focus on management of linkages and infrastructure, such as, marketing, trade and institution building; and, d) to an era of liberalization and relaxation of controls during the nineties. The journey has been arduous but rewarding. The agriculture sector has been successful over the past five decades in keeping pace with the rising food demand of a growing population (already crossed one billion in May, 2000). This sector provides raw materials to the major industries of the country which are largely agro-based like cotton, sugar, etc. It contributes nearly 16 percent of the country's total export.

In spite of the impressive achievements, the Indian agricultural sector continues to face poor infrastructure conditions. Less than 36 percent of the cultivated land is under any assured irrigation system. Farmers on the remaining two thirds of the land are completely dependent on rainfall, which is also greatly characterized by large variations in terms of precipitation both spatially and in time. For a large majority of farmers in different parts of the country gains from application of science and technology in agriculture have yet to be realized. As a result, the productivity levels of many major crops in India do not compare very favourably with the yields obtained in agriculturally advanced countries. Further, these factors coupled with high illiteracy constrain the farmer's ability to shift to more remunerative cropping patterns in response to market signals. Therefore, their capacity to take advantage of the opportunities presented by liberalization of trade is limited. The country's agriculture has gained in strength and resilience since independence, although growth in agriculture is highly skewed over regions and crops. However, the agriculture sector in India is now faced with intense internal and external pressures arising from the impact of policies of economic liberalization. Efficient and effective management of agriculture will be crucial in the years

to come for acquiring enduring self-reliance and ensuring sustainable growth with an emphasis on consideration of equity.

## **PATTERNS OF CROP DIVERSIFICATION**

### **Crop Diversification in the Indian Perspective**

With the advent of modern agricultural technology, especially during the period of the Green Revolution in the late sixties and early seventies, there is a continuous surge for diversified agriculture in terms of crops, primarily on economic considerations. The crop pattern changes, however, are the outcome of the interactive effect of many factors which can be broadly categorized into the following five groups:

- a) Resource related factors covering irrigation, rainfall and soil fertility.
- b) Technology related factors covering not only seed, fertilizer, and water technologies but also those related to marketing, storage and processing.
- c) Household related factors covering food and fodder self-sufficiency requirement as well as investment capacity.
- d) Price related factors covering output and input prices as well as trade policies and other economic policies that affect these prices either directly or indirectly.
- e) Institutional and infrastructure related factors covering farm size and tenancy arrangements, research, extension and marketing systems and government regulatory policies.

Obviously, these factors are not watertight but inter-related. For instance, the adoption of crop technologies is influenced not only by resource related factors but also by institutional and infrastructure factors. Similarly, government policies - both supportive and regulatory in nature - affect both the input and output prices. Likewise, special government programmes also affect area allocation and crop composition. More importantly, both the economic liberalization policies as well as the globalization process are also exerting strong pressures on the area allocation decision of farmers, essentially through their impact on the relative prices of inputs and outputs. Although the factors that influence the area allocation decision of farmers are all important, they obviously differ in terms of the relative importance both across farm groups and resource regions. While factors such as food and fodder self-sufficiency, farm size, and investment constraints are important in influencing the area allocation pattern among smaller farms, larger farmers with an ability to circumvent resources constraints usually go more by economic considerations based on relative crop prices than by other non-economic considerations. Similarly, economic factors play a relatively stronger role in influencing the crop pattern in areas with a better irrigation and infrastructure potential. In such areas, commercialization and market networks co-evolve to make the farmers more dynamic and highly responsive to economic impulses.

What is most notable is the change in the relative importance of these factors over time. From a very generalized perspective, Indian agriculture is increasingly getting influenced more and more by economic factors. This need not be surprising because irrigation expansion,

infrastructure development, penetration of rural markets, development and spread of short duration and drought resistant crop technologies have all contributed to minimizing the role of non-economic factors in crop choice of even small farmers. What is more, the reforms and initiatives undertaken in the context of the ongoing agricultural liberalization and globalization policies are also going to further strengthen the role of price related economic incentives in determining crop composition both at the micro and macro levels. Obviously, such a changing economic environment will also ensure that government price and trade policies will become still more powerful instruments for directing area allocation decisions of farmers, aligning thereby the crop pattern changes in line with the changing demand-supply conditions. In a condition where agricultural growth results more from productivity improvement than from area expansion, the increasing role that price related economic incentives play in crop choice can also pave the way for the next stage of agricultural evolution where growth originates more and more from value-added production.

### **Consequences of Crop Pattern Changes**

Turning now to the socio-economic and environmental consequences of crop pattern changes, the Green Revolution technologies have fomented, among other things, an increasing tendency towards crop specialization and commercialization of agriculture. While these developments have positive effects on land/labour productivity and the farm income, they have also endangered a number of undesirable side effects like reduced farm employment and crop imbalances. Although the expansion of commercialized agriculture has fomented new sets of rural non-farm activities and strengthened the rural-urban growth linkages, it has also weakened the traditional inter-sectoral linkages between the crop and livestock sectors. Besides, crop pattern changes also lead to serious environmental consequences that take such forms as groundwater depletion, soil fertility loss and waterlogging and salinity - all of which can reduce the productive capacity and growth potential of agriculture over the long-term. A classical example is the rice-wheat system in Northwestern India replacing traditional crops like pulses, oilseeds and cotton.

### **CONCLUSION**

India, being a vast country of continental dimensions, presents wide variations in agroclimatic conditions. Such variations have led to the evolution of regional niches for various crops. Historically, regions were often associated with the crops in which they specialize for various agronomic, climatic, hydro-geological, and even, historical reasons. But, in the aftermath of technological changes encompassing bio-chemical and irrigation technologies, the agronomic niches are undergoing significant changes. With the advent of irrigation and new farm technologies, the yield level of most crops-especially that of cereals-has witnessed an upward shift making it possible to obtain a given level of output with reduced area or more output with a given level of area and creating thereby the condition for inter-crop area shift (diversification) without much disturbance in output level. Besides, agriculture become drought proof and growth become more regionally balanced, there has been a reduction in the instability of agricultural output.

Although these reverse area shifts actually took place in the mid-1970's as a part of the process of commercialization, they became more pronounced since the mid 1980's as a response partly to emerging supply deficit in edible oils and partly to the changing comparative advantage of crops. Since the recent trend in inter-crop area shifts has its origin in the price and trade policy changes of the 1980's, they indicate the increasing market influence on area allocation. The area under commercial crops has almost doubled in the last three decades. Among the foodgrain crops, the area under superior cereals, i.e., rice and wheat, is increasing; while that of coarse cereals (millets) is on decline. The area share of jute and allied fibres has also gone down substantially. Like any other economy, the share of agriculture in the GDP is also declining in India. Increase in income from the agriculture sector, further growth of non-crop sub-sectors within agriculture; faster growth of non-food grain crops; and faster growth of superior cereals among the food grains are all happening, but the pace of such change is far too slow. An accelerated pace of diversification to create positive impact of higher income, higher employment and conservation and efficient use of natural resources emphasizes the need for efficient policies, especially in technological development, selective economic reforms and institutional change. A strategy of crucial importance is growth enhancing non-farm activities. This calls for investment in rural infrastructure and skill upgradation and it also implies a careful examination and adjustment of macro-policies, which influence the relative profitability of different activities and in turn determine the nature and pace of diversification. In order to ensure social equity, policies on structural adjustment and reforms must pay special attention to the band of marginal and small farmers and agricultural labourers. The direct benefits from diversification should reach these sections of the farmers.

## REFERENCES

- Centre for Monitoring Indian Economy (CMIE), Economic Intelligence Service, Available at <http://www.cmie.com>
- Deogharia P.C. (2020) Diversification of Agriculture and Growth Performance of Major Crops in India, *Jharkhand Journal of Development and Management Studies*, Vol. 18, No.1 & 2, Jan.-June, Ranchi, (ISSN-0973-8444)
- Deogharia P.C. (2019) Diversification of Agriculture: A Review', *Journal of Economic & Social Development*, Vol XIV (1), Ranchi. (ISSN-0973-886X)
- L. Eriado (2003), FCND Discussion Paper No. 152, IFPRI, 2003, Washington DC.
- Government of India (2005), Central Statistical Organization (CSO), National Accounts Statistics, 2005, New Delhi, India.
- Government of India (2006), Indian Labor Statistics (Various Issues), Ministry of Labor, 2006, New Delhi, India.
- P.K. Joshi, A. Gulati P.S, Birlhal and L. Tewari (2003), MSSD Discussion paper No. 57, IFPRI, 2003, Washington DC.



प्रियंका कुमारी मिश्रा

शोध कला  
हिन्दी विभाग  
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय  
वाराणसी

शिवमूर्ति आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य में एक ऐसे उभरते पुरुष के सम्मान हैं। जिन्होंने अपनी रचना संसार की रोजनी से सनसनाती हिन्दी कथा साहित्य को दीर्घायुमान कर दिया। इनकी रचना कौशल की पृष्ठभूमि ग्रामीण जीवन रही है। हिन्दी कथा साहित्य में सः कहानियों और तीन उपन्यासों से उन्होंने रेगिस्तान में लम्बाना उठने जैसे कथन को स्थापित कर दिया है। उनकी रचनाओं की सीमाएँ चले ही सीमित हो परन्तु प्रतिभा कौशल के क्षेत्र में कहीं भी कमी नहीं आई है।

शिवमूर्ति के कथा साहित्य में स्त्री केन्द्रित समस्याओं को एक नयी दृष्टि से रखा गया है। दलित-वेतना और स्त्री प्रबल वेतना का प्रवाह इनकी रचनाओं में प्रवाहमान है। इनकी कहानियों में जैसे- 'कसाईबाड़ा', 'तिरी उपमा जोग', 'तिरिया-खरितर', 'अकालदंड' आदि में स्त्री जीवन का आत्मसंघर्ष, उत्पीड़न, समर्पण आदि भावनाओं का उद्देश्य बहाव है, रचनाएँ इतनी संवेदनशील हैं कि कल्पना और पद्यार्थ के बीच की सीमा समाप्त होती नजर आता है।

आजारी के दौर में शहरी और ग्रामीण जीवन के मध्यम को मिलाने वाले समय में एक बहुत बड़ी पीढ़ी आज भी मौजूद है, आज भी गाँवों में बहुत कुछ नहीं बदला है, वो है नारी दिशा उसकी त्याग की भावना, समर्पण, कसना, ममता, उसका विकास आदि, 21वीं सदी में समानाधिकार वाले न्याय प्रधान कृषि केन्द्रित देश में जहाँ आधी आबादी की बात कही जाती है, वहीं उनकी स्थिति दयनीय सोचनीय बनी है, क्यों? खाते वह 'कसाईबाड़ा' की अनिधारी, लीडरइन या परधानिन हो, तिरिया खरितर की विमली हो, 'अकालदंड' की 'सुरजी' ही या 'तिरी उपमा जोग' की ममता हो, सभी की सभी समाज के उर हिस्से का हिस्सा है जहाँ शोषण, घमना से घेरित छल-कपट, रिश्तो की कड़वाहट, आत्मसम्मान का छीनना, अभावपूर्ण जीवन को साध त्याग की मूर्ति, समर्पण की प्रतिभा बनी हुई है।

अपने प्राणों का समर्पण उसको उस व्यक्तिगत का प्रभाव है जो स्त्री, समाज को टोकाएँ जैसे शोषण का प्रभाव है। प्राण नहीं और अस्मिता कि जाती है। समाज का व्यक्तिगत श्रुत्या जनता है। परमान-जय-बाँधने के रूप में समाज को सोचना है- 'मैंक में इतनी विचार नहीं हो पाये हैं कि समाज से लड़ नहीं हो सकती। बरोपाइन अभी एक लड़की है, समाज की विचार नहीं लगती। वह अंतर गूनाय की तरह बचने को है। समाज का सामाजिक जीवन को पूरक करने वाले व्यक्ति समाज को समर्थित दृष्टि से देखते हैं। 'तिरी उपमा जोग' कहानी में स्त्री की बात-व्यक्तिता अपनी ममता का जयने को है जो समाज का समर्पण का फल है, जिसके कारण समाज की कठिनाई परीक्षा से सफल होकर, सड़ा अकाल बनकर उभर पाता है। और स्त्री जाकर दूसरी भाषी कर लेता है तथा अपने जीवन में एक नया है। कई वर्षों बाद उसका लड़का गाँव में जाकर स्त्री का जीवन है तो उसी उसकी पत्नी के दूरे दूर बसा वैतरा पुनः है। जो व्यक्ति और पति की निधुरता से कुछ, के कारण होते हैं। समाज का स्त्री समाज है कि विद्वती में भी पति को सम्मानीय रूप में ही सम्मानीय कराता है। वह लिखती है- 'कसला नई जन्म के जाने में पुनर्जी है, बच्चे से आइए उनको गाँव, रिश्ता-कटा काष्ठ कि गाँव में ही उनकी खोली-वारी, घर दुका है।' इस प्रकार 'ममता' के समर्पण से भारतीय नारी की अपार अस्मिता का परिचय दे दिया है।

ग्रामीण पृष्ठभूमि में रहित इन कहानियों में नारी जीवन का त्याग, समर्पण है, वहीं जीवन की कठिनाई का काल भी साथ हुआ है, जीवन की इसी कठिनाई के मध्य में 'तिरिया-खरितर' कहानी में प्रस्तुत किया गया है, तिरिया-खरितर की स्थिति अभावमान, अमानवीय स्थिति, और परपीड़न में जानने के ही श्रुति के बीच एक औरता के असाहय हो जाने की कहानी है। कहानी में 'विमली' एक ऐसी लड़की है जो अपने परिवार के अभावमान के लिए लौट ले ईंट बट्टे में काम करती है, उसकी नारी काल में ही ईंट में लिंग पति कमाने कलकला चला गया है। और जो बच्चे लौटता नहीं है। बट्टे में खेपला लाने वाले एक इन्ड्रर में निवास, लस-काल लेती है, लेकिन इन्ड्रर जैसे बहाव रहने की दुःख रहता है। बट्टे के मिस्त्री और दूसरे ट्रेक्टर इन्ड्रर दिलाए की वो उस पर नजर होता है। परन्तु विमली अपने घर में ही खुली जन्म है। उस काल में अपने

## “हिन्दी निबंध और आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का योगदान”

\*प्रियंका कुमारी मिश्रा

हिन्दी साहित्य का इतिहास गद्य-पद्य समय विधाओं से अलग-अलग है। साहित्य की दृष्टिकोण से आधुनिक काल सबसे महत्वपूर्ण है, इस कालक्रम में गद्य और पद्य दोनों विधाओं की प्रतिष्ठा हुई। प्राचीन साहित्य की जड़े पर्याप्तक रचना बल्लरिपों तक ही सम्भवात सीमित थी, परन्तु आधुनिक साहित्य का अधिकतर दृष्टिपटल सम्पूर्ण साहित्य पर लब्ध अभिहित हुई। आधुनिक साहित्य में गद्य की विभिन्न विधाओं— नाटक, उपन्यास, कहानी, निबंध, आलोचना, जीवनी, संस्मरण इत्यादि विधाओं का सर्जन हुआ।

गद्य की विनयन धारा निबंध है। प्राचीन युग में निबंध का संस्कृत साहित्य में विद्यमान था। अतः संस्कृत आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की कृति— “गद्य कवियों निबंध वर्द्धति।” निबंध का शाब्दिक अर्थ है— “कस हुआ, कसना मुक्त, कल्याण के अनुसार— निबन्धनीति निबंध अर्थात् जो चीज है वही निबंध।” एक अन्य व्याख्या के अनुसार किसी विषय पर लिखित रूप से विचारों की भुंजता बंधने या संग्रह करने को निबंध कहते हैं।

हिन्दी में निबंध एक सहायक एवं स्वतंत्र विधा के रूप में विकसित हुआ है, जिस पर पश्चात्कालीन साहित्य का प्रभाव प्रभूत मात्रा में पड़ा है— निबंध के अन्तर्गत भारत में इसे प्रयास कहा है। उनके अनुसार निबंध विधा, उदाहरणों और आख्यात्मक वृत्तों का सम्मिश्रण होता है। अन्य पश्चात्कालीन निबंधकारों में अंबल, जानसन्, एडिसन्, गाल्वास्कि, मार्तिनर, कार्लोसबर्ग आदि में निबंध विधा को अपने कोशल रचना शैली में और अधिक विकसित बनाया, इनके अनुसार निबंध ने विशालनीय

वैयक्तिक स्वयं, विचार गंभीर, समीचीनता, परम्परा और संस्कृति को प्रज्वलित आदि गुणों की प्रतिष्ठापना की।

हिन्दी गद्य साहित्य की विधाओं में निबंध एक महत्वपूर्ण गौरवपूर्ण एवं सहायक विधा है— “निबंध में बुद्धि तत्व, शैली तत्व और राग तत्व एवं कल्पना तत्व का समावेश अनिवार्य है।” इस विधा के माध्यम से लेखक के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति सर्वाधिक मुखरित होती है।

इसी संदर्भ में हिन्दी निबंधकार श्री जयन्धर नलिन के शब्दों में—

“निबंध स्वाधीन चिंतन और निश्चल अनुभूतियों का सरल, सजीव और मधुरित गद्यात्मक प्रकाशन है।” समीक्षकों और आलोचकों की दृष्टि से यह विधा जैसे आपूता पह सकता है, अतः हिन्दी के आलोचक आचार्य बटुलारो राजपेयी के शब्दों में— “रचानुभूति से सम्पन्न एवं व्यक्तित्व से पूर्ण प्रतिबिम्बित निबंधों को पूर्ण मानते हैं। इससे भी व्यक्तिवादी निबंधों को पूर्ण मान्यता मिल जाती है।” इन्हीं श्रेणी में आचार्य गुलाबराय की परिभाषा में— निबंध के सभी लक्षणों के दर्शन होते हैं। उनके शब्दों में— “निबंध उस गद्य रचना को कहते हैं, जिसमें एक सीमित आकार के भीतर ही ऐसे विषय का वर्णन या प्रतिपादन एक विशेष निजीपन, स्वच्छन्दता, सौष्ठव और सजीवता तथा आवश्यक संगीत और सम्बद्धता के साथ दिया गया हो।”

हिन्दी साहित्य के इतिहास में प्रख्यात श्री रामचन्द्र शुक्ल एक ऐसे निबंधकार थे, जिन्होंने निबंध को गद्य की समस्त विधाओं में श्रेष्ठ माना। उनके अनुसार— “गद्य कवियों की कसीटी है, तो गद्य की कसीटी निबंध है।” शुक्ल जी ने वास्तविक निबंध उसे ही माना है, जिसमें विचार कस-कस कर भर हुए हो।

वस्तुतः निबंध व्यक्ति की मानसिक घटना, महन और भाषात्मक अनुभूति का गद्यात्मक रूप है। इसमें बुद्धि और हृदय दोनों का सामंजस्य अनिवार्य है। जिसमें निबंधकार का व्यक्तित्व प्रमुख होता है। निबंध गद्य रचना का एक प्रमुख अंग है। जिसके अनन्तगत विचारों की स्वतंत्रता, भावों की प्रखण्डता, परिमार्जित भाषा की अधिकता ही वही गद्य निबंध की

# शोध कल्पतरु

An International Multidisciplinary Research Journal

अंक 9

अप्रैल 2013 - जून 2013

*A Referenced Journal, Published Tri-monthly*



संयोजक समिति

डॉ० मनोज कुमार सिंह

निदेशक समिति,

संयोजक समिति, विज्ञान-विभाग,

अमिताभ

संयोजक समिति

अमिताभ तेलंग

संयोजक समिति

डॉ० विद्या सिंह

डॉ० बाबू किरणो पण्डेय

संयोजक समिति

गणिका सिंह

JOURNAL OF THE AKHIL BHARATIYA BHASHA EVAM

SAHITYA ANUSHILAN SAMITI

10. मीरा : स्त्री अस्मिता की ध्वजवाहिका  
-हनी दर्शन 88-88
11. पार्वतलक्ष्मण तथा श्रीदशरथ में सम्य  
-उमा आर्या 88-108
12. आधुनिक हिन्दी नाटक में प्रेम और यथार्थ का  
अन्तर्क्रन्द : 'अपराध का एक दिन'  
-प्रियंका कुमारी मिश्रा 108-114
13. रेणु में उपन्यासी में नारी का संघ  
-प्रदीप कुमार शीर्ष 115-121
14. समसामयिक सामाजिक विवृतियों का  
समाधान: स्मृति व वेदों अनुसार  
-डॉ. पृथ्वि शर्मा 122-127
15. दर्शन की व्यावहारिक उपयोगिता : पर्यावरण-  
प्रदूषण के विशेष संदर्भ में  
-डॉ. शब्दा राय 128-132
16. रेणु की राजनीतिक दृष्टि और मूल अवधारणा  
-प्रियंका 133-137
17. व्याकरणदर्शन में जाति की अवधारणा  
-डॉ. सोमवीर 138-153
18. मैथिली युष्म अं: अभा साहित्य में ग्रामीण जीवन  
-कवयत्रीस और 154-159
19. आधुनिक भारत में महिला श्रमजीवन  
-विवेकानंद शिवारी 160-167
20. स्त्री अस्मिता और कृष्णा सोबती का  
सम्बन्ध-साहित्य  
-विजयलक्ष्मी 168-177
21. स्वामी विवेकानन्द की दृष्टि में कर्म एवं कर्तव्य  
-डॉ0 उपेन्द्र कुमार त्रिपाठी 178-185
22. साहित्य और युगबंध  
-डॉ0 संतोष कुमार 186-191
23. दृष्टि, स्थिति एवं प्रलय विषयक चिन्तन : स्वामी  
प्रधान्य जारवती के परिपेक्ष्य में  
-हरेली शाल शीमा 192-202
24. जन जेतन का कवि चिन्तन  
-नीलम देवी 203-207
25. 1930-40 के दशक में प्रमुख चिन्तन आन्दोलन  
-सुरील कुमार सिंघ 208-213
26. योगदर्शन की समीक्षा  
-डॉ0 मनुदेव 214-223

- 99 साप्ताहिकपत्राणि-सिंहप्रदासरावभास्कर, अंक-२, पृ. 2/30  
 100 दीर्घनिबन्धसङ्ग्रह, चम्पारणी पत्रकारमण्डल पृ. 141  
 101 रत्नाय गिरिजा की (विन्ध्य) सम्पादनित आलोचना, आर्यो अंक 2, भाग-1-विन्ध्य, अंक  
 102 रत्निपत्र, अंक 2, विन्ध्य, सप्तमीविष्णु, शिवजीप्रियदर्शि, भाग-9 अंक, पृ. 8  
 103 प्राचिन चाराचरणसंस्कृत, शारदाक्षेत्र, पृ. 143  
 104 कालीशक्ति विष्णोयः संभारानन्द, शिवजीप्रियदर्शि, भाग-9 अंक, पृ. 22-24

105 अर्थ, अंक 9, पृ. 2/2

106 शिवराज (संस्कृत) अंक 3, अंक 1, भाग-1 विन्ध्य, पृ. 321

107 साप्ताहिकपत्राणि, 20-22-24 शशी

108 साठस अंक, शिवजीप्रियदर्शि (शिवराज) भाग-9 अंक, पृ. 91

- 109 अन्धकाराने अन्धकारोंपर सर्बेस शिवराजसंस्कृत : काली, भाग-9 अंक-2-विन्ध्य ।  
 110 अन्ध-अन्धकारसंग्रहालय आभारदास-संस्कृत, अर्थ पृ. 20-31

### सहायक ग्रन्थ-सूची :

1. साठस अंतर्देश, ग्रौध शीघ्रराज, शिवराज सुभाषी इकाय, भाग-9 अंक, 2008
2. शिवराज (संस्कृत) चम्पारणी चम्पारणी, आर्यो अंक 2, भाग-1-विन्ध्य, अंक 2
3. प्राचिन चाराचरणसंस्कृत, शारदाक्षेत्र, अर्थ पृ. 143, अर्थ पृ. 143
4. शिवराज (संस्कृत) अंक 3, अंक 1, भाग-1-विन्ध्य, अंक 321
5. अन्धकाराने अन्धकारोंपर सर्बेस शिवराजसंस्कृत : काली, भाग-9 अंक-2-विन्ध्य ।
6. अन्ध-अन्धकारसंग्रहालय आभारदास-संस्कृत, अर्थ पृ. 20-31
7. अन्धकाराने अन्धकारोंपर सर्बेस शिवराजसंस्कृत : काली, भाग-9 अंक-2-विन्ध्य ।
8. शिवराज (संस्कृत) अंक 3, अंक 1, भाग-1-विन्ध्य, अंक 321
9. अन्धकाराने अन्धकारोंपर सर्बेस शिवराजसंस्कृत : काली, भाग-9 अंक-2-विन्ध्य ।
10. अन्धकाराने अन्धकारोंपर सर्बेस शिवराजसंस्कृत : काली, भाग-9 अंक-2-विन्ध्य ।
11. अन्धकाराने अन्धकारोंपर सर्बेस शिवराजसंस्कृत : काली, भाग-9 अंक-2-विन्ध्य ।
12. अन्धकाराने अन्धकारोंपर सर्बेस शिवराजसंस्कृत : काली, भाग-9 अंक-2-विन्ध्य ।
13. अन्धकाराने अन्धकारोंपर सर्बेस शिवराजसंस्कृत : काली, भाग-9 अंक-2-विन्ध्य ।
14. अन्धकाराने अन्धकारोंपर सर्बेस शिवराजसंस्कृत : काली, भाग-9 अंक-2-विन्ध्य ।
15. अन्धकाराने अन्धकारोंपर सर्बेस शिवराजसंस्कृत : काली, भाग-9 अंक-2-विन्ध्य ।
16. अन्धकाराने अन्धकारोंपर सर्बेस शिवराजसंस्कृत : काली, भाग-9 अंक-2-विन्ध्य ।
17. अन्धकाराने अन्धकारोंपर सर्बेस शिवराजसंस्कृत : काली, भाग-9 अंक-2-विन्ध्य ।



## आधुनिक हिन्दी नाटक में प्रेम और यथार्थ का अन्तर्द्वन्द्व : "आषाढ़ का एक दिन"

\* प्रियंका कुमारी मिश्रा

'संवेदनशील' को अभिव्यक्त कर 'चेहरों' से सब होलकर बदलना व्यक्तिपर दिखलाकर बतलाने वाला साहित्य ही

सादयशास्त्र कहलाता है।\*

सादयशास्त्रीय भूतभूतियों ने लोकभूतियों के अनुकरण को ही नाटक कहा है- "लोकभूतानुकरण सादयशास्त्रमया कृतम्।" जैसा कि हिन्दी नाटक की परम्परा तो संस्कृत साहित्य की परम्परा से जुड़ी रही है, अनिवार्यता के माध्यम श्रद्धा और दृश्य से साधारणजीवन का वर्णन रहल, सुगम रहा है। इसी नाट्य परम्परा में प्रयोगशील नाटककार के रूप में मोहन राकेश का व्यक्तित्व अवतरित हुआ। कहा जाता है -

'समकालीन रगरररररर की' यहचान का पहला प्रणयिक खेचर है, मोहन राकेश।' अधिका नाटकों की रचन न करने पर भी ये नाटक क्षेत्र के भरीका कहलाए, यह भा कंगाल प्रयोगशील नाटककार थे कलिक वैयक्तिक और सामाजिक समस्याओं पर भी उनकी दृष्टि बराबर केंद्रि रही है। उनोंने कुल तीन नाटक लिखे - अषाढ़ का एक दिन, सहेने का राजरेश, अंगे-अर्दे, उनके संदर्भगय जीवन का प्रतिकलन उनकी रचनओं में देखने को भिलता है। लेकिन उनकी जिन्दगी जितनी उलझी हुई थी, उतनी रचनारु जितनी ही सुलझी हुई है। जिस तरह यह अपने जीवन में अनुभव एवं खरंड खई उसी प्रकार उनरके पात्र भी सही संघर्षों से गुल्टा है।

'आषाढ़ का एक दिन' आधुनिक हिन्दी नाटक में ऐतिहासिक परिपेक्ष पर रचा गया ऐसा यथार्थ है, जो आज के जीवन को विभगता,

\*ग्रौध काल, शिवी शिवरा, अर्दी शिवी शिवरा, भाग-9 अंक-2-1085

UGC M. No. 40577

Reg. No. 1080/1971/17

ISSN : 2272-1832

# शब्दार्थ

त्रैमासिक पत्रिका

(साहित्य, कला, संस्कृति और सोच की सीखार्थी पत्रिका)

अंक - 19, जनवरी - मार्च 2018

सम्पादक

वसिष्ठ अग्रूप

प्रोफेसर, हिंदी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221006

सम्पादकीय संपर्क

204/11, राजेश्वर अपार्टमेंट्स,

वेस्टिंग बल्ड (बटिवा) वाराणसी

शब्दार्थ अकादमी, वाराणसी

Self-attested  
Sonal

- रामायण के कथा तत्व द्वारा ग्रामीण युवाओं के चरित्र निर्माण में संगीत का महत्व 178-181  
डॉ० राजन कुमार
- भारतीय मुस्लिम महिलाओं की वर्तमान सामाजिक स्थिति : समाजशास्त्रीय अध्ययन 182-187  
प्रशांत कुमार
- नैतिक निर्णय के विश्लेषण की वर्तमान में प्रासंगिकता 188-192  
डॉ० कुमारी सस्मा
- चित्रा मुद्गल के उपन्यासों में नारी संघर्ष 193-196  
कृष्ण कुमार
- रामतत्व का विकास और कवि तुलसीदास 197-199  
राम जीत वर्मा
- दलित साहित्य की संकल्पना - वैचारिकी एवं दार्शनिक आधार 200-207  
सुरेश कुमार यादव
- मार्कण्डेय की कहानियों में ग्रामीण चेतना 208-213  
विवेक यादव
- मृत्यु : एक नैतिक अवसाद या आध्यात्मिक असंतोष 214-219  
डॉ० सोनल

*Self-attached  
Email*

## मृत्यु : एक भौतिक अवसाद या आध्यात्मिक असंतोष

डॉ० सोनल\*

वर्तमान परिदृश्य में यह ज्ञातव्य है कि हमारा मानसिक विकास एकांगी हो गया है। हम भौतिकतावादी जीवन में अपने नेतृत्व और जीविधिकाकारी ध्रुवियों का पूर्ण मूल्यंकन नहीं कर पा रहे हैं। हमें ज्ञात ही नहीं होता है कि हम अपनी किन अतृप्त इच्छाओं (दस्तु) को प्राप्त करने में अपना सम्पूर्ण जीवन व्यर्थ कर रहे हैं जो हमें जीवन के किन पथार्थ सुखों से वंचित कर रही है। मनुष्य जीवन में सदैव आनन्द की प्राप्ति करना चाहता है परन्तु मायावी जीवन में वह यह नहीं समझ पाता है कि उसके लिए भौतिक सुख और आध्यात्मिक सुख दोनों में से कौन-सा ज्यादा कल्याणकारी है? एक तरह के भौतिक संसाधनों का विकास समाज को विकसित कर रहा है और वहीं दूसरी तरह समाज का प्रत्येक व्यक्ति मानसिक एवं आध्यात्मिक दरिद्रता से रुग्ण हो रहा है। इस प्रकार मानसिक एवं आध्यात्मिक रुग्णता के कारण समाज में मृत्यु के विकृत रूप दिखाई दे रहे हैं।

मनुष्य के जीवन का अन्त ही 'मृत्यु' है। शरीर के वृद्ध हो जाने पर (प्राकृतिक रूप से) या फिर शरीर के क्षतिग्रस्त होने पर प्राणशक्ति का शरीर से बाहर निकल जाना ही मृत्यु है। मृत्यु के प्रकार हैं- प्रकृति के द्वारा मृत्यु को प्राप्त होना, दूसरी की द्वारा मारा जाना (हत्या), अपने आप को मार देना (आत्महत्या) और यूथेनेसिया (असाध्य बीमारी की दवा में विफलता से इलाज के द्वारा मृत्यु देना)। सामान्य ढंग से शरीर के क्षीण होने पर या आयु के पूरा होने पर प्राणशक्ति का शरीर से बाहर निकल जाना सामान्य मृत्यु है परन्तु आज कुछ ऐसे संताप के कारण व्यक्ति में जीवन जीने की लिप्सा समाप्त हो गयी है। वह असमर्थ ही अपने जीवन को समाप्त कर रहा है। उदा०- आत्महत्या और यूथेनेसिया (इच्छामृत्यु)। यूथेनेसिया मृत्यु का एक ऐसा प्रकार है जिसे विशेष परिस्थिति में उचित माना जा सकता है परन्तु आत्महत्या एक अपराध है। आत्महत्या शाश्वत सत्य मृत्यु को समाज में विकृत रूप से सुधित कर रहा है। यह समाज में नकारात्मक प्रवृत्तियों को उत्पन्न करता है। व्यक्ति अपनी इच्छाओं के जर्मान होकर आत्महत्या का आतिथान कर रहा है।

आत्महत्या लैटिन भाषा के **Suicidium** शब्द से बना है जिसका अर्थ 'स्वयं को मारना' है। यह एक संकुचित प्रवृत्ति का परिणाम है। प्रिय की मृत्यु या अलग-अलग आर्थिक समस्या आदि कारण आत्महत्या जैसे भौतिक अवसाद को

\* सहायक प्राध्यापक, दर्शनशास्त्र विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (अंगीकृत इकाई) और कुवैत विश्वविद्यालय, आबू, विशार)

*Self-attested  
Sonal*



उत्पन्न करती है। आत्महत्या के तीकड़ों में जलरोधक द्रुधि का कारण मग की यही बताप है। प्राचीन काल से ही आत्महत्या को समाज के लिए एक अनिवाप माना गया है। वैदिक साहित्य में आत्महत्या की प्रवृत्ति को हतोत्साहित करने के लिये विभिन्न प्रकार के दण्ड प्रतिमानों का उल्लेख है। आत्महत्या करने वाले व्यक्तियों को साठ हजार वर्षों तक मरक की याता छोडनी पडती है। इस प्रकार का व्यक्ति चाहे जीवित रहे या मर जाये वह असुद्ध कहलाता है। वैदिक संघों में माना गया है कि ऐसे व्यक्ति की शिता को अग्नि देने वाला भी असुद्ध हो जाता है। आत्महत्या भाई की मारने से भी बडा अपरध है। गरुड पुराण के अनुसार भी ऐसी जीवात्मा को मृत्यु के परचाल घोर अवगुनी से गुजरना पडता है। धर्मसूत्र ने अपनी पुस्तक में बताया है कि पूर्वकाल से ही आत्महत्या एक दण्डनीय अपरध है वो लिखती है कि "प्राचीन एरॉस में जो व्यक्ति राजा की आज्ञा के बिना आत्महत्या करता था तो उसे सामान्य रूप से दफनाने का अधिकार नहीं था। उस व्यक्ति को शहर के बाहर अकेले दफनाया जाता था। उसकी कब्र पर किसी भी प्रकार का धिदन नहीं होता था।" जमाहमिक धर्म में भी आत्महत्या को ईश्वर के समक्ष किया जाने वाला अपराध माना गया है। यह धर्म जीवन जीने की पवित्रता में विश्वास रखता है। हवाई देश की न्यायनिक प्रणाली की धारा 308 के तहत आत्महत्या एक अपराध है परन्तु 2009 में सरकार ने इसमें परिवर्तन करके इसे अपराध की श्रेणी से हटा दिया है। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि आत्महत्या करना उचित है। यह केवल इसलिए किया गया है कि उस कुण्ठित व्यक्ति को कठिन न्यायनिक प्रक्रिया से गुजरना ना पड़े। यह एक अनैतिक कर्म ही है। यह पूर्वप्रती से प्रसिद्ध होकर किया जाता है। मित और कांट भी यही मानते हैं।

प्रश्न उठता है कि हिन्दू धर्म में सती प्रथा मृत्यु का किस प्रकार का उदाहरण है? क्या यह आत्महत्या जैसे कुकृत्य को प्रक्षय देती है? ऐसा बिल्कुल भी नहीं है। सती प्रथा आत्महत्या को प्रक्षय नहीं देती है। यह कृत्य निराश्रमरी प्रवृत्ति के कारण नहीं होता है बल्कि प्राचीन काल में स्त्रियों अपने सतिध के स्वार्थ जीहर शीर्ष एवं उत्सहपूर्ण प्रवृत्ति से मुक्त होकर करती थीं। जैसे - सती पदमावती का जीहर।

आधुनिक युग में सुसाइड धर्मसूत्र किस प्रकार के मृत्यु को उदाहरण है? क्या यह आत्महत्या का प्रकार है या इच्छामृत्यु का? यह कौसी इच्छामृत्यु है जो अपने सान सार्व व्यक्तियों के मृत्यु का कारण बनती है। ऐसे व्यक्ति निराशासदी होते हैं जिनके जीवन का कोई लक्ष्य नहीं होता है। यह व्यक्ति अन्धविश्वास में आकर ये अपराध करते हैं। यह इच्छामृत्यु नहीं है क्योंकि इच्छामृत्यु का तात्पर्य किसी असाध्य बीमारी से ग्रस्त व्यक्ति को डॉक्टरों सहायता से मरीज के जीवन को समाप्त करना है। इच्छामृत्यु को 'मती किलिम' एवं 'यूरोनेसिया' भी कहा जाता है। Euthanasia एक ग्रीक शब्द है। Eia का अर्थ अच्छी और Thanatos का अर्थ मृत्यु है। इच्छामृत्यु के प्रकार निम्न हैं-

*Self-attempted  
Suicide*

1. **स्वैच्छिक एक्टिव यूथोसिस (Voluntary)**- स्वैच्छिक एक्टिव यूथोसिस में मरीज की मजूरी के बाद जानबूझकर ऐसी बात की जाती है जिससे कि उसकी मृत्यु हो जाये। यूथोसिस का यह प्रकार अत्यंत गीबर्लीक एवं बेजिज्जम में है।

2. **अवैच्छिक एक्टिव यूथोसिस (Involuntary)**- यह प्रक्रिया पूरी दुनिया में प्रतिबन्धित है। ऐसा मरीज जो गैरवैध रूप से अपनी मृत्यु को मजूरी देने में अराज्य हो एक उन्नी मरने को शिरो नमा देना।

3. **सक्रिय यूथोसिस (Active)**- इसमें असाध्य बीमारी से परत व्यक्ति को जीवन का अन्त डॉक्टरों सहायता के द्वारा होता है।

4. **निष्क्रिय यूथोसिस (Passive)**- इसमें व्यक्ति अन्तर काली समय में असाध्य में है और उसके ठीक होने की सम्भावना काफी कम है तो ऐसी स्थिति में उसकी परिवार वालों की सलाहों की डॉक्टर के द्वारा उसकी जीवनसमय उपकरणों का बन्द करना होता है। 9 मार्च 2018 को भारत देश में भी निष्क्रिय इच्छामृत्यु को अनुमति प्रदान की गयी है।

5. **सहायता प्राप्त इच्छामृत्यु (Assisted Suicide)**- जब व्यक्ति जीवन में संतान हो जाता है एक आत्महत्या की दृष्टि से यह डॉक्टर के द्वारा ऐसी बात जता है जिससे उसकी मृत्यु हो जाये। गीबर्लीक, बेजिज्जम, रिहायशीक और अमेरिका में इस प्रणाली को वैध माना गया है।

इस प्रकार रिहायशीक, गीबर्लीक, बेजिज्जम, जर्मनी, जापान, कनाडा, फ्रांस, स्पेन, ब्रिटेन, इटली, अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया आदि देशों ने अपनी कानून व्यवस्था में इच्छामृत्यु सम्बन्धित विधियों का निर्माण करके उन्नी उचित माना है।

इच्छामृत्यु की आशीर्षता को अन्तर देखा जाये तो इसकी स्पष्ट उदाहरण महाभारत और रामायण को ही मान ले सकते हैं। महाभारत के युद्ध के समय भीष्मपितामह जब तक शरहीक पर लेटे रहे जब तक सूर्य उतरावना नहीं हो गया। सूर्य के उतरावना होने को परधाय ही उन्नीने शरीर का परिचय किया। उसी प्रकार रामायण काल में सीताजी का भरती में सजाहित होना भी इच्छामृत्यु का ही उदाहरण है। सीता ने भी अपनी इच्छा से ही सस्यु मदी में जलसमाधि ली थी। समकालीन स्वामी विवेकानन्दजी ने भी योगसमाधि के द्वारा और विनोबाभावेजी ने अपनी इच्छा से इच्छामृत्यु का परण किया था। अतः स्पष्ट है कि इच्छामृत्यु प्राचीन काल से ही वैध थी। इच्छामृत्यु कानून सम्बन्ध के द्वारा ही प्राप्त हो सकती थी।

आधुनिक परिधि में जीवन धर्म का सस्लेखन (संभार) सिद्धांत कठोर सम्बन्ध पद्धति के द्वारा प्राप्त होने वाला इच्छामृत्यु का ही एक प्रकार है। जीवन धर्म की आत्म-उन्नयन की प्रक्रिया सस्लेखन (संभार) सम्बन्धी है। इसमें भावक और मुनि उपासक के द्वारा शरीर को शीत करके शरीर का त्याग करता है। सस्लेखन शब्द सत् और लेखना से बना है जिसका शाब्दिक अर्थ सम्भार

Self-attested  
Journal

प्रकार से काय और कर्माणों को कुम्भजोर करता है। सल्लेखना में बाह्य शरीर एवं आन्तरिक कर्माणों को तथा उनमें कर्माणों का अन्तर्भाग करने क्रमशः कृश (तपान्त) किया जाता है। दिगम्बर जैनशास्त्रों के अनुसार इस प्रकार की सम्पत्ति को सल्लेखना और श्वेताम्बर के अनुसार इसे संशयन कहा जाता है।

कर्माणों से रहित मन को शुद्ध आत्म स्वरूप में कल्पित करते हुए प्राणों का विसर्जन करना ही सल्लेखना है। सभी धर्माचार्यों के अनुसार जीव का अन्तकाल आध्यात्मिक महत्त्वपूर्ण होता है। जैमिनी ने यही तक कहा है कि जीवनभर की तपस्या व्यर्थ होगी अगर अन्त समय में शगद्वेष-आसक्ति रहित होकर सम्पत्ति धारण न की जाये। जैन धर्माचार्यों ने अनुसार सल्लेखना प्रवृत्त करने का एक निश्चित समय होता है। समन्वय आचार्य के अनुसार सल्लेखना उपसर्ग (मृत्यु) जाने पर, दुर्भिक्ष (अकाल) की समय, बुढ़ापे में और अस्वस्थ होने पर तथा धर्म की रक्षा के लिये किया जाता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि संसार एक प्रकृतमृत्यु का प्रकार है। ये मृत्यु के विरुद्ध रूप आत्महत्या जैसा अशुभ नहीं है क्योंकि संसार धर्म का रक्षक किया जाने वाला धार्मिक प्रवृत्ति से मुक्त धार्मिक संकल्प है। यह अधिकांश एवं आध्यात्मिक आत्मस्वतन्त्रता की साधना पद्धति है जिसमें आत्महत्या का उन्मथन होता है।

भगवती आरक्षणा में सल्लेखना के दो प्रकारों का वर्णन मिलता है- आभ्यन्तर एवं बाह्य। सर्वप्रथम आभ्यन्तर सल्लेखना तप के द्वारा मन से कर्माणों (शगद्वेष मोह, लोभ) को दूर करती है तत्पश्चात् बाह्य सल्लेखना द्वारा शरीर को कृश किया जाता है। सल्लेखना वास्तव में शांति के जयसक की आदेश मृत्यु है। जैसे सूर्योदय होने के साथ सूर्यास्त निश्चित है वैसे ही जीव के जीवन के साथ उसका अन्त निश्चित होता है। बस जीव को यह निश्चित करना है कि यह इस प्रपञ्चमय जगत् से किस प्रकार की मुक्ति चाहता है? यह इस शाश्वत साथ को सुखपूर्वक ग्रहण करना चाहता है कि इसका मन से शरीर का त्याग करना चाहता है। सल्लेखना सिद्धान्त के द्वारा बताया गया है कि जब जीव को लगता है कि वह मृत्यु के करीब है तो उसे कठिन प्रक्रिया के द्वारा शरीर को कृश करना चाहिए और ये सम्पूर्ण प्रक्रिया गुरु के देख-रेख में होनी चाहिए। सल्लेखना पद्धति द्वारा जीव को मृत्यु सुखपूर्वक उसी प्रकार मिलती है जिस प्रकार एक सैनिक देश की रक्षा के लक्ष्यार्थ सौभाग्य पर युद्ध के समय अपने शरीर को त्यागता है। युद्ध में सैनिक को ज्ञात होता है कि उनकी मृत्यु सम्भावित है उसके बाद भी वह उस सम्भावित मृत्यु से डरते नहीं हैं बल्कि उस धर्मोपदेश पर आगे मृत्यु को सुखपूर्वक ग्रहण करते हैं। सल्लेखना छोटी आयु वाली और स्वस्थ जीव के लिये नहीं है। यह उन मुनिवर्ग और भावकों के लिये जो मृत्यु के समीप हैं। सल्लेखना एक ऐसा महोत्सव है जिसमें जीव सभी दुःखों से मुक्त हो आत्म उन्मथन करता है।

संक्षेप में, आत्महत्या दुःख एवं शोकयुक्त प्रवृत्ति का परिणाम है जबकि सल्लेखना सुखपूर्वक शोकरहित ढंग से मृत्यु के ग्रहण करने की कला है।

*Self attested  
Sonal*

आत्महत्या कायदा का सुपक है क्योंकि किडनी में व्यक्ति तीन सालों में सुका होता है, सल्लेखना बीमारी का अभ्युपग है जो धर्म से प्रेरित होकर किया जाता है। आत्महत्या एक अभ्युपग है जो दूसरों के विचारों से प्रभावित होकर किया जाता है दिल्ली का बुराई काण्ड इसका स्पष्ट उदाहरण है जिसमें अभ्युपग के कारण एक ही परिवार के 11 सदस्यों में सामूहिक आत्महत्या की थी। आत्महत्या पशुधनकारी नीति से प्रभावित होता है। इसने व्यक्ति जब जीवन की चुनौतियों का सामना नहीं कर पाता है तब वह जीवन से पराजय कर लेता है जैसे बरसात बिहार के 400 एमड ने किया। सल्लेखना में अभ्युपग को स्थान प्राप्त नहीं है। यह स्वयं की इच्छा से की जाती है। आत्महत्या शोध एवं असंतोष का परिणाम है जबकि सुख और संतोष का फल सल्लेखना है क्योंकि वह जीवनभर की तपस्या के द्वारा प्राप्त होता है। आत्महत्या संसार में मारम को जन्म देती है जिससे संसार में शिला की प्रवृत्ति बढ़ती है जबकि सल्लेखना के द्वारा धार्मिक वातावरण बनता है ये मृत्यु जैसे अवसाद को महोत्सव का रूप देती है। आत्महत्या के द्वारा व्यक्ति सबकुछ खो देता है, सल्लेखना के द्वारा वह परम पुरुषार्थ को प्राप्त करता है। इस प्रकार आत्महत्या में तीन कथारों (रागद्वेष, मोह) के आवेश में आकर शरीर को हाथि पहुँचानी जाती है। यह मृत्यु भौतिक अवसाद का परिणाम है जबकि सल्लेखना प्रमादरहित समधि की अवस्था है जो आध्यात्मिक संतोष की प्राप्ति कराती है।

हिन्दू समाज में जीवन का परमलक्ष्य मोक्ष पुरुषार्थ को प्राप्त करना है। धारक्यनीति में कहा गया है कि "जित मनुष्य ने चारों पुरुषार्थों में किसी एक की सिद्धि नहीं की है तो उसका जीवन मृतक के समान होता है।" आत्महत्या के द्वारा प्राप्त मृत्यु हमें पुरुषार्थों की सिद्धि नहीं करने देती है जिसके कारण व्यक्ति आत्मा के प्रथम स्वरूप को समझ ही नहीं पाता है और वो इस संसार से कभी भी मुक्त नहीं हो पाता है। इसके विपरीत इच्छामृत्यु का वरण करने वाला पुरुष आत्मा के प्रथम स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करके मोक्षानुभूति प्राप्त करता है।

निष्कर्षतः आधुनिक समय में आत्महत्या के आकड़ों में उत्तरोत्तर वृद्धि का कारण पारिवारिक कलह और वैवाहिक सम्बन्धों में आई समस्याएँ हैं। अणुप्रस्तता, दहेज, परीक्षा में विफलता, प्रेम-सम्बन्ध में विफलता, शर्मिंदगी, लम्बी और अस्वास्थ्य बीमारी, मानसिक रोग, गरीबी, बेरोजगारी, नशीली दवाओं के व्यसन आदि भी आत्महत्या के उत्प्रेरक घटक हैं। इन समस्याओं को दूर करने का परम फलदायक साधु का है। साधु का कर्तव्य है कि वह एक ऐसा सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक वातावरण निर्मित करे जिसमें प्रत्येक व्यक्ति की मकारात्मक प्रवृत्तियों का निरोधन हो सके और वह व्यक्ति राष्ट्र में जीवन को जीने की एक सकारात्मक राह ढूँढ सके। मृत्यु के शाश्वत सत्य को ज्ञान के साथ स्वीकार करते हुए, मृत्यु के विकृत रूप को हतोत्साहित करते हुए जीवन को एक महोत्सव की भाँति व्यक्ति को जीवन जीने की कला सीखने की चेष्टा करनी

*Self-attested  
Small*

चाहिए ताकि वह जीवन को पूर्ण लक्षित और पूर्ण उत्साह के साथ जी सके एवं अपने जीवन को एक अर्थ प्रदान कर सके।

युवाओं में इस समस्या को समाधान के विवेक तालवार को समाज में नैतिक शिक्षा का प्रचार प्रसार करना होगा। नैतिक (दार्शनिक) शिक्षा के द्वारा ही शरीर, मस्तिष्क एवं आत्मा का आध्यात्मिक विकास सम्भव है। नैतिक शिक्षा व्यक्ति को उसके अस्तित्व के प्रति एक गहन दृष्टि प्रदान करती है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने भौतिक अवसादों का निरोधन करके एक सन्तुष्ट एवं सुखदायक जीवन जीने की कला सीखता है और आध्यात्मिक संतोष की प्राप्ति करता है।

सन्दर्भ-सूची

1. पञ्चम स्मृति- 4/1-2 मन्वन्त कर्म ५२-७०/२९, महाभारत- १४/२१-२२।
2. महाभारत- २/४।
3. Fatal Freedom: The Ethics and Politics of Suicide, P. no-11, Thomas
4. सत्यकामप्रज्ञापानेकना सत्येकान। सायन सत्यकामप्रज्ञापानेकना व अथर्वण  
सायनसत्यकामप्रज्ञापानेकना सत्येकान। (In Encyclopedia of Jainism.com)
5. आचार्य तुलसी अथर्वण प्रथम, अथर्वण- ०४, पृ- १३।
6. सत्यकामप्रज्ञापानेकना, श्लोक- 122।
7. गीता- 16-21।
8. अथर्वणसत्येकना सत्येकानेकना व अथर्वण। (अथर्वण अथर्वण सत्येकना सत्येकानेकना)



Self-attested  
Jonal



# उन्मेष



Ummesh

---

An International Multilingual Half Yearly Refereed Research Journal

---

Vol. : 3

No. 1

November, 2016-April, 2017

सम्पादकद्वय

डॉ० राधेश्याम मौर्य

शिवेन्द्र कुमार मौर्य

सह-सम्पादक

डॉ० मनोहर लाल

डॉ० अरविन्द्र कुमार

प्रकाशक

जन सेवा एवं शोध शिक्षा संस्थान, प्रतापगढ़-२३०००१ (उ०प्र०)

■	vd'ly fpūh , d fo'y'li	181&183
	<i>जय प्रकाश यादव</i>	
■	hijr e hife ljpuk di leit'xl=; v/; ; u	184&186
	<i>सत्यभारी</i>	
■	jfrdlyu ufrdfori , o nohni	187&189
	<i>सत्यभारी मिश्रा</i>	
■	vifn dxy l hijrh; leit e fokliu d cnyr lo: il , d o; k[; k	190&192
	<i>अजय-प्रकाश जयसवाल</i>	
■	Yid thou vij lfgā;	193&197
	<i>डॉ० विजय कुमार खेतवाड़ा</i>	
■	di'lh e ; (i iiti dh l jEij)	198&199
	<i>डॉ० उमाशंकर गुप्ता</i>	
■	iR; (i lei.l \ di'eij 'lon'lu d vxyd e	200&202
	<i>सतीश विजवारी</i>	
■	tuoin vij nluifi fig di d fli lfgā;	203&206
	<i>ब्रवीर जयसवाल</i>	
■	i lin dh lūn; ; prul	207&209
	<i>गोपाल यादव</i>	
■	yid dyidij 'fii [lijh Bidij' di l'ij'ij fo'v'k l nrih 'l= /ij'	210&214
	<i>शशीन्द्र कुमार यादव</i>	
■	egrei xl/ih vij b i r b /ie	215&217
	<i>अरुण कुमार सिंह</i>	
■	cmY dh n'V e fopij vij l r	218&220
	<i>सोनी कुमारी</i>	
■	hijrh; hix'vli e i=difjri dh 'k; vlr vij fgūh i=difjri	221&226
	<i>डॉ० अमित कुमार सिंह कुशवाड़ा</i>	
■	vūyiby leipij i= dh vūroLr di ; oi fo   fli; h ij ihho lfgūh v [icijh d oc lLdj. h d leipij , o fokliu ij vi/hijr v/; ; u	227&232
	<i>ब्रवीर कुमार</i>	
■	ifrei&lhB rfi vdr y [i	233&235
	<i>सतत कुमार मौर्य</i>	
■	Loir=; iūj vi/hud xt jri dhfori dh ce [i gofū; k	236&240
	<i>समर सिन्हा</i>	
■	dle; ; u vij fgūh vxyipui	241&242
	<i>अवनीता कुमार पाण्डेय</i>	
■	v l / ; oi. h e fgūh n'ku	243&245
	<i>गिरधरा कुमार</i>	
■	vtufc; r d vibu e ub dgiu	246&250
	<i>शिवाजी लक्ष्मण</i>	
■	dPph di diuu	251&253
	<i>प्रियंका कुमारी मिश्रा</i>	
■	fgūh uotixj. l \ clyN'. l hVV d fuc/ih dh nfu; ;	254&263
	<i>डॉ० समीर कुमार यादव</i>	



## दृष्टि के द्वार

विश्व के द्वार

आज भी भारत की अधिकांश जनसंख्या गाँवों में रहती है और जापानिकता की दृष्टि में ये गाँव और यहाँ के लोग बहुत पीछे हैं। हिन्दी साहित्य में इतनी बड़ी जनसंख्या को हस्तगत रूप से बहुत कम जगह मिली है। जापानिक युग में भी गाँव के जीवन, यहाँ के लोगों की चुनौतियाँ, खुशियाँ, तकलीफें, सपनों को पूरने, सम्झने वाले लेखक बहुत कम हैं। शिवमूर्ति ही ऐसे लेखक हैं, जो गाँव और उससे जुड़े सभी पहलुओं को अपनी लेखनी के माध्यम से उसका सजीव चित्रण करते हैं। वह अपनी कहानियों में ग्रामीण समाज को उलने ही बेटीयों, उलने ही कुत्तों, उलने ही खुरदरे उलने ही विभिन्न रूप में चित्रित करते हैं। चित्रण यह वास्तव में है।

शिवमूर्ति जी का नवीनतम उपन्यास 'कुच्चो का कानून' एक ऐसे विधवा स्त्री की कहानी है जो अपने जोख के अधिकार के लिए पंचायत से लड़ती है और उसे इस लड़ाई में समाज के उपायद्वय व नई पीढ़ी के स्त्रियों व पुरुषों का सहयोग मिलता है और वह इस लड़ाई में जीतती है। यह उपन्यास स्त्री सशक्तिकरण और पितृसत्तात्मक समाज पर चोट करती है। यह आधुनिक स्त्री की एक विजय-गाथा है। इस उपन्यास का केन्द्र भी गाँव है, साथ ही शहरी संस्कृति का प्रभाव ग्रामीण संस्कृति में जैसे परिवर्तन आता है, इसे दिखाते का प्रयास किया गया है।

शिवमूर्ति की कथा संसार के स्त्रीपात्र बड़े ही सजीव व मार्मिक रूप से हमारे ग्रामीण समाज के गरीब व दलित स्त्री वर्ग की उपनोप स्थिति को उजागर करते हैं। 'कुच्चो का कानून' स्त्री संघर्ष की एक नई गाथा है। यह कहानी एक विधवा स्त्री के अपनी मर्जी के पुरुष से बच्चा पाने और भरी पंचायत में अपनी जोख पर अपने हक के लिए लड़ जाने की बेहत सशक्त, मार्मिक और ज्ञानदार कहानी है। इस कहानी में स्त्री पंचायत में हारती नहीं है; वह गाँव के बूढ़ों को अपनी तर्कशक्ति से उन्हीं की मीठ में निकलरिक्त कर देती है और एक विजयी के रूप में उभरती है। और उसे इस संघर्ष में नव-यौवना से युक्त समाज का बल मिलता है। इस कहानी को मुख्य पात्र कुच्चो है, जो विधवा है। विधवा होने के पश्चात् परिस्थितिवश मायके ने जाकर बूढ़े सास-ससुरा को सेवा के लिए ससुराल में ही रहने लगती है। उसके पेटक सम्पत्ति पर काबू रखने के लिए जेठ बनारसी से लेकर गाँव के लोग लड़वाई भरी नजरों से देख रहे थे। यह स्त्री पिनेही समाज में अपने सास-ससुरा और अपनी स्वयं की अस्मिता रक्षा के लिए संघर्ष करती है और अपनी जोख से किसी और का बच्चा पैदा कर अपनी सम्पत्ति के लिए धारिस पैदा करने का संकल्प लेती है। उसका यह कार्य पितृसत्तात्मक समाज में भूचाल का देता है क्योंकि यह मातृसत्तात्मक शक्ति का विस्तार ही रहा था। उसकी जेठ बनारसी द्वारा पंचायत में उसे कुसटा और अपमानित करने के उद्देश्य से पंचायत बुलाता है। उसे पंचायत में अश्वि गर्भ के लिए धोरा जाता है। लेकिन अशिक्षित कुच्चो टिपेरी और हिम्मत से अपने जोख में पड़ रहे बच्चे को जन्म देने का हक दिखाने की बात करती है और कहती है— 'मैं दूसरे से शीज लेकर अपने लिए सहारा पैदा कर रही हूँ। मैं अपनी जोख का उद्धार करना चाहती थी। जोख मेरी है तो हक किसका होगा?'

विधवा कुच्चो पुत्र के नाम के आगे नहीं ले नाम को ही पर्याप्त मानती है। उसे इस बात पर बड़ी ईशता होती है कि गाँव लिए गये बच्चे जो तो पति की धारिसत में हिस्सा मिल जायेगा लेकिन स्वच्छा से किसी पुरुष से पैदा होने वाले बच्चे को हक नहीं मिलेगा। वह कहती है, 'जो मेरी जोख से पैदा होगा, उसका

ज्यादा चाहें जिसका ही लेकिन अथा खुत तो मेरा होगा। गोट घाड़े बच्चे में तो मेरे खुत की एक बूँट भी नहीं होगी। दोनों में से मेरा ज्यादा सगा लौन हुआ? यह सिर घुमाकर चारों तरफ देखती है— मुझे तो विश्वास नहीं होता कि यह जवाहर लाल नेहरू ऐसा अथा कानून पास कराये होंगे, जादू में तो बहुत गल्ल आदमी लगते हैं।

यह कानून पर सवाल उठाने के परचात पुरु के आगे मी के नाम को ही पर्याप्त मानते हैं। यह इस तरह को ऐतिहासिक पुराण व आस्था का सहारा लेती है। उसका यह निर्णय समाज पर दुर्गामी प्रभाव डालने वाला है। जिससे समाज के कृत्रिम विघटन की ज्यादा आशाका है। स्त्री का पुरुष के कब्जे से मुक्त हो उसे स्वतंत्र अस्तित्व के स्थापित हो जाने का मंत्र है जो जन्म-जमौत उत्तराधिकार के साथ उसे आर्थिक सजबूती से ज्यादा स्वतंत्र करता है। कुच्ची का यह निर्णय एक क्रांति की तरह है। जो इक्कीसवीं सदी के समाज में समानता की घोषणा करता है।

स्त्री का जीवन शोषण होना और प्रतिरोध किये जाने पर उसके ऊपर शारीरिक व मानसिक अत्याचार किया जाना पितृसत्तात्मक समाज की सामान्य प्रवृत्ति है। नारी के जीवन को निर्धारित करने के लिए बहुत सारी नैतिकता रूपी आचार-संहिता निर्धारित की जाती है और पुरुषों को एक खुले साइड की तरह छोड़ दिया जाता है। पंचायत भी पुरुषों को नैतिकता के नाम पर खुली छुट दिया हुआ है जबकि स्त्री के लिए बहुत सारे बंधन। कुच्ची के प्रतिरोध को बल इसी समाज के खुले नियमों ने प्रदान की। और उसका समर्थन वीटिक एग के पुरुष और जागरूक स्त्रियों द्वारा मिलता है। जिसके कारण कुच्ची पर सवाल उठाने वाले खुद सवालियों के धरे में आ जाते हैं और पंचायत से भाग छुड़े हो जाते हैं।

इस उपन्यास में समाज के रिश्तों का जो मोल दिखाई दिया है वह आज के गाँव में अभी भी दिखाई पड़ता है। कुच्ची अपने सास-ससुर को मी-बाप की तरह सेवा करती है तो उसका चचेरा जेठ धन-संपत्ति के लिए अनेक कुचक रचना है और अपनी भद्र की अस्मिता पर भी हमला करता है। उसे बदनाम करने के लिए और घर से बाहर निकालने के लिए पंचायत बुलाता है। कुच्ची के मन में आगे इस परिवर्तन के लिए इलाज के दौरान अस्पताल में मिर्ची नर्स और कुच्ची के संगठन ही जिम्मेदार है। कुच्ची के युवा मन में नर्स कुट्टी को बाले सुनकर अज्ञानक आ धमके फैलाप के कारण निस्तान रह जाने तथा निस्तानता के कारण परिष्कारिक समिति व सामाजिक प्रजुट छो देने की स्थिति पैदा होने की पीड़ा-असह्य हो उठती है। वह सास को इस बात को लिए तैयार करती है और अपने कोठ में इच्छा-धारण करती है। कुच्ची को बल धनु-बाबा से मिलता है जो उसे पंचायत में बहस के लिए जान देते हैं।

शिबमूर्ति जी का उपन्यास कुच्ची का कानून नये स्त्री सशक्तिकरण और नवजागत समाज के उदय से सम्बंधित है। यह पितृसत्तात्मक सत्ता पर चीट करती हुई कथानक है। जब मौयो की पंचायत का बदलता स्वरूप और नारी चेतना का नय स्वरूप दिखाई पड़ता है। इस कथानक का प्रारम्भ कुच्ची के विधवा होने और उसके चचेरे जेठ द्वारा संपत्ति हड़पने की साजिश से प्रारम्भ होती है। कुच्ची के गर्भपती होने से गाँव में उधर-पुधर पंचायत का बैठना और उसमें गर्भ धारण को नैतिक समर्थन मिलना एक नये समाज के उदय को दर्शाता है। शिबमूर्ति जी ने कुच्ची का कानून में पंचायत को एक तरह के शास्त्रार्थ की घंटी की भाँति प्रस्तुत किया है। जहाँ शास्त्रार्थ का विषय किसी निगूठ अन्वयान्तिक दर्शन अथा धार्मिक विचार के निष्पादन से जुड़ा नहीं है। यहाँ विचारगोच विषय एक विधवा स्त्री के कोठ से अधिकार से जुड़ा है। मी बनने के उस विधवा के संकल्प से जुड़ा है। यहाँ एक विधवा सामान्य अबला है— 'यह धर्म-शास्त्रों की शाता नहीं है किन्तु उसका व्यवहारिक ज्ञान प्रबल है। उसकी साधारण बुद्धि में असाधारण तर्कशीलता समाहित है।'

यह उपन्यास सिर्फ नारी के कोठ से अधिकार को नहीं दर्शाता बल्कि भारत के नये गाँव के स्वरूप का दर्शन होता है। इसमें घटी घटना या सपाट गाँव के उधार्थ के करीब होता है। गाँव के प्रचलित पुरानी परम्पराओं का विघटन है तो अकेली स्त्री का नई दिशा में बढ़ने का साहस है। पंचायत को कैसेसे को धन-बल से नहीं बल्कि तर्कपूर्ण सपाट से ही बदले जायेंगे। बाह्य समाज का प्रभाव गाँव में एक नई चेतना आता है। इसका उदुदृश्य मौयो में नये सामाजिक मूल्या को स्थापित करता है।

शिबमूर्ति जी रचनाओं में मुदयत स्त्री विमर्श का मुदटा है किन्तु उनके स्त्री विमर्श के कोष्ठ में आज की पढ़ी-लिखी जागरूक भद्र नारी नहीं बल्कि निम्नवर्गीय आड़ों के दैहिक ताप व उलपीडन किजीविधा

प्रतिरोध परिवारिक झंझट आदि पर केंद्रित है जो परिवार समाज के टांगरे में छुटती है। ये जनपद मरीचक संचित उपेक्षित औरते हैं जो मात्र संघर्षपूर्ण जीवन बिताती हैं। ऐसी परिस्थितियों में वे औरते किस प्रकार अपने आत्मविकास से लड़ते हुए संघर्ष करती हैं। कोख पर स्त्री के अविचार जैसे मुद्दे से इतरन भी इस कहानी में बहुत कुछ गुंसा है जो हमारी संवेदना को भीतर तक आंदोलित करता है। यह किला अस्पताल की व्यवस्था और समाज के भेद तरीकों को उजागर करते हैं।

शिल्पमूर्ति जी का अंखन हमेंरा से प्रामाण्य अधार्थ पर लिखने का कार्य किया वह स्त्री सत्तावितकरण के पक्ष में लिखे और अपने पात्रों द्वारा समाज के स्त्री महत्तुओं को उजागर कर दिया है। यह अन्य रचनाओं की तरह आम बोलचाल के शब्दों, मुहावरों व कहावतों का धड़ल्ले से प्रयोग करके अपनी भाषा को अत्यन्त स्थानाधिक सुपाह्य एवं रोचक बना देते हैं। उनका उद्देश्य सामाजिक मूल्यों की स्थापना का है। जहाँ बरन्धरा के प्रति विद्रोह की स्थिति है। इसमें उच्च पारम्परिक सिद्धांतों के दुर्नमूल्यांकन एवं नूतन मूल्यों के प्रतिपादन का है।

### Unit 5

1. इडिया इनसाइड पृष्ठ 20
2. पडी पृष्ठ 21
3. सुमी का कातू शिल्पमूर्ति पृष्ठ 26
4. पडी पृष्ठ 27
5. इडिया इनसाइड पृष्ठ 45
6. पडी पृष्ठ 24
7. इडिया इनसाइड पृष्ठ 25

\*\*\*\*\*

# वीक्षा

मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान की अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका

प्रधान संपादक

सदानन्द शाही

संपादक

बृजराज सिंह

कमल कुमार



लीकायत प्रकाशन

	हिन्दी कहानियों में लैंगिक रूप के विविध रूप	११०-१११
	राम शर्मा	
१	विष्णु अस्वत्थार की लड़िका	११२-११३
	सर्वेन्द्र सिन्हा	
२	'सिन्धु' की कहानी में जल जीवन	११४-११५
	कमलेश्वरी शर्मा	
३	सम्पन्न और गरीबी - 'अमृतो कुन्दलत अमी' की विविध संदर्भों में	११६-११७
	सोहन कुमार मिश्र	
४	कालाश्रम की आत्मकथा - 'हिन्दी जी' का उदात्त जीवनकाद	११७-११८
	डॉ. अशोक मिश्र	
५	'प्रतापसिंह' में उचितकालित जन्म-विकास एवं उस पर संस्थापक का प्रभाव'	११९-१२०
	सुरेशचन्द्र कुमारी शर्मा	
६	विद्यालय में लैंगिक का अध्ययन करने	१२०-१२१
	विजया मिश्र	
७	लाल अक्षर की कहानियों में लैंगिक जीवन	१२१
	की उचितकालित संवेदन/पुरुष संवेदन	
८	सुन्दर - सुन्दर जीवन	१२२-१२३
	अशोक मिश्र	
९	कहानी कहानी में लैंगिकी का विविध रूप में उदात्त जीवन का विविध	१२४-१२५
	विद्यालयी मिश्र	
१०	बेटी विद्यालय की की समस्याओं का लैंगिक जीवन	१२६-१२७
	रानी मिश्र	
११	अध्यात्म इन्द्र और संवेदन की कहानियों का तुलनात्मक अध्ययन	१२८-१२९
	सोहन कुमार मिश्र	
१२	सामान्य जीवन और पुरुष जीवन	१३०-१३१
	अशोक मिश्र	
१३	विद्यार्थी रूप में लैंगिक जीवन का	१३२-१३३
	डॉ. अशोक मिश्र	
१४	लैंगिक जीवन और लैंगिक विकास का	१३४-१३५
	उदात्त मिश्र	
१५	लैंगिक और उदात्त जीवन का प्रभाव	१३६-१३७
	सोहन कुमार मिश्र	
१६	अध्यात्म अध्ययन - लैंगिक जीवन	१३८-१३९
	डॉ. अशोक मिश्र	
१७	लैंगिक जीवन का अध्ययन - लैंगिक जीवन	१४०-१४१
	सोहन कुमार मिश्र	
१८	लैंगिक जीवन और लैंगिक जीवन	१४२-१४३
	सोहन कुमार मिश्र	
१९	लैंगिक जीवन और लैंगिक जीवन	१४४-१४५
	सोहन कुमार मिश्र	
२०	लैंगिक जीवन और लैंगिक जीवन	१४६-१४७
	सोहन कुमार मिश्र	
२१	लैंगिक जीवन और लैंगिक जीवन	१४८-१४९
	सोहन कुमार मिश्र	
२२	लैंगिक जीवन और लैंगिक जीवन	१५०-१५१
	सोहन कुमार मिश्र	
२३	लैंगिक जीवन और लैंगिक जीवन	१५२-१५३
	सोहन कुमार मिश्र	
२४	लैंगिक जीवन और लैंगिक जीवन	१५४-१५५
	सोहन कुमार मिश्र	
२५	लैंगिक जीवन और लैंगिक जीवन	१५६-१५७
	सोहन कुमार मिश्र	
२६	लैंगिक जीवन और लैंगिक जीवन	१५८-१५९
	सोहन कुमार मिश्र	
२७	लैंगिक जीवन और लैंगिक जीवन	१६०-१६१
	सोहन कुमार मिश्र	



## शिवमूर्ति के गाँव का बदलता यथार्थ

प्रियंका मिश्रा

भारतीय संस्कृति के मूल्यों को अपना ही सामान्य जीवन रहा है। जिसमें पारम्परिक पधार्थ में साध, भारत जीवन और स्वार्थ रहित। जन्ममरण में बदलने वाला प्रेम है जो बदलने समय का पधार्थ और कष्ट को समझती थी है।

वेदक युग के आदर्श में धर्मधर्म के रूप, राजनीति, समाज और धर्म व्यवस्था सभी बदलते आया। सन् ६० के बाद एकीकृत संस्कृति में कई बदलाव आये, बाबा, पारम्परिकता और औपनिवेशिकता को जगह नहीं तक, जो परंपरा है। सामान्य जीवन का पधार्थ परिवर्तित हुआ। आजकाल के बाद का भारत भी भी सामान्य भारत अपनी तथ्या विद्वेषताओं और

धर्मव्यवस्था हुआ है जो का बहाकाल है 'शिवमूर्ति'। सन् ६० के बाद का बाद प्रगल्भ और गुरु का जीवन ही है अपने बदलते समय के साथ वह शिवमूर्ति का गाँव भी है। जैसे जो कहा गया है कि— 'जिसमें जिस वर्ग या वर्ग में पैदा होता है। उसी को लोग, आदर्श व आकांक्षाओं को आगे बढ़ा कर लेता है और समाज में जो उसे मान-सम्मान, विस्मय-पूजा, प्यार, हिंस्र व भय जो सिखाता है, वही उसके अवलोकन का हिस्सा बन जाता है।'

शिवमूर्ति इसी बदलते समय के प्रयोग जीवन को जीने जाती है अतः इनके अवलोकन में भी बदलते समय के लक्ष्य पधार्थ को इनकी रचनाओं (कथा साहित्य) में देखा जा सकता है। आजकाल के बाद के गाँव का रूप अलग है। इसी विमता को उभरने अपने रचनाओं— 'कसाईबाड़ा', गिरिया-चरित, भारतवर्षम् गिरा उसका जोर, अकालपद, कथर-कम्पूरी आदि में संकलित किया है। इनके कथा उपन्यासों में आद्य को प्रयोग संस्कृति का संस्था अलग मिलता है। प्रेमगत के बाद आने वाला गुरु, राजनीति, गलत लोगों और शिवमूर्ति आदि ने कथानकों के भीतर गाँव को बहुविध संविधा का बहाकाल रखा है। उनमें पधार्थ को केवल खेतिहर किसान का पधार्थ समझने के अभाव, प्रयोग अवस्था में शामिल कई पधार्थ जैसे रबी-जीवन, अतिवाद, राजनीति छद्मता और आपसी ईर्ष्या आदि को कथाओं का आधार बनाया।

शिवमूर्ति को एक अति प्रसिद्ध कहानी 'गिरिया-चरित' है। जिसमें गाँव के जीवन का पधार्थ हर तरफ से दिखता है। एक लक्ष्य रबी की दारुण पीड़ा को उभर कथानों में व्यक्त किया गया है। जैसाकि लोकतांत्रिक सबसे बड़ी प्रभावी सत्ता रही है, परन्तु वही लोकतांत्रिक देश को सबसे कमजोर वर्ग के लिए क्या कर पा रही है। 'गिरिया-चरित' को नयिका बिल्ली अपने पैरे पर खड़ा होता जो जानती है, परन्तु पुरुष वर्ग के सम्बन्ध को भेदना नहीं जानती है। पारिवारिक संस्कार से बंधी रहती है, पितृसत्ता उसके सफल व्यक्तित्व के बनने में बाधा बनती है। एक रबी को अल्पनिर्भर बनने में देखती है और जब इस सफलता को पाने के लिए घर से बाहर जाती है तो स्त्रियों के लिए भयानक, असुरक्षित, बाँझ व चरित पर दया पैदा करने वाले संसार के रूप में चित्रित होती है।

'कसाईबाड़ा' और गिरिया-चरित से लेकर 'अखिरी छलाक' (उपन्यास) तक जो परिदृश्य है, वह सामकालीन भारत का पधार्थ रूप है। बाँझ, धान, कोर्ट, जाति-पति, किसान, दलित वर्ग, साम्प्रदायिकता, खेती-नौकरी पारिवारिक विफलता का जो एक सफ़र चित्र चित्रित होता है जो असुरक्षित और दण्डित है। प्रत्यक्ष का हल्लाबोल प्रशासनिक व्यवस्था से लेकर शिक्षा के क्षेत्र में भी फैलता गया है, जिसे 'भारतवर्षम्' कहानी में प्रस्तुत किया गया है। पधार्थ को गठ तो दूसरों से अपेक्षित होते हैं, परन्तु बदलते समय में एक संघुसा चरितार का

शोधार्थ (हिन्दू विभाग),  
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,  
वाराणसी



INDIRA GANDHI NATIONAL OPEN UNIVERSITY  
Staff Training and Research Institute of Distance Education  
New Delhi - 110068



Control No. 2201186A5

UGC-Approved Short-Term Professional Development Programme  
Under Pandit Madan Mohan Malaviya National Mission on Teachers and Teaching

This is to certify that

**BRIJ RAJ PRASAD GUPTA**

*S.V.P. College, Bhabua, (Kaimur), Bihar*

participated in and successfully completed the

**Professional Development Programme on  
'Implementation of NEP-2020 for University and  
College Teachers'**

*held from 21-29 September, 2022*

*and obtained 'A' Grade*

*Sanjiv K. Singh*

Prof. Santosh Panda  
Director, STRIDE &  
Coordinator of NEP-PDP Committee,  
Indira National Open

*Self attested  
Brij Raj Prasad Gupta*

New Delhi  
Date of Issue: October 03, 2022

*Rajendra Prasad Das*

Prof. Rajendra Prasad Das  
Pro-Vice Chancellor &  
Chair of NEP-PDP Committee,  
Indira Gandhi National Open  
University

21

# RESEARCH METHODOLOGY IN URBAN STUDIES

ADL Thesis

Julia Rosati Nishi (2023), Department of Geography, James Cook University, Townsville

ESM Service

Emma Satchell, James Cook University, Townsville

Bill Keenan

Director of Geography Studies, James Cook University, Townsville

## Introduction

The world is undergoing a rapid change. There are more than five thousand urban centers in the world, and the number is growing. The quality of urban life is the focus of urban studies. The evaluation of quality of urban life is a long and complex process. It is a process that requires a long and complex process. It is a process that requires a long and complex process. It is a process that requires a long and complex process.

Urban studies is a branch of research that seeks to understand the complexity and diversity of urban life. The field has grown significantly in the past few decades, and it is now a well-established discipline. Urban studies is a branch of research that seeks to understand the complexity and diversity of urban life. The field has grown significantly in the past few decades, and it is now a well-established discipline.

Urban geography is a branch of geography that seeks to understand the spatial patterns and processes of urban life. It is a branch of geography that seeks to understand the spatial patterns and processes of urban life. It is a branch of geography that seeks to understand the spatial patterns and processes of urban life. It is a branch of geography that seeks to understand the spatial patterns and processes of urban life.

*Adriana M. A. S.*





# Uttar Pradesh - Uttarakhand Economic Association

(Founded by Arthik Adhyayan Evam Shodh Vikas Samiti)

09<sup>th</sup> and 10<sup>th</sup> April 2021

## 16<sup>th</sup> ANNUAL CONFERENCE

MEMBER'S PROFILE

Employment Opportunities, Informal Sector and Out Migration of Workers in Uttar Pradesh and Uttarakhand

\*\*\*

Informal and MSME Sector in India : Present Status and Prospects

\*\*\*

Integral Humanism as a Model for Holistic Development



Uttar Pradesh - Uttarakhand Economic Association  
(Founded By Arthik Adhyayan Evam Shodh Vikas Samiti)

Organized By

Department of Economics and Rural Development & Institute of Fine Arts  
Dr. Rammanohar Lohia Avadh University, Ayodhya. (U.P.)

Self attested  
Signature

## A Geographical Study of Vindhyachal in Mirzapur City, India

♦ Author: Dr. Akhilesh Nath Mishra

Senior Lecturer and Head  
Department of Geography  
Yashwantrao Chavan  
University  
Dumfries, Nigeria

andrew2000@gmail.com

### Abstract:

Vindhyachal is a very famous pilgrimage and tourism site in the west of Mirzapur city, Uttar Pradesh State, India. The main city in east is a commercial centre for cotton, wool, steel and carpets. Among the Hindu population, it is believed that the primordial creative forces of the GOD and the power of the GODDESS took respective triangles which superimpose opposite to each other as hexagram at a point or node (Brahma (yami) + Parvati (kashi) or Vaidhyasani, located in a point/node) in Vindhyachal. The region has served as a natural connecting point between north and south India. Before independence of India from Britain in 1947, it was a flourishing commercial centre. Post-independence, the negligence of planning authorities and influx of bureaucrats and politicians started affecting its development. In the meantime, emergence of new industrial cities in Varanasi, Agra, Moradabad, etc., nearer to the capital city of Delhi, posed serious challenges to the development of this small city as many commercial and business enterprises along with the skilled workforce started shifting to these new cities or to the relatively bigger neighbouring cities of Varanasi in east and Allahabad in west. In the present context, the significant critical issues and challenges in development of

Vindhyachal is discussed with geographical perspective. An attempt is being made to find out the ways to restore the lost glory of the city as a centre of pilgrimage, tourism and commerce.

Keywords: Commercial centre, Cultural node, Pilgrimage, Tourism, Heritage, Growth

Self Motivated

Akhilesh Mishra

25/10/21



# GIS and Remote Sensing in Urban Development Planning: Issues and Challenges of Developing World

Dr. Akhileendra Nath Tiwary

Senior Lecturer and Head, Department of Geography, Yobe State University, Damboa, Yobe, Nigeria

**Abstract:** Urban Planning involves objective or target based process adopted for sustainable urban development. It involves analyzing and predicting the urban environment quantitatively and qualitatively to identify and evaluate alternative policy options leading to a beautiful urban living environment. The quantitative increase in the number of urban centers and populations do not suffice the goal of planning [1]. In the developing countries in spite of the increase in the number of cities and the urban population, quality of urban life is not standard. For a good quality of life in the cities, smart planning is required. Here GIS (Geographical Information System), GPS (Global Positioning System) and RS (Remote Sensing) come handy as necessary tools and techniques in urban development planning. The digital maps prepared with the help of such modern techniques are scale free. Thus, they can be superimposed to study physical, social, cultural and economic phenomena. The lack of expert and skilled human resources in the use of new technology of GIS, GPS and Remote Sensing in the developing or under developed world is making things difficult. All the softwares and hardware required by them are imported from developed countries which are less user friendly and developing world is totally dependent on developed world for any technical assistance. An attempt has been in this research paper to discuss the issues and challenges encountered in adoption of the modern tool and techniques of GIS, GPS and Remote Sensing in better planning for the urban development in developing world.

**Keywords:** Sustainable urban development, GIS (Geographical Information System), GPS (Global Positioning System), RS (Remote Sensing), urban planning, developing world

## 1. Introduction

Cities are nodal points for socio economic activities. They create job opportunities and other means of livelihood. In developed world, urban development rates are constant or decline due to regular settlement patterns and relatively stable population. In contrast, developing countries are still industrializing and urbanizing, as they are just beginning to face the additional challenge of making their development sustainable for the long-term [2]. Urban Planning involves objective or target based process adopted for urban development. It involves analyzing and predicting the urban environment quantitatively and qualitatively to identify and evaluate alternative policy options leading to a beautiful life. The feedback mechanism of the planning process ensures sustainable urban development (Fig. 1) A good research methodology adopted in urban geography provides a dynamic platform for the sustainable living environment. The research methodology adopted for studying the cities require both historical and scientific techniques. Urban development plan requires a multidisciplinary approach involving the specialized people from the diverse field of development planning, management, engineering, architecture, economics, accounts, history, sociology, geography, environment, policy formulation, public administration, statistics, demography, law, psychology, computer sciences, information and communication technology etc. In order to understand the need of the city, a humanistic approach is required to understand the people their problems and requirements.



Figure 1: Urban Development Planning Process

## 2. GIS and Remote Sensing in Urban Development Planning of Developing World

GIS and Remote Sensing are modern tools and techniques for efficiently working in urban development planning with some limitations of availability and inefficiency of reliable data. The digital maps thus prepared are scale free which can be superimposed to study physical, social, cultural, economic

Registration No. UGC/HRDC/2018/11

Certificate No. 10



# University Grants Commission

## Human Resource Development Centre (HRDC)

### Patna University, Patna



## 80<sup>th</sup> Orientation Programme

This is to certify that Brij Raj Prasad Gupta, Assistant Professor

Department of Economics, Sarva Vallabh Asha Patel College, Bhakna Kalmit, Vastu Kamesh Singh University, Jax, Participated in  
the 80<sup>th</sup> Orientation Programme, held from 06/09/2018 to 03/10/2018, has obtained Grade

A

Chandran  
(Professor Chandran Singh)

Director

UGC-HRDC Human Resource Development Centre,  
Patna University, Patna

Self attested  
Brij Raj Prasad Gupta

Prashant Kumar Singh  
(Professor Rash Mishra P.K. Singh)  
Vice-Chancellor  
Patna University,  
Patna

Patna, Wednesday, the 17<sup>th</sup> of October, 2018

Grade: A 75% and above B 60% to less than 75% C 50% to less than 60% D Below 50% (Discontinued)

## Chapter 23

# Spatial Structure and Urban Development in Indian Cities

P.R. Sharma, Akhileendra N. Tiwary, and G.N. Singh

**Abstract** If geographic space is considered as a set of interacting elements or phenomena, spatial structure must be understood on the principle of organization of the geographic entity under study. The spatial structure leads to a systematic theoretical setup as well as formulation of geographic models and development plans. This analysis aims to arrange urban public spaces judiciously, so that such factors as functional morphology, accessibility, connectivity, environmental sustainability, social equality and security, cultural creativity, and economic productivity are ensured. The spatial arrangements of both differentiations and similarities in the real world are interpreted in the spatial structures by geographers. Spatial structure in the urban setting in general and for the developing world in particular has great significance. The developing world is urbanizing every day. The existing models of spatial structure do not signify the real developing world. Therefore, it is needed to have a model of spatial structure for the development planning of this world. The present study concentrates on the urban development of Indian cities, taking as case studies Lucknow and Mirzapur City, both in Uttar Pradesh, India. The former is the capital of Uttar Pradesh State, the latter is a very ancient city having a long cultural heritage.

**Keywords** Developing world • Heritage city • Public-private partnership • Spatial structure • Sustainable urban development • Urban development and planning

---

P.R. Sharma (✉)  
Department of Geography, Banarus Hindu University, Varanasi, Uttar Pradesh, India  
e-mail: prsharma1950@gmail.com

A.N. Tiwary  
Department of Geography, Yobe State University, Damaturu, Yobe State, Nigeria

G.N. Singh  
SAPS College, Bhairatnagar, Varanasi, UP, India

© Springer Science+Business Media Dordrecht 2016  
A.K. Dutt et al. (eds.), *Spatial Diversity and Dynamics in Resources and Urban Development*, DOI 10.1007/978-94-017-9788-3\_23

477

self attested

Akhileendra Nall Tiwary  
25.10.21

# UNIVERSITY GRANTS COMMISSION




## UGC - HUMAN RESOURCE DEVELOPMENT CENTRE UNIVERSITY OF ALLAHABAD


### UGC SPONSORED Refresher Course

#### CERTIFICATE

This is to certify that Mr. Brij Raj Prasad Gupta, Assistant Professor in Economics, Sardar Vallabhbhai Patel College, Bhabua (Kaimur) affiliated to Veer Kunwar Singh University, Ara, Bihar participated in the Online "Refresher Course in Economics" from September 25, 2021 to October 08, 2021 and obtained Grade A.

This programme was conducted through online live video lectures.

  
(Prof. J. A. Ansari)  
Director

  
(Dr. Javed Akhtar)  
Coordinator

  
(Prof. N.K. Shukla)  
Registrar

Self attested  
Brijraj Gupta

# Histogenesis and Development of Mirzapur City

P. R. Sharma and Akhilendra Nath Tiwary

The significance of urban heritage of Mirzapur city has histogenetic linkage with 'Vindhyachal Devi', an ancient mythological site nearby the existing city. Mirzapur city is situated on the southern bank of river Ganga in Eastern Uttar Pradesh. In the *Vindhya Mahatmya* of *Brihad Aushwah Puran*, the city finds its earliest mention as Vindhya Kshetra as the city where the Goddess of wealth (*Maha Laxmi*) resides. The name 'Mirza' is made of two words *Mir* (Sea) + *Za* (Outcome), i.e., *MahaLaxmi*. The city expanded eastwards with time and during medieval period it was identified as Kantit, which expanded further in the east of river Gjhala during the British period. During medieval period the city was at its peak of glory. The Great Deccan Route passing through the city facilitated the trade of cotton, lac, shellac and indigo which were brought from south and were sold in the northern India via the river ports located on the ancient sites, which were well known cities. The carpet, dye and metal ware industries flourished in the city during the Mughal period. During Post-independence, the city lost its glory in trade and commerce due to negligence. The development of the city has been stagnant since Independence. This paper highlights the histogenetic evolution and development of the city. The objective of the present paper is to study the historical significance of the city in socio-economic and cultural perspective with its urban heritage in a globalizing world.

**Key words :** Histogenesis, urban development, urban heritage, cultural heritage management, heritage city, heritage tourism, urban landscape.

## Introduction

Urban Geography has been studied with three dimensions – urban Histogenesis and evolution, urban land use and morphology and urban planning (Sharma et al, 2005). This paper refers to the Histogenesis and development of urban landscape of Mirzapur city which has linkage with 'Vindhyachal Devi', an ancient mythological site nearby the existing city. Mirzapur city ( $82^{\circ}30'E - 82^{\circ}36'30"E$  and  $25^{\circ}11'15"N - 25^{\circ}7'15"N$ ) is situated on the southern bank of river Ganga in Eastern Uttar Pradesh. Mirzapur city in its present form

is the product of colonial period, although the Vindhyan region in the west has very long history. The mention of Vindhyan region can be found in almost all the Ancient Indian chronicles epics and literatures. The earliest mention of the city can be found in the writings of Tieffenhaller (1760-1770). He called it Mirzapur a great mart. Jonathan Duncan (Resident of Varanasi) too mentioned the name of the city frequently in his writings (Narain, 1959). It is also believed that the present city was founded by Raja Nanner at Girijapattan village (Girija=Goddess Parvati in Hindu Religion) in the east of Vindhyanchal

Dr. P. R. Sharma is Professor and Ex-Head, Department of Geography, Banaras Hindu University, Varanasi, U.P., India.

Akhilendra Nath Tiwary is UGC-Senior Research Fellow, Department of Geography, Banaras Hindu University, Varanasi, U.P., India.

*National Geographical Journal of India* (ISSN : 0227-9374), Vol. 54, Pts. (3-4), Sep.-Dec., 2008 : 65-78

Self Attested

Akhilendra Nath Tiwary  
25.10.21



Bhatter College, Dantan was live.

30 Apr at 10:59 AM

A Special Lecture by Dr. Akhilendra Tiwary will be delivered through Facebook Live on "Transition from cosmography to scientific geography (Verenius and Kant)

Dualism and dichotomies (general Vs particular, physical Vs human, Regional Vs systematic, determinism Vs possibilism, idiographic Vs nomothetic)" today at 11am from the page of Bhatter College page.



Watch together with friends or with a group [START]

105 27 Comments • 20 Shares

Like Comment Share

5,224 people reached Boost Post

*Self Mashed  
Akhilendra Nath Tiwari  
25/4/21*

# Transformation of Infrastructure Facilities for Urban Development of Mirzapur City

**Keywords:** Infrastructure facilities, civic amenities, sustainable urban development and tax-free municipal bond.

## Introduction

Sustainable urban environment of a city requires good living environment with provision of physical infrastructure, clean air and water, power, management of sewerage, drainage and solid waste and other civic facilities and amenities. It reflects the quality of life in the urban community. The national development plan can't be successful without incorporating a sustainable urban development plan in it, as two-thirds of the national economy is contributed by the urban sector. In India, large cities are the focus of urban policies and programmes (Mahadevia 1999), though poverty is concentrated in the small towns (Dubey and Gangopadhyay 1999), which also have lower levels of basic services than the large cities. The larger cities very easily get integrated into the global system and the smaller towns into the local economy, with no continuum between the two (Kundu 1999). Therefore, it is important to focus on the development of the small cities like Mirzapur. The city has long histogenesis and famous as the cultural node of Vindhyanchal as well as trade and commerce of carpets and metal ware.

## Statement of the problem

The city faces the problems in the form of poor infrastructures, overcrowding, traffic congestions, environmental pollution, and urban resource mismanagement. The civic authorities have failed to formulate and implement plans for urban renewal and development in time. Public Works Department (PWD), Town Planning Department, Mirzapur Municipal Board (MMB), Jal Kal (Water Board) and Mirzapur-Vindhyanchal Development Authority (MVDA) lack coordination which aggravates the planning problems.





### CHALLENGES OF SUSTAINABLE LIVING ENVIRONMENT IN DANLATURU TOWN, YOBE STATE, NIGERIA

Abdulkadir Nath Tiwary

Faculty of Social and Management Sciences

Yobe State University, KM 7 Gajala Road, PMB 1144, Damaturu, Yobe State, Nigeria

Email: [anthary2000@gmail.com](mailto:anthary2000@gmail.com); +2348185218674 and +2347082998224

#### ABSTRACT

Urban development of the world in last three decades is phenomenal. It has risen from less than 20% to more than 54% and likely to cross 75% by 2030. Today, majority of urban research are focused on big metros of developed countries, ignoring the fact that vast urban population live in small and medium cities of developing countries. Globalization has accelerated urbanization in the developing world, but at the cost of their living environment facing numerous challenges of sustainability viz; lack of basic amenities and facilities, health, education, poverty, environmental degradation, etc. The present study attempts to find out major challenges towards sustainable living environment of Damaturu town in Yobe State, Nigeria. Total number of 122 respondents were selected by systematic random sampling for questionnaire based survey in three sample wards of the town representing 10% of the total 1200 housing units. Personal interviews with the civil servants, lawyers, academicians, politicians and NGOs were also conducted for identification of major problems and challenges. The research finding recommends shifting the policy approach from centralized to bottom up with common people's participation based on their needs and demands. Community based development projects should focus on major areas of water, electricity, housing, drainage & sewerage and waste management for ensuring a sustainable living environment.

**Keywords:** Urbanization, people's participation, sustainable development goals

#### INTRODUCTION

Rapid urbanization of the world will cross urban population as more than 50% of the world population by next decade. In Africa, transformation of rural population to urbanizing society with limited infrastructure amenities and facilities are posing considerable stress on living environment. The problems are aggravated with inadequate urban development plan. Africa's urban transition is partially accompanied by economic growth derived mainly from non-agricultural value-added, the growth is largely unsustainable, and far below the level required to significantly reduce poverty levels, as urban areas spread at the cities' peripheries, the core areas break down with the burden from increasing demand for social services, which consequently become homes of the poor, and the sites and sources of environmental pollution (Fasides, 2005). As the world's cities absorb tremendous growth in human population, housing and public services in these areas have not kept pace, particularly in less developed countries where overall population growth is more pronounced and urban crowding is most severe (Olatun, 2014). Over 40% Nigerians now live in urban centres of varying sizes (Olivus and Sobadaye, 2009). The explosive rates of growth have

complicated and exacerbated inter-related problems of human settlements and environment, but have also greatly accelerated poverty (Oladunjoye, 2000). In 1951, 6.7 per cent of Nigerians lived in urban centres, that is settlements with populations of 20,000 and above. The proportion rose to 10.2 per cent in 1952; 19.2 per cent in 1961, 25.1% in 1972, 32% in 1984 and 42% in 1991 which was to reach 60% by 2020 (Olatun, 1987a; 1989; 1990a). According to World Data Atlas (2017), the urban population has reached 42.10% of the total population in Nigeria. Nigeria as a developing country appear to be facing a more rapid rate of urbanization, mainly as a result of rural-urban migration. Imboye (2002) has written about today's Nigerian cities characterized by substandard and inadequate housing, slums, and lack of infrastructure, transportation problems, low productivity, poverty, crime and juvenile delinquency. Damaturu is a relatively new town serving as the capital of Yobe state which was carved out for Borno State in 1991. The rapid growth of Damaturu accompanied by desire for building spaces to meet the urgent need for residential, commercial and public buildings have undoubtedly led to unhealthy urban growth (Daura et al, 2010).

*Self-Authored  
Abdulkadir Nath Tiwary  
26/11/21*

## Appraisal of People Centric Sustainable Development Goals in India

**Dr. Akhilendra Nath Tiwary**

Asst. Professor & HOD  
Dept of Geography  
SVP College, Bhabhua, Kaimur  
V.K.S.U, Bihar

**Dr. Meeta Ratawa Tiwary**

Former Reader of Geography  
Dept of Geography  
Yobe State University, Nigeria

### Introduction

The success of AGENDA - 21 in achieving social, economic and environmental goals by all the countries of the world, a post 2015 agenda was adopted known as AGENDA - 2030 w.e.f. 1<sup>st</sup> January 2016 to be achieved by 2030. It had also undertaken complex political issues of peace and partnership. Now the comprehensive meaning of development is sustainable development. In the current paper, an appraisal of people centric five Sustainable Development Goals has been done by SWOT analysis based on data available from 2015-16 to 2019- 2020. among the major findings; good progress in agriculture and rural sector vulnerability of children below five years of age, women in reproductive age (15-49 years) and aged population (above 60) give a red signal and alarm the policy makers to take immediate action to solve the problem. Another serious issue is drug addiction, alcohol and tobacco consumption and increasing stress and crime rates especially against women. Among major recommendations, increasing ICT based services of marketing, credit and health coverage in rural areas, gender sensitization and women empowerment, regular training to ANM, ASHA, Anganvadi and health workers, better testing health facilities, improving educational infrastructure are given. Both UPA and NDA government have done wonderful job so far. Some lacuna could be filled as found and suggested in the chapter.

In order to achieve Sustainable Development Goals by 2030, India has to relook its current development approach and make certain effective policy measures if it has to achieve sustainability. The present paper is an appraisal of the

*Self & Meeta*  
Akhilendra Nath Tiwary



**Development Studies in Geography: Concepts and Approaches**

**Abdulkadir Sadi Tijeri**

Yobe State University, Nigeria

*Abstract: Development studies originated from the field of economics, not today, it has become highly*

*globalization and sustainable development. The purpose of the present paper is to provide a concise study material on concepts and approaches of development with geographical perspectives for graduate students of Geography all over the world. They face many problems while choosing the study materials in limited time frame and different views of development based on the place of their origin or residence.*

**Key Words:** Sustainable development, safe off, merkel's plan, neo-classicism, radical, globalization

**CONCEPTS**

Development is a process of overall growth and improvement of person, place or thing. It is often taken interchangeably with growth but the latter may go negative in absence of any institutional support or agency with some caution. Rosenthal (1975) notes this stance when he defines development as "the whole process of change brought about by the creation and expansion of an interdependent world system" [1]. According to Todaro "Development is not purely an economic phenomenon but rather a multi-dimensional process involving reorganization and reorientation of value economic and social system." Development is process of improving the quality of all human lives with three equally important aspects. These are:

- Raising peoples' living levels, i.e. income and consumption, levels of food, medical services, education through relevant growth processes.
- Creating conditions conducive to the growth of peoples' self-esteem through the establishment of social, political and economic systems and institutions which promote human dignity and respect.
- Increasing peoples' freedom or choice by enlarging the range of their choice variables, i.e. varieties of goods and services [2].

**APPROACHES**

Development Studies prior to the world war period was basically concerned about economic development theories. With the time, different approaches evolved expanding the scope to multiple disciplines and diverse areas of research. It can be understood under the following phases:

**1. Classical Phase**

Influenced from neoclassical theories, Classical phase started in 18th Century and covered the longest time phase upto world war period of 1840s. Adam Smith, David Ricardo and John Stuart Mill, and the fourth, the unorthodox Herbert Marshall were most significant contributors of this phase. They wrote specifically about the theory of value, distribution theory and international trade. So, Marx studied the same matters, although with different conclusions and defending the working class, which makes him a classical economist in the eyes of some historians. Thanks to these authors, the study of economics became more of a science, instead of just being some kind of philosophy [3]. The theories of the classical school, which dominated economic thinking in Great Britain until about 1870, focused on laissez-faire growth and economic freedom, stressing laissez-faire ideas and free competition. Many of the fundamental concepts and principles of classical economics were set forth in Adam Smith's An Inquiry into the Nature and Causes of the Wealth of Nations (1776). According to Smith, free competition and laissez-faire would ensure greatest a nation's economic growth. The community benefits most when each of its members follow their self-interest. In a free economy, individuals make a profit by producing goods that other people are willing to buy. Individuals spend money for goods that they want in their need. Smith demonstrated cooperative buying and selling translated into an orderly system of economic cooperation. This system evolves through the process of individual choice as opposed to central direction. Smith introduced the rudiments of a theory of value and a theory of distribution in analyzing the functions of free enterprises. Ricardo beautifully analyzed in his Principles of Political Economy and Taxation (1817) that the value of goods produced

*Abdulkadir Sadi Tijeri*

## Problems and Prospects in Development of Non Renewable Energy Resources in Yobe State, Nigeria

Abdulsalam Nalle Tinari

Senior Lecturer and Head, Department of Geography, Yobe State University,

Damboa, Yobe State, Nigeria

**ABSTRACT:** Nigeria has one of the lowest electricity generation per capita rate in the world resulting in shortage of power supply and heavy dependence on fuel kerosene (75% of total). At present, only 10% of rural households and 20% of the country's total population have access to national power grid electricity. Separate research conducted by Energy Commission of Nigeria and Global Energy Network Institute (GENI) have concluded that 100% viable power supply from renewable energy is possible in Nigeria. Yobe State (relatively rural and under developed state) is located in North Eastern part of Nigeria with Damboa as state capital. The capital itself is facing serious power crisis, not getting even an hour of electricity from the national power grid. In the present paper, the researcher tries to find out significant problems and future prospects for development of these resources in Yobe State. The region is highly under developed owing to lack of basic infrastructure facilities and political instability due to insurgency of Boko Haram (a terrorist group in north western Nigeria). The region is dry and windy which has good prospects of developing three renewable energy resources, i.e., solar, wind and biomass. The study tries to find out the viable means to harness these energy potential. Among the major challenges in adoption of these resources include: lack of political will, Boko Haram insurgency and finance. The collaboration of private players (mainly oil companies of southern Nigeria), international funding and aid agencies, both local and federal government and local people should come forward to adopt these renewable resources. For adoption of these alternative sources of energy, creating awareness and little training to local people is required.

**Key Words:** Alternative energy, Renewable energy resources, off grid electrification, solar, biomass

Self Attached  
Abdulsalam Nalle Tinari  
25/10/16

JOMAC

Abstract for the book, "An Appraisal of Urban Development and Histogenesis: A Case Study of Metropolitan Atlanta." The book is a historical study of the city of Atlanta, Georgia, from its founding in 1847 to the present. It examines the city's growth and development, focusing on the role of the railroad and the city's position as a major center of commerce and industry in the South. The author, Dr. Arthur M. Lewis, Jr., is a leading authority on the history of Atlanta and the South. The book is available in paperback for \$14.95 and in hardcover for \$24.95. It is published by the University of Georgia Press.



Dr. Arthur M. Lewis, Jr.

# An Appraisal of Urban Development and Histogenesis

A Case Study of Metropolitan Atlanta

1



Dr. Arthur M. Lewis, Jr. is a leading authority on the history of Atlanta and the South. He has written several books on the subject, including "An Appraisal of Urban Development and Histogenesis: A Case Study of Metropolitan Atlanta." He is currently a professor of history at the University of Georgia.

Dr. Arthur M. Lewis, Jr.



*Seymour M. Hersh*  
New York, N.Y.  
April 10, 1984





## Master Plan Approach in Urban Development: A Case Study of Mirzapur City, Uttar Pradesh, India

Dr. Ashwindra Nath Tiwary,

Senior Lecturer and Head, Department of Geography, Yobe State University,  
KM-7, Gajda Road, PMB- 1144, Damaturu, Yobe State, Nigeria.  
Mobile no. +234 8195218874. Email: antwary000@gmail.com

### Abstract

Master Plan is a long term perspective plan which deals comprehensively with the significant aspects of urban development. Mirzapur city (25° 11' 35" N and 82° 30' E – 82° 50' 30" E) is located along the southern bank of the Ganges River in Eastern Uttar Pradesh, India. It is a small Indian city [Area: 38.85 Sq. km and Population: 253,601 (Census of India, 2011)]. National Highway 7 (known in India between Kashmir in North to Kanyakumari in South) passes through it and provides an advantageous meeting point between North and South India. Besides these, five ancient cities lie East (Varanasi or Ayatna Kashi) and West (Allahabad or ancient Prayag) of it. Both of the cities are highly developed in almost all the spheres of politics, social, economic, cultural and administration. In spite of its centrality, Mirzapur city seems to lack any advantage from these cities. The secular culture of city is represented by general co-existence of the communities of Hindu in *Pradhanshal* and Muslim in *Khati Sharif*. The city has been famous for its carpet and handloom industry ever since the middle periods [16<sup>th</sup> century]. There are many beautiful natural spots and hills on the outskirts of the city as *Budheri, Dewber, Lakshmyadari, Winkon falls, Sherki* etc. River Ganges has been the life of this city. The city is in a very sorry state today. The development of the city is almost stagnant since last five-six decades. Although there is a master plan prepared by Mirzapur Sociospatial Development Authority, but it has not helped the urban development. The present paper is based on the study of the Master plan of the city with focus on finding significant problems and challenges. The study concludes with the major findings and recommendations for the sustainable development of the city.

**Key words:** urban development, master plan, urban planning, sustainable development, Public Private Partnership, peace and security, heritage, centrality, administration.

### Introduction

The master plan of a city is identified as a foremost instrument in resource management and physical development of the city. It is a model for future development of the city. It classifies the class and quality of the land use to be sustained at specific space and time. The importance and utilization of public and private spaces are identified well in advance. It becomes a reference material in civic and judicial matters. The problem with master plan is that it is more centralized in approach, but avoiding many public interests at large. If more public participation is encouraged, the problem could easily be solved. Master plans are spatial or physical plans which depict on a map the state and form of an urban area at a future point in time when the plan is realized. Planning was viewed as a technical activity, developing comprehensive plans showing the projected density and intensity of various land uses and their spatial distribution (Wainoo, 2008). They emerged in part as a method of long-term planning for infrastructure, services and public investment in the relatively slow growing cities of developed countries (Clarke, 1997), but proved to be inappropriate in the context of rapid urbanization and change in developing countries. In countries where data sources were poor, they took years to produce and were soon out of date. Even in developed countries, unexpected changes in the economy and in the size and type of households in the 1970s undermined this type of planning (Hensley et al., 1997). There have been significant efforts in India over the past two decades to devolve power

Self Thanks  
Ashwindra Nath Tiwari  
25.10.20



# विंध्याचल का भौगोलिक अध्ययन और विकास-योजना

डॉ. अखिलेन्द्र नाथ तिवारी, डॉ. मीता रत्तावा तिवारी\*

## परिचय

विंध्याचल मिर्जापुर शहर के पश्चिम में स्थित एक प्राचीन हिन्दू धार्मिक स्थल है। यहाँ भक्तानी की उपासना की जाती है। इस स्थान को विंधुवासिनी अर्थात् तीन देवि स्थानों के प्रथम स्थित विंधु भी माना जाता है। विंध्य क्षेत्र का उल्लेख सभी प्राचीन भारतीय इतिहास की पुस्तक में पाया जाता है। यह ऐतिहासिक स्थान प्राकृतिक सौन्दर्य, पहाड़ियों, नदियों, झरनों और वन जीवन से घिरा हुआ है। १९९२ में, कलकत्ता में, तीसरे हिन्दी साहित्य सम्मेलन में, प्रसिद्ध कवि और लेखक चौधरी बदरी नारायण 'प्रेमधन' ने 'मिर्जा' शब्द की व्याख्या मोर = जल (सागर) और जा = उत्पन्न अर्थात् 'लक्ष्मी' के रूप में की। मेले और त्यौहार इस शहर के लोगों के लिए जीवन का एक तरीका है। शहर की ऐतिहासिक और सांस्कृतिक विरासत के बीच कला और सौन्दर्य शास्त्र, मेले और त्यौहार, कजली-अखाड़े और प्रसिद्ध कलाकारों के साथ लोकगीत शहर को पहचान है। विंध्य शिखर और उस खजाजा बनाम इस्माइल चिरती रोमनतुल्य का पवन स्थान, लोगों और शहर के धर्मनिरपेक्ष, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक विरासत का चिह्न है। महत्वपूर्ण मेलों और त्यौहारों में शामिल कजली बरसात के मौसम में, वार्षिक नवरात्र मेला फरवरी-मार्च में और शारदीय नवरात्र मेला अक्टूबर-नवंबर में, अक्टूबर में ठस, कजली नवरात्र मेले नवंबर, सोहंदा महाशिव मंदिर में कार्तिक पूर्णिमा और श्रावण के प्रत्येक त्रिनिवार को सोहंदा मेला लगता है। चैत व शारदीय नवरात्र के भी दिनों तक विशाल मेला लगता है। इस मेले में २५ लाख से भी अधिक श्रद्धालु पहुँचते हैं। 'कजली' संस्कृत शब्द कजल से बना है, जिसका अर्थ है- काला बादला साथ ही; देवी विंध्यावासिनी, जो बाल रूप से आँखों में कजल धारण करने की वजह से कजरवा या कजरी भी कही जाती है। कजली तीज और कजरवा मेला बहुत ही धूम-धाम से मनाया जाता है। 'कजली तीज' अगस्त-सितंबर के महीने में छद्म कृष्ण तृतीया को मनाया जाता है। प्रसिद्ध कजली के अखाड़े बहुत प्राचीन काल से प्रसिद्ध हैं। सभी कजली अखाड़ों में गापन की अपनी विशिष्टता है। इन अखाड़ों ने देश के स्वतंत्रता-संग्राम में और सामाजिक बुराइयों के खिलाफ लोगों को जाग्रत करने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाईं। श्रीमद्भागवत में विंध्य क्षेत्र को सर्वोत्तम कहा गया है- 'विंध्यांचल निवासिन्ध स्थानम् सर्वोत्तमम्' प्रमुख समस्याएँ

१. शहर का भौतिक विकास बेतरतीब और अनियंत्रित है।
२. लोग शहर की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के प्रति लापरवाह हैं। शहर में हेरिटेज इमारतों, स्थलों और नदी घाटों पर अवैध अतिक्रमण हो गए हैं।

\* सहायक आचार्य एवं अध्यक्ष- भूगोल विभाग एवम् सचिव, शिक्षक संघ, सरदार वल्लभ भाई पटेल महाविद्यालय, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा। भूतपूर्व सहायक आचार्य और विभागध्यक्ष-भूगोल एवम् उप संकायाध्यक्ष सामाजिक और प्रबंधन संकाय, गोबे स्टेट यूनिवर्सिटी, नाइजोरिया

\*\* सहायक आचार्य- भूगोल विभाग, नेहरू ग्राम भारती मानित विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश। भूतपूर्व सहायक आचार्य- भूगोल, गोबे स्टेट यूनिवर्सिटी, नाइजोरिया

नमन (अर्द्धवार्षिक) वर्ष १४ : अंक २५

Self Reflection  
Akhilendra Nath Tiwari

१९२

ISSN : 2229-5585

ISSUES AND CHALLENGES IN SUSTAINABLE URBAN  
DEVELOPMENT: A CASE STUDY OF MIRZAPUR CITY, U.P., INDIA

Dr. Abhilekha Nath Tiwari

Senior Lecturer and Head,  
Department of Geography,  
Yobe State University, Damaturu, Yobe, Nigeria.

ABSTRACT

Urban Planning involves objective or target based process adopted for sustainable urban development. It involves analyzing and predicting the urban environment quantitatively and qualitatively to identify and evaluate alternative policy options leading to a beautiful urban living environment. The quantitative increase in the number of urban centers and populations do not suffice the goal of planning. In India, there is marked increase in the number of cities and the urban population, but in reference to the quality of urban life, it gets a big question mark. When sustainability in terms of good living environment comes, many serious questions arise with no responsible agency or authority to answer. Presently there are 7,925 cities and towns in India [Census, 2011], which have increased by 2,774 in number since last decadal census of 2001. The total urban population in the country as per Census 2011 is more than 377 million constituting 31.16% [27.8% in Census, 2001] of the total population with 53 million cities [25 in census, 2001]. The living environment of Indian cities is deteriorating fast owing to inefficient land use, increasing number of automobiles, heavy pollution, unmanaged waste disposal, poor quality of housing, water, sanitation, hygiene etc. Detachment of local community in urban development has made the issues worse. The present case study is based on Mirzapur city (25° 11' 13" - 25° 2' 15" N and 82° 30' E - 82° 16' 30" E) situated on the southern bank of the Ganges river in Eastern Uttar Pradesh, India. It is a small Indian city (Area: 38.85 sq. km and Population: 233,691 [Census of India, 2011]) which despite its urban status since more than a century and being district headquarter, is showing no significant change in sustainable living environment of the city. It has almost all the resources required for the sustainable urban development. The beautiful city is in a very sorry state owing to negligence of local people in planning and a very strong nexus of corrupt politicians, businessmen and bureaucrats at the top. The secular culture

Prof. Abhilekha  
Abhilekha Nath Tiwari  
25.10.21



## URBAN DEVELOPMENT OF NORTHERN NIGERIA: A CASE STUDY OF NGURU IN YOBE STATE

Dr. Akhilendra Nath Tiwary\*

Kubura Abdulhamidu Nuhu\*\*

**Abstract:** Urban Development of Northern Nigeria is a big challenge due to serious security situation and lack of government will to implement the development plans. The present study is based on the appraisal of the only master plan of Nguru (1976) prepared by Maxlock group. There is no new master plan since last four decades. Nguru town is headquarter of Nguru Local Government Area (LGA) in Yobe state, northern Nigeria. It is located near river Hadejia at  $12^{\circ}52'45''N$  to  $10^{\circ}27'09''E$ . It has population of 150,632 (Census, 2006) and an area of 916 sq. km. The town is comparatively younger developed on a rapid grid-iron pattern during 1930s. The topography of Nguru is mainly flat with a variety of landscapes as: Hadejia-Nguru wetlands of Nguru Lake and the Sand dunes around machine road. Nguru has hot and dry climate throughout the year. The economy of the town is based on trade and commerce of gum Arabic, groundnut, meat, hides and skins. The present paper is an appraisal study of Nguru master plan. The most significant problem of the study area is lack of effective implementation of the master plan. Extensive field work has been carried out amidst volatile security of the area. Among the major findings, the issues of land use are predominant along with poor plan implementation and lack of people's participation in the planning process. Some of the major recommendations based on the research findings include; strong financial support from government, strong administrative set up with trained professional from multiple disciplines and people's active participation in planning.

**Key words:** urban development, sustainable development, living environment, master plan, urban planning, Public Private Partnership, peace and security, Local Government Area.

\*Senior Lecturer and Head, Department of Geography, Yobe State University, Damaturu, Yobe State, Nigeria.

\*\*Pioneer Graduate Student of Department of Geography, Yobe State University, Damaturu, Yobe State, Nigeria

**A Geographical Study of Slums in  
Mumbai City (A Case Study)**

The geographical study of slums in Mumbai City is a complex task. It involves the study of the spatial distribution of slums, their growth, and the socio-economic conditions of the slum dwellers. The study is based on the data collected from the Census of India, 2001, and the Mumbai Urban Region (MUR) Survey, 2001. The study is divided into three parts: (i) a general introduction to the study, (ii) a detailed study of the slums in Mumbai City, and (iii) a conclusion and suggestions for the improvement of the slum conditions.

The study is based on the data collected from the Census of India, 2001, and the Mumbai Urban Region (MUR) Survey, 2001. The study is divided into three parts: (i) a general introduction to the study, (ii) a detailed study of the slums in Mumbai City, and (iii) a conclusion and suggestions for the improvement of the slum conditions.

The study is based on the data collected from the Census of India, 2001, and the Mumbai Urban Region (MUR) Survey, 2001. The study is divided into three parts: (i) a general introduction to the study, (ii) a detailed study of the slums in Mumbai City, and (iii) a conclusion and suggestions for the improvement of the slum conditions.

The study is based on the data collected from the Census of India, 2001, and the Mumbai Urban Region (MUR) Survey, 2001. The study is divided into three parts: (i) a general introduction to the study, (ii) a detailed study of the slums in Mumbai City, and (iii) a conclusion and suggestions for the improvement of the slum conditions.



Figure 1: Distribution of Slum Dwellers in Mumbai City (A Case Study)

The study is based on the data collected from the Census of India, 2001, and the Mumbai Urban Region (MUR) Survey, 2001. The study is divided into three parts: (i) a general introduction to the study, (ii) a detailed study of the slums in Mumbai City, and (iii) a conclusion and suggestions for the improvement of the slum conditions.

**A Geographical Study of Slums in Mumbai City (A Case Study)**

UN Population Division (2007). "World Urbanization Prospects: The 2007 Revision Population Database."

Venkataraman, V. and Thirakar, S. (2010). "Case Study of Slum Dwellers: Overview of Life in Urban Slums in India". *Indian J. Geography* (Vol. 2010, January, 191), 194-199. [dx.doi.org/10.1007/s12017-010-0256-7](http://dx.doi.org/10.1007/s12017-010-0256-7)

Dr. Ashwini Nath Tiwary  
Department of Geography  
Kurukshetra University  
Jalandhar (Punjab)

Dr. Meera Katarwa Tiwary  
Department of Geography  
Kurukshetra University  
Jalandhar (Punjab)

Self Attached  
Anshu Katarwa Tiwary  
25.10.21

## Tourism Development of Vindhyanchal, Mirzapur, U.P. India

Dr. Akhileshwar Nath Tiwari

Senior Lecturer and Head,  
Department of Geography,  
Yobe State University  
Dassamara, Yobe State, Nigeria

### Abstract:

Vindhyanchal is a very famous tourist place in the west of Mirzapur city of Uttar Pradesh State, India. The name of the City Mirzapur finds its origin as Girja-pur [Girja is another name of Parvati, wife of Lord Shiva] (Mishra, 1898). In the Hindu mythology, it is believed that the primordial creative forces of the GOD and the power of the GODDESS form superimposing triangles opposite each other as hexagram at a point/node (Point/node (Ritu) + located (vanti) or Vindhya-vanti, located in a point/node) in Vindhyanchal. The place is blessed with many important tourist and historical places such as: Vindhyan triangle (Rajasthan circumnavigation triangle formed by Lakshmi ( Goddess of wealth which originated from Sea: Mir+Za = origin from Sea), Kali (destroyer form of Girja or Parvati) and Saraswati (Goddess of Knowledge)), Kamashwar temple, Tarkeshwar temple, Nag Kund, Ghla Behta, Kanti Shari (mausoleum of Khwaja Jahid Hussain Chisti Rahematulla, nephew of most famous wali saint Khwaja Muamuddin Chisti Garhi Nawaj of Ajmer). There are many beautiful natural sites for recreation, i.e. Tunda Fall, Vinidham Fall, Khatari Dam, Siddhath ki Darg, Lakshmi Darg, etc. The tourist city of Varanasi is 50 km in east and Allahabad is 90 km in west. There are many thousands of tourists visiting to these two cities but don't prefer to visit Vindhyanchal. It fails to attract good number of tourists. In the present research paper, the reasons behind falling number of tourists are examined and proper recommendations are given to improve the place as important centre of tourism.

**Keywords:** Vindhyan Triangle, circumnavigation, secular, pilgrimage, heritage

### Background of the Study

Vindhyanchal is very ancient historical site surrounded by many natural sites as hills/rocks, rivers, ponds, waterfalls, etc. The cultural influence of the city is secular with good number of Hindu and Muslim pilgrimages done in the seasons of Navratri (nine days of prayers of goddess twice in autumn as well as spring seasons among Hindus) in Vindhyanchal and Urs in Kanti respectively. There are many tourist spots such as forest Deoria route, Bawan Temple, Lakshmi Mahal, Kameshwar Temple, Tarkeshwar Mahadev Temple, Vindhya-vanti Temple, Astabhinja Temple, Kali Khadi Temple, Sita pond, Gerna pond, Norta pond, Rangaya Ghat, Ram Chita, Iyat Saha, Devi Ghat, Opaka Bridge, Kanti Shari, Bandiya Mahalir, Lal Bhatra Temple, Bank Bhawo Temple, Raha Krishna Temple, Gangeshwar Mahadev Temple, Vanbhondishwar Mahadev Temple, Mukteshwar Mahadev Temple, Nag Kund or Ewan Ghat ki Baswall, Nageshwar/ Durgeshwar Mahadev Temple, Ramnath of Bhair's Palace of Kantiapur, etc. Important picnic spots are Tunda Fall, Vinidham Fall, Khatari Dam and Khawaja (Pg. 1)

Prof. Akhileshwar  
Akhileshwar Nath Tiwari  
25/10/21

# Prospects and Constraints in Development of Varanasi as Smart City, India

Dr Akhileendra Nath Triwari<sup>1</sup>,

<sup>1</sup> Senior Lecturer and Head, Department of Geography,  
Yobe State University, Nigeria

### Abstract

At Present 33.06 million (27.2% of total population of 1.2 billion persons, Census of India, 2011) people of India live in 4641 statutory towns, 3054 census towns, 475 Urban agglomerations and 881 outgrowths. Out of this urban population, 43% (14.47 million) reside in only 53 million cities and 20% reside in Class I cities. Three urban agglomerations viz. Greater Mumbai, Delhi and Kolkata have crossed the 10 million mark in population and five cities viz. Chennai, Bhopal, Hyderabad, Ahmedabad and Pune have attained more than 5 million population [1]. Such a large number of urban places and people pose serious challenge to the planners and governments in their qualitative of life and sustainable development. This paper is an attempt to examine the concept of smart city in respect of Varanasi in the state of Uttar Pradesh (75.79 sq km area and 1.4 million population). Varanasi is a very ancient city which is famous for the temple of Shiva Vishwanath (Nandai), Sunath (Kashi) and, besides, having all weaving, handicrafts, textiles, toys, ornaments, metal work, wood works, crafts, etc. Government of India has proposed to develop the city as a smart city with confidence of heritage and modernity by 2019. The present study is based on discussing the prospects and constraints in the proposal and give some viable recommendations for development of the city. This paper argues that sustainable smart cities policy should be adopted utilizing modern information and communication technology while avoiding the haphazard development. It discusses the scope of sustainable development through different

parameters and policy to achieve smart city status of Varanasi

**Keywords:** smart city, smart, sustainable development, heritage and e-governance

### Introduction

Before adopting smart city development plan, it is important to address socio-economic, political and environmental concerns. There is an existing evidence in India that can explain if trends of sustainable cities are affected by, for example, residential density, transport accessibility and layout [2]. Prime Minister of India Mr. Narendra Modi announced his vision to set up 100 smart cities across the country by 2019 [3]. Varanasi in Eastern Uttar Pradesh State has also been selected to be developed as a 'smart city' with cooperation from Kyoto, the Japanese 'smart city' which is a confluence of heritage and modernity. According to the ministry's proposed plan, the city's heritage structures are to be retained even as its infrastructure is to be upgraded. These sub cities, Smart Kanpur, Smart Hindia University and Airport City would be carved out as smart sub-cities, interconnected by a network of flyovers. The idea is to ensure that connecting from one sub-city to another does not take more than 30 minutes. The proposed transport infrastructure also includes a metro rail, an

## A Geographical Study of Vindhyanchal in Mirzapur City, U.P. India

❖ Author: Dr. Akhilendra Nath Tiwary

*Senior Lecturer and Head  
Department of Geography  
Yobe State University  
Damaturu, Nigeria*

antwary2000@gmail.com

Vindhyanchal is a very famous pilgrimage and tourism site in the west of Mirzapur city, Uttar Pradesh State, India. The main city in east is a commercial centre for cotton, metal ware and carpets. Among the Hindu population, it is believed that the primordial creative forces of the GOD and the power of the GODDESS make respective triangles which superimpose opposite to each other as hexagram at a point or node (*Bindu* (point) + *Vasini* (located) or *Vindhyavasini*, located in a point/node) in Vindhyanchal. The region has served as a natural connecting point between north and south India. Before independence of India from Britain in 1947, it was a flourishing commercial centre. Post-Independence, the negligence of planning authorities and nexus of bureaucrats and politicians started affecting its development. In the meantime, emergence of new industrial cities as Kanpur, Agra, Moradabad, etc., nearer to the capital city of Delhi, posed serious challenges to the development of this small city as many commercial and business activities along with the skilled workforce started shifting to these new cities or to the relatively bigger neighbouring cities of Varanasi in east and Allahabad in west. In the present paper, the significant causes, issues and challenges in development of

Vindhyanchal is discussed with geographical perspective. An attempt has been made to find out the ways to restore the lost glory of the city as a centre of pilgrimage, tourism and commerce.

*Akhilendra Nath Tiwary*





The book "The Power of Now" by Eckhart Tolle is a profound work that explores the concept of living in the present moment. It is a masterpiece of spiritual wisdom, offering readers a path to inner peace and enlightenment. Tolle's teachings are simple yet powerful, emphasizing the importance of letting go of the past and future to fully experience the present. The book has inspired millions of people worldwide, providing a practical guide to achieving a state of mindfulness and self-awareness. Its clear and concise language makes it accessible to all, and its profound insights have made it a timeless classic in the field of spirituality.



Eckhart Tolle is a spiritual teacher and philosopher who has inspired millions of people to live in the present moment. He is the author of the best-selling book "The Power of Now," which emphasizes the importance of mindfulness and self-awareness. Tolle's teachings are rooted in the idea that the only true source of happiness is the present moment, and that by focusing on the here and now, we can find peace and fulfillment. His work has been widely praised for its simplicity and profound wisdom, and it continues to influence a large number of people around the world.



9 780060657209 >

MCGRAW\_HILL\_000000000000



000000000000

The Power of Now  
 Eckhart Tolle

MCGRAW\_HILL\_000000000000

Self Actualized  
 Part 1 & 2 Post ding  
 85-10-21



# Water Resources Conservation and Management Strategies

---

**Dr. Akhilendra Nath Tiwary**

*Asst. Professor & HOD Geography, SVP College (A Constituent Unit of V.K.S.U. Ara), Bhabua, Kaimur, Bihar-821101,*

While 67% of Earth's surface is covered by water, only less than 2.7% of global water is freshwater. Most of the freshwater (2.05%) are locked in ice caps and glaciers. Only less than 0.7% is available for human use. It is not scarcity of fresh water but misuse and over use without proper budgeting in our day to day life, commercial and industrial use. Water as a vital resource is sufficient for human consumption if used judiciously. Presently it is consumed in highly unsustainable way which is a matter of shame to the developing society. With growing urbanization and industrialization, demand of water has increased manifold but the urban areas and industries are not following proper measures to restore, recharge and reuse the water after their utilization. At once they are digging deep and taking out ground water, in turn they dump wastage in deep bore wells to avoid government legal action. The refuse/waste and sewer flown away at the surface level badly pollutes the rivers and water bodies at large. In absence of strict laws and sensitivity of immediate communities, this crime of polluting land surface and surface water is omnipresent with nobody to take action or responsibility to ensure their cleanliness. The present article tries to focus on issues related to normalisation of the water cycle, freshwater availability, challenges raised due to urbanization and industrialization. It excludes technical terms and other political water conflict issues and the problems of flood and drought. Its major focus is to adopt

*Akhilendra Nath Tiwary*

# भारतेन्दुयुगीन सामाजिक चेतना का स्वरूप और विकास

डॉ. अजीत कुमार राय  
प्रियका कुमारी मिश्रा

मनीष पब्लिकेशन्स  
दिल्ली-110094

ISBN : 978-93-51435-19-9

© : लेखक

प्रकाशक : मनीष पब्लिकेशन्स

ए. 471-10, पार्ट-2, मॉलिया विहार, दिल्ली-110094

फोन : 889968792953

e-mail : manishpublications@gmail.com

मूल्य : 350.00 रुपये

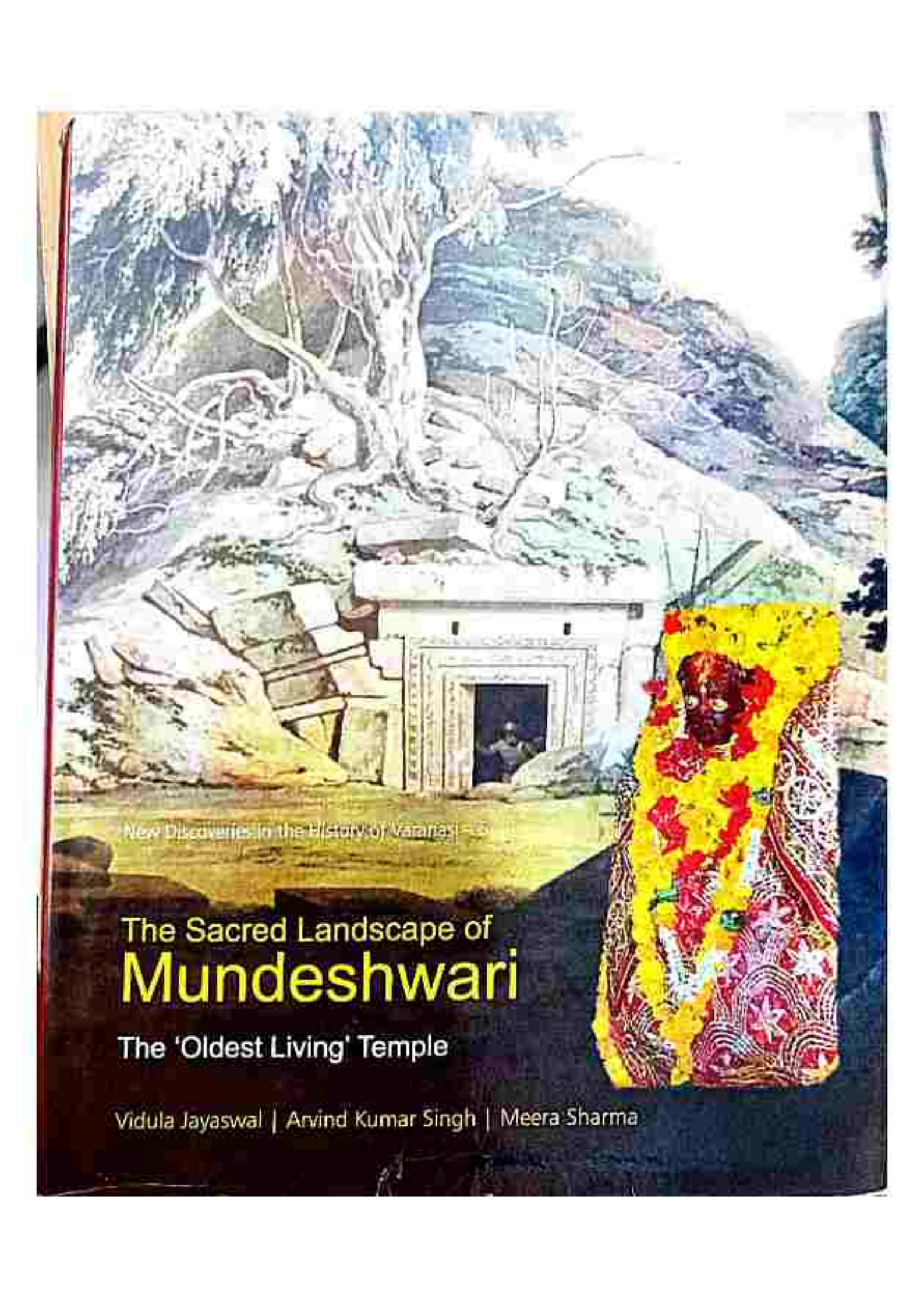
संस्करण : 2017

शब्द-संपादन : प्रिंस कम्प्यूटर्स

चन्द्र नगर, दिल्ली - 110094

मुद्रक : पूर्वा ऑफसेट, जगतपुरी

दिल्ली-110093

The book cover features a detailed illustration of the Mundeshwari Temple. The temple is a rectangular stone structure with a central doorway, set against a backdrop of rugged, rocky hills. A large, gnarled tree with thick, twisted branches stands to the left of the temple. In the foreground, a dark, reflective surface, possibly a pool of water, shows the temple's reflection. On the right side, a tall, narrow, rectangular object, likely a ceremonial pot or a shrine, is adorned with a vibrant garland of yellow and red flowers and a patterned cloth. The overall scene is bathed in a soft, golden light, suggesting a sunrise or sunset.

New Discoveries In the History of Varanasi

# The Sacred Landscape of Mundeshwari

The 'Oldest Living' Temple

Vidula Jayaswal | Arvind Kumar Singh | Meera Sharma

# Contents



<i>Preface</i>	v
<i>List of Illustrations</i>	vi
<b>1. Introduction</b>	1
— <i>Vidula Jayaswal</i>	
<b>2. Palaeographic Records of Mundeshwari:</b> Documentation of Inscriptions	17
— <i>Arvind Kumar Singh</i>	
<b>3. Iconography and Sculptural Art:</b> Documentation of Sculptures	115
— <i>Meera Sharma</i>	
<b>4. Mundeshwari in Lore:</b> Ethnography and Mythology	223
— <i>Vidula Jayaswal and Seema Patel</i>	
<b>5. Origin and Growth of Sacred Landscape of Mundeshwari</b>	255
— <i>Vidula Jayaswal</i>	
<i>Bibliography</i>	283
<i>Index</i>	291

## 4

# Mundeshwari in Lore Ethnography and Mythology



Kaimur region is full of mythological and folk stories. Among these many throw significant light on the formulation and growth of religious landscape in and around Mundeshwari hill. The Bhabhua sub-division has several communities which now have settled life. But, this part of south-west Bihar had been a hub of Mundari-speaking autochthonous communities which are recorded as 'tribes'. Though the word 'Tribe' is not often recommended by the modern anthropologists, its use cannot be escaped in this tome, due to its very long usage and the meaning it conveys. The other two terms 'Aborigines' and 'Adivasis' also have been used here. Besides the tribes, urban population also resides in the region of our study. Information gathered by us from the local inhabitants of Kaimur region revealed that at present, approximately 50 per cent of the hill population belongs to the Kharwar tribe. The other tribes of the region are Oraon, Chero, Agaria, Soiris and Korwa. In contrast to this, the plain, which forms two-third of the northern part of the Kaimur district, is inhabited primarily by non-tribal communities like Brahmins, Rajputs, Keeris, Kurmis, Chamars, Dusadhs, and Muslims. The socio-religious practices of tribal and non-tribal population of the region, which have been recorded earlier and recently by the co-author of this section, revealed a complex process, involving adaptation, rejection and acculturation of diverse concepts and traditions. Accordingly, the contribution of the two, the tribal and the non-tribal, is glaring in the makeup of the religious landscape of Kaimur region. The Hindu mythology and the aborigine cultural pattern, therefore, are briefed in the following, which is based on the early publications and our recent interviews. Since Mundeshwari is a living monument, the present rituals and organization of the temple were also felt to be of significance. This section incorporates information collected by the interview of various persons. Accordingly,

the following three sections are—the Aborigine Inhabitants, the Administrative and Organizing Persons of the Shrine, and the Mythological and Folk Stories.

## I THE ABORIGINE INHABITANTS

The oral narratives of various aborigine communities living presently in Kaimur region were recorded by Seema Patel in the year 2013-14. The work is culture-specific, qualitative and interpretative in nature and is based on data collection mainly through semi-structured interview questionnaires. Some select recording of the same is given below. The participants in this case were usually communities and villagers who were interviewed mostly in groups. The interview questionnaire in this case dealt primarily with their origin, identity, migration history, social hierarchy and religious traditions. The objective was to trace the long standing association of the communities with the cultural landscape of Kaimur, based on their memory and their own perception of the region. The communities interviewed were categorized within the villages and the geographical setting where they live. The following six categories were demarcated in this section.

**Table 1. Interviewed Communities & the Surveyed Villages**

S. No.	Ethnic Group	Abbreviation	Village	Geo-Environment Location
1	Agaria	AGR	Adhaura	Hills
2	Kharwars	KHR	Adhaura, Bhadehara, Bandha Chainpur	All in hills
3	Cheros	CHR	Padari, Patloiya Godri, Kama	Foothills, (jwarikhoh) hills
4	Soiris/Masahar	MSR	Padri, Patloiya, Kudwa, Ramgarh, Haripur/Kishnapur, Devsma	Foothills
5	Orion	ORH	Patpar (Adhaura)	Hills
6	Korwa	KRW	Sarodag	Hills

All the six communities selected were dwellers of geographical isolated zone—the hilltop and the foothills of Bhabhua sub-division of the Kaimur district. The abbreviation given to the individual communities is used for documenting the interviews. A total of 79 persons were interviewed. Details of their socio-economic background with name and age have been summarized in the following table:

**Table 2. List of Informants of Tribal Communities**

Sl	Name	Age	Village	Tribe	Socio-Economic Status
1	Dasmatiya	65	Adhaura	Agariya	Housewife/Labourer
2	Dilhas Agariya	65	Adhaura	Agariya	Lohar/Blacksmith
3	Jawahir Agariya	40	Adhaura	Agariya	Labourer
4	Nebul Agariya	80	Adhaura	Agariya	Lohar/Blacksmith



Sl	Name	Age	Village	Tribe	Socio-Economic Status
5	Ramavadh Agariya	45	Adhaura	Agariya	Labourer
6	Doma Singh Kharwar	62	Chainpur, Adhaura	Kharwar	Member, Vanvasi Kalyansamiti
7	Gopalsingh	45	Bandha/ Bhudkuda	Kharwar	Kharwar royalty
8	Haribans Singh	85	Badagaon Kala, Adhaura	Kharwar	Gawaha
9	Jhari Singh Kharwar	50	Bandha, Sarodag	Kharwar	School teacher
10	Jokhan Singh Kharwar	75	Goiya, Adhaura	Kharwar	Farming
11	Karnel Singh	45	Adhaura	Kharwar	Baiga, farming
12	Lal bahadur Kharwar	40	Adhaura	Kharwar	Employee, Vanvasisewa Kendra
13	Laxman Singh Kharwar	50	Bandha, Sarodag	Kharwar	Baiga, farming
14	Mantra Kumari	20	Adhaura	Kharwar	Gawaha's daughter
15	Pavitradevi	40	Adhaura	Kharwar	Baiga's wife
16	Radhikadevi	35	Adhaura	Kharwar	Food gathering
17	Ramchander Kharwar	60	Bahadag, Adhaura	Kharwar	Ex-block Pramukh
18	Santidevi	62	Adhaura	Kharwar	Gawaha's wife, food gathering
19	Shankar Singh Kharwar	75	Adhaura	Kharwar	Farming
20	Shyamsunder	30	Adhaura	Kharwar	Farming
21	Vishwanath Singh	55	Adhaura	Kharwar	Labourer, food gathering
22	Bajjnath Singh	54	Bhadehra	Kharwar	Farming
23	Barmatidevi	70	Bhadehra	Kharwar	Labourer, food gathering
24	Guljanidevi	65	Bhadehra	Kharwar	Labourer, food gathering
25	Gulpatidevi	60	Bhadehra	Kharwar	Labourer, food gathering
26	Jagdish Singh	63	Bhadehra	Kharwar	Farming
27	Komal Singh	45	Bhadehra	Kharwar	
28	Kuntidevi	32	Bhadehra	Kharwar	Labourer, food gathering
29	Parwati Devi	60	Bhadehra	Kharwar	Labourer, food gathering
30	Birbal Prasad	40	Kolhua	Kharwar	
31	Omprakash s/o Ramswarup	22	Adhaura	Oraon	Student
32	Jagamath Oraon	60	Adhaura	Oraon	Labourer
33	Ramswarup Oraon	40	Adhaura	Oraon	Farming
34	Ramrup+Ramkrit	47	Dugha, Adhaura	Oraon	Labourer, food gathering

Sl	Name	Age	Village	Tribe	Socio-Economic Status
35	Chandrama Yadav	40	Adhaura	Yadav	Farming
36	Rangubhan Singh Yadav	47	Bandha, Saredag	Yadav	Farming
37	Narayani Kunwar w/o Sunder Thakur	45	Adhaura	Barber	Ritual assistant
38	Gura Devi	50	Gudri	Chero	Food gathering
39	Daulati Kunwar	65	Karar	Chero	Food gathering
40	Vimal Chero	65	Lohandi	Chero	Baiga - Dharti Ma temple
41	Begum Chero	76	Padri	Chero	Food gathering
42	Rajvansh Chero	30	Padri	Chero	Labourer, food gathering
43	Dulari w/o Thuga	65	Patloiya	Chero	Housewife
44	Jalim	80	Patloiya	Chero	Labourer
45	Jitender	25	Patloiya	Chero	Labourer
46	Lagru Devi	70	Patloiya	Chero	Labourer
47	Mahender	30	Patloiya	Chero	Labourer
48	Marichi Kunwar	55	Patloiya	Chero	Labourer
49	Pohntul	80	Patloiya	Chero	
50	Raghunath	45	Patloiya	Chero	Labourer
51	Bhikhi Musahar	80	Kudwa	Musahar	Beggar
52	Gayatri Musahar	90	Kudwa	Musahar	Beggar
53	Halkhori	80	Kudwa	Musahar	Beggar
54	Lala Musahar	60	Kudwa	Musahar	Beggar
55	Panchmi Musahar s/o Jivt	62	Kudwa	Musahar	Labourer
56	Champo	65	Kudwa	Musahar	Begging
57	Kunti w/o Mahender	35	Ramgarh	Musahar	Labourer
58	Kumari Devi	50	Ramgarh	Musahar	Labourer
59	Rambilas Musahar	81	Ramgarh	Musahar	Labourer
60	Santu Musahar s/o Somaru	80	Ramgarh	Musahar	Farming
61	Shyambhari	50	Ramgarh	Musahar	Labourer
62	Chaturi Musahar s/o Somaru	50-60	Devsarna	Musahar	Labourer
63	Jawahir Musahar s/o Ramdas	60	Devsarna	Musahar	Labourer
64	Reshmi Devi	35	Devsarna	Musahar	Labourer
65	Muratiya	80/ 85	Devsarna	Musahar	Labourer
66	Nadhuni Musahar s/o Ramdev	60	Devsarna	Musahar	Labourer
67	Rajkumari	75-80	Devsarna	Musahar	Labourer

Sl	Name	Age	Village	Tribe	Socio-Economic Status
68	Bhikhayin	90	Kishnapur	Musahar	
69	Bhadan Musahar	60	Kishnapur (Haripur)	Musahar	Labourer
70	Sadawan Musahar	55	Kishnapur (Haripur)	Musahar	Beggar
71	Tengar Musahar	90	Kishnapur (Haripur)	Musahar	Beggar
72	Leku	85	Patliya	Musahar	Labourer
73	Siri	30	Patliya	Musahar	Labourer
74	Jeera		Patliya	Musahar	Labourer
75	Kampati		Patliya	Musahar	Labourer
76	Bilhal Prasad		Kolhua	Korwa	
77	Jitu Korwa	45	Sarodag	Korwa	Herb gathering
78	Kambrikaha Korwa	30	Sarodag	Korwa	Herb gathering
79	Santi Devi	75	Sarodag	Korwa	Herb gathering

The persons interviewed belonged to six communities, and were dwellers of fourteen villages. The informants ranged from simple villagers who are mainly seasonal farm labourers, food gatherers, having their own agricultural fields, like Kharwars, and beggars. Some of the Musahars of Kudwa at the base of the Mundeshwari temple were found begging for their livelihood.

It may be confessed that the data presented here may not be full proof as appropriate answer to many of the questions could not be recorded by us. For example, many of the informants were not certain about their age in years. Likewise, in certain cases it was not possible to record the socio-economic status. In spite of these drawbacks, the information collected through long questionnaire appeared to be important for this study. It may also be mentioned that though detailed information was collected during the field survey, this section is selective and demonstrative. Only two adivasi communities of the region have been incorporated here which have direct bearing on the theme of this monograph. This may be found right from the selection of tribes to the categories of information summarized below. The Agarias, for instance, were not only the original inhabitants of the region, but they appear to have supplied iron articles to the temple. Cheros reveal closeness with the politico-religious history of the region. Thus, they form a prominent part in the mythology.

#### THE AGARIAS

One of the earliest inhabitants of the uplands of the rocky terrain of Kaimur, Agarias were not recorded in the Census of the year 1965 of Shahabad district, the old division of Kaimur region (Roy Choudhury, P.C. 1965). But, Kharwars who are present in the region in large proportion mention Agarias as the original inhabitants of the region. Agarias also claim the same, as is revealed by the reply of one of the Agaria (AGR. S. No. 9: Table 2). Dasmatiya of Adhaura village said:

We were the original inhabitants of the Kaimur plateau, but were driven out by the Kharwars beyond the river Son to Palamau. But, in 1904 we returned back to Kaimur hills, where we led nomadic life till the famine of 1966.

The above statement is important for more than one reasons. It claims Kaimur hills to be the homeland of Agarias. It suggests that this community was forced to migrate to Palamau. But, Agaria migrated again to Kaimur region (1904) subsequently. Interestingly, ethno-administrative publications of the 19th century do not mention the Agarias in the list of tribes (Roy Choudhury, P.C. 1965), and the region Kaimur as home of this community (Elwin, V. 1942). The question is how authentic the folk memory of Agarias is about their occupation of the Kaimur region?

The main reason for the discrepancy between the above statement and the published accounts appears to be time to time change in the administrative units of the region in the past. It was noted earlier, for instance, that Kaimur district is a recent administrative unit, which was formed by bifurcating Shahabad district as late as the year 1991. Shahabad, a well-recorded unit of the 17th century, derived its name from an event of 1529, when Emperor Babar conquered Afghanistan from its camp at Arrah. The place was called Shahajahanabad or Shahabad, in felicitation, and parts of south Bihar were demarketed as Shahabad district in 1685. The first Gazetteer of Shahabad was published in the year 1924, and a later edition in 1965 (Roy Choudhury, P.C. 1965: 2). In the latter Gazetteer there is no mention of 'Agaria'. But, the tribal list included presence of 'Asuras' in the region. *Asura*-Agaria was a branch of Agarias according to Elwin in Palamau district (Elwin, V. 1942:1). It is, therefore, possible that the immigration of Agarias from Palamau to Kaimur in 1904, mentioned by Dasmatiya, was of *Asura* branch of Agaria, which continued to be called *Asura*, but the members of the community preferred to retain Agaria claim. As per the statement of Dasmatiya and the year of publication of Elwin's study, presence of *Asura*-Agarias in Kaimur region appears to be a likely presumption.

In a similar instance, it may be noted that their presence is unrecorded in the beginning of the 19th century, in Shahabad/Kaimur region. Oldham thinks that, 'Kol lohars', who probably belonged to Agaria ethnic group, were present in the area at the time of Francis Buchanan's survey of Shahabad district in 1812 (Oldham, C.E.A.W. 1926: 82). This situation may be seen in the Lohara communities of the plateau even now, who often claim their ancestry to Agarias. But, Elwin who conducted in-depth study on Agarias is of the opinion that the 'Loharas' is a separate community with marked cultural diversities, and are physically as well as culturally different than Agarias (Elwin, V. 1942: 2-4). Most of the members of Agaria community interviewed by us also negate their association with Lohars. Jawahir Agaria (AGR. S. No. 3: Table 2) and Nebul Agaria (AGR. S. No. 4: Table 2) said:

Agarias are different from Lohars since they have their own language (girl = dowki, woman = dokri), which is different than the language of Lohars. Besides we are different from Lohars since our marriage rituals are different. The Agarias (Baghelkudi) do not use a mandap (marriage canopy) like Lohars, but, install a trident made of iron.

By virtue of being earlier inhabitants we are considered higher than the Lohars of the hills (who belong to the backward caste).

Our interview suggested that Agarias have sub-castes.

Jawahir Agaría (AGR. S. No. 5; Table 2), spoke on the sub-divisions of Agarias as:

Agarias have seven sub-castes called Kuris-Dod, Chichoki, Ahinwar, Sarwaria, Barua, Ghodikudi, Bagheli.

Nebul Agaría (AGR. S. No. 4), further specified that:

Among the seven sub-castes, Ahinwar and Godkuriis mainly reside on the hills.

Jawahir Agaría (AGR. S. No. 5; Table 2) said:

In the past we were titled as Agaria. Later took the title of Vishwakarma and Sharma and clubbed with the Lohar in the Hindu caste structure. In order to assert our identity, under the influence of Dr. Binyan, the social activist, we reclaimed our title Agaria about 25 years ago.

According to the above statements, it may be held that some of the Agarias got converted in the Hindu caste structure and also accepted new titles while the others residing in remote areas continued to retain their original lineage. In the process of admixture this ironsmith community merged, or came to be known after their profession as Lohars.

Another important question to our mind was, what was the antiquity of Agarias in Kaimur region? The earlier publications mention that the main homelands of Agaria were the Satpura range, the Chhotanagpur plateau, and the slopes of Kaimur range in southern Uttar Pradesh and Bihar. Elwin also records that Agarias were dwelling in Mirzapur, Rohtas and Palamau regions (Elwin, V. 1942: 1). The former two in their undivided old territories would certainly include Kaimur region. For example, it is on record that when Rohtas was separated in two regional units, the eastern part fell in Bihar, while the western part stayed with Shahabad (Roy Choudhury, P.C. 1965: 2). If this was the case, then at least a part of the homeland of Agarias appears to form part of the region of our study, the Kaimur district.

The main subsistence of Agaria is iron smelting, which is reflected in the etymology of their nomenclature, because the name 'Agaria' is derived from 'agar' which means furnace (Singh, K.S. 1994: Vol. 3: 52). If this is so then it is only logical to accept that their identity is as the 'iron smelters'. It would further indicate that their homeland would be the areas rich in iron ores. Elwin has recorded that 'Central Provinces are rich in minerals', 'iron ores' (Elwin, V. 1949: 29). Both the geographical and economic occupation of Agarias in the region can be accessed from the data that "during 1909-13, on an average of 428 primitive furnaces were noted in the region under Agaria occupation, which on an average were producing a total of 557 tons of iron" (Elwin, V. 1949: 29). Elwin also notes that at this time (1949), the production had lowered down to 'less than a third' of the above quantum. If this statistics is pushed back in antiquity, it may be logical to hold that during early historic period when the temple of Mundeshwari was being constructed (fifth - seventh centuries), the production must have been more, or the requirement have been lesser than the 20th century. It is, therefore, apparent that the requirement of the black metal, of the

Ganga valley settlements, was catered by the aborigine iron smelters. It may be recalled that Elwin has recorded many groups of Agarias, which also belonged to other tribes like Gonda, Munda-speaking tribal groups of *Asurus* of Chotanagpur, Patharia Agaria of Rewa and Mirzapur, the Lohar Agaria, etc. But on account of their subsistence, iron smelting and primitive iron craft, they are called Agaria (Elwin, V, 1942: 7).

In their own words, the Agaria state (Nebul Agaria of Adhaura village. S. No. 4: Table 2) that:

Agariyas who are tribal, always smelted iron on the hills instead of farming. Agariyas have practically no landholding since they dealt only with iron and lead a nomadic life in search of iron ore. They smelted iron since three generations ago. Now the government has banned the cutting of Sakhu wood used in the furnace due to its high heat properties, making iron smelting difficult.

The largest 'lohasaan' furnace in earlier times was in Jharpa Dumarkon in Adhaura, Kaimur hills and Jamuninar. The stone (iron ore) was to be found in abundance between the villages of Karar, Jamuninar and Bhadehra.

The above discussion has relevance to the present study because it opens up the possibility for the acceptance of such hypothesis that iron for the temple of Mundeshwari was supplied by aborigine iron smelters of the Vindhya-Kaimur belt. In other words, the Agarias living contemporary to the construction of the temple of Mundeshwari (fifth-seventh centuries), had catered to the need of iron for this structure. The question one would face to hold this hypothesis would be: Whether the antiquity of Agaria or the primitive iron smelters in the region goes back to this time?

The archaeological findings of primitive iron smelting sites of Chandauli and Sonbhadra districts in Vindhya-Kaimur region are significant. Excavated by Rakesh Tewari and his team, the sites of Mahdar (Tewari, R. et al. 2000: 69-98), and Rajanai-Ka-Tila (Tewari, R. & R.K. Srivastava 1998: 99-106) evidence iron smelting in the region as early as 18th century BCE. Excavations at Aktha in Varanasi further suggest that sites of the Ganga valley were receiving iron from the hilly tracts right from around 18th century BCE (Jayaswal, V. 2009: 142). If this was the case, then it may be logical to accept that the practice of extracting iron from the natural ores which had been always plenty in the Vindhya-Kaimur foot hills, was an old practice going much beyond the boundaries of the historical period. That this practice continued as late as the 19th/20th century too is attested by the ethnographic records cited above. Construction of Mundeshwari temple can comfortably be placed within this long time span of native iron craft of the region.

A supporting evidence to the presumption that the iron was locally smelted and equipment/components to be used in the structure were native produce was discovered during our survey of the foothills of Mundeshwari, where was found scatter of dense concentration of iron refuse, smelted iron waste produce. Also some thin deposits of habitation were noted in the surrounding fields under cultivation towards the southern side. Though it was not possible to date these findings, our inquiry from the local inhabitants indicates that these are remains of very old iron smelting.

Agaria religious rituals are governed by their subsistence and economy. They worship Lohasur devi (goddess of iron), Banasura (forest god), etc. The rituals performed by Agarias in the month of Puz (December-January), for instance, are to appease the goddess of iron, Lohasur devi (Cooke, W. 1974: Vol. 2: 8). The concept of Banasura, another popular deity of the community, too is related with the smithy. Besides, there are other primitive rituals like *Dila* worship (worship of the village god). Sacrifice of goat or a fowl forms the main ritual during these worships.

In spite of the above tribal customs, Agarias in our interview were found to have adopted a number of deities from Brahmanism, which they regularly worship. Interviews of Ramavadh, Dilbas, Nebul Agaria of Adhaura village (S. Nos. 5, 2 & 4) point out:

Our clan deities are, - Bhavani, Karma, Vishwakarma and Durga. Bhavani is worshipped during Baisakh Navmi (March-April), when a he-goat is sacrificed inside the house. For this ritual it is mandatory to rear the sacrificial goat for one year by the devotee. Sacrifice of the goat is made every three years. After sacrifice, the goat meat is cooked and consumed by the family, and the bones are buried inside the house.

Karma is worshipped when some wish (*manantil*) is fulfilled. It is performed in Agarian (November-December) by sacrificing a goat. Agarias have started to abandon Karma puja due to its expenses. Because, in this worship the devotee is to host a community feast. Thus, for monetary considerations Vishwakarma worship is taking place after fulfillment of a wishes which requires only offering of sweets among those who attend the ritual.

When working with iron, we worship Durga now. To devi Durga a she-goat is sacrificed at a public place.

The above account suggests that the Agaria religion and rituals now are a mixture of adivasi and Brahmanic traditions, which they themselves confess. Nebul Agariay of Adhaura village (S. No. 4), for instance said:

We have abandoned devkuri goddesses Kali and Banjar and adopted Hindu deities.

Our interview revealed that the Agarias do not take pride in associating themselves with any of the known legends or epic stories of Hindu pantheon. In fact, they were found quite indifferent about glorifying their ancestry. They have adopted many of the Hindu customs in the course of interaction with other civilized communities.

It is obvious from the above account that the history of Agarias in Kaimur region is full of possible events like migrations, immigrations and cultural interactions, which are not always distinct. However, during the course of time they seem to have adapted quite a few concepts and rituals of the Brahmanical pantheon. But the possibility of some of the rituals performed at Mundeshwari could have its roots in the old customs followed by Agarias. It is likely that the goat sacrifice by the local devotees at the Mundeshwari temple was the ritual initially adopted/continued from the Agaria ritual of Karma, when a goat is sacrificed at public places. Their contribution to the

religious landscape of Mundeshwari was more tangible (supply of iron articles) than intangible (to the religious makeup).

#### THE CHEROS

The Cheros have more than one explanation for their address. It is said that the word 'Chero' has derived its name from 'chera', which means a snake. In another explanation, their origin from the Sage Chyavana is claimed, who is also known as Chero or Cheru. Forbes, for instance, gave an account for the lineage of Cheros of Palamau from this Muni. He has narrated the tale that the daughter of King Kesho Narayan Singh, a Bondi Rajput of Bundelkhand, was destined to marry a sage. The king found Chyavanrishi in Morang (supposedly one of the districts of Nepal) in the form of a mound, from which he unearthed the sage. He offered his daughter to him and after marriage they parented the Cheros, the Chauhanvamsi Rajputs (Crooke, W. 1896: 215). Likewise, Chero ancestry is also traced from Moon, suggesting a lunar lineage. Francis Buchanan considers the Chero along with Kharwar belonging to the Sunak family, which flourished during the time of Gautama, the Buddha (about 500-600 BC). Following the old tradition, they still nominate a raja for every five or six houses and respect him with tilak. Sunak may be a collateral branch of Brihadratha of the lunar family. But, Buchanan had further noted that, however, the Cheros claim themselves to be Nagabanshi, or the descendents of Kashyap of the Solar family (Buchanan, F. 1934: 40).

Interestingly, our interviews of Chero community residing in Bhabhua subdivision of Kaimur district negate most of these sayings. Chero of the village Patloiya and Padri at the foothills of Jwarkhob hills, for instance, stated:

We are not Chauhana, but Cheros. Chauhans are associated with another community called the Naniyas (Cheros of Padri and Patloiya villages).

We are not Nagvanshi despite the fact that we worship Nag luaba in Sawan (Cheros of Patloiya village).

We are Takshak Nagvanshi, like Bhars, but our rituals are different (Cheros of Padri village).

The above statements reject some ancestry claims by the inhabitants of Kaimur of today but suggest that the numerous lineages associated with this tribe was due to close contact with many communities. One wonders if their wide dispersal in the Madhyadesha could be the reason for it. For, their wide occupation in the Gangetic valley and the southern hilly tracts lying within the boundaries of modern Uttar Pradesh, Bihar and Jharkhand is well documented. This was the area of attraction for many socio-technologically developing communities, with glorious tales of their ancestry.

According to Dalton, the land west of the river Son in the Gangetic Province known as Kikat was once in all probability occupied by people speaking the Munda or Kolarian language, of which the Cheros were the last dominant community. He further mentioned that according to traditions most of the Shahabad extending from



Charanadri, i.e. modern Chunar to Gridhyakot (Giridih), and from the Ganges in the north to the hills which form the southern boundary, once was the domain of Cheros, where their material remains scatter (Dalton, E.T. 1872: 125-26). Crooke has also reported survival of Cheros in Gorakhpur (Crooke, W. 1896: 216). Watson and Kaye stated that the concentration of Cheros was in Palamanu, but their spread was also in Shahabad, Bhagalpur, Monghyr and Ranchi districts (Watson, F. and Kaye, J.W. 1868). Roy Chaudhury in the year 1965 records that, "It is traditionally asserted that the whole of Shahabad formerly belonged to the Cheros" (Roy Choudhury, P.C. 1965: 154). Our survey of the Kaimur region specified that this adivasi community is presently residing in the land lying between Jwarkhoh hills (west) and Makrikhoh near Garhwat Silsila (east). This habitat was bounded on both sides by two tributary streams of the river Suara, and the hill range at the southern side. In this naturally protected land of Kaimur district, the Chero villages were located within the Bhagwanpur, Chainpur and Adhaura blocks.

Roy Chaudhury surveyed village Makrikhoh, Parari and Bajdihwa in Bhagwanpur block, and Dahar in Adhaura block (Roy Choudhury, P.C. 1965: 154). Though he was not certain about the exact number of inhabitants, by his estimation there were 533 members of Chero in Adhaura and 412 in Bhagwanpur. Our interview recorded the following list of villages. The villages of Adhaura according to Cheros of Padri village were:

Karar, Katror, Mudelra, Gudri, Jamuniar, Dahar, Salaiya, Chainpur, Sakki, Suar strota, Kasora, Dumka, Chamurka, Lona Khona and Lohandi, while the villages in Chainpur block are - Masani, Bidwan, and in Bhagwanpur - Padri-Patloiya.

One of the main characteristics of Cheros is that they do not follow peaceful economic pursuits. Watson and Kaye record that, — "they are martial group searching for brighter destinies in new lands through wars" (Watson, F. and J.W. Kaye 1868). It is perhaps for this reason that they were associated with a number of historical events. Unlike other adivasi communities of Kaimur region, there are numerous legends associated with the Chero which portray them as warriors and also as rulers. The above cited legend of their ancestry itself suggests their roots in ruling class. Because the mother of Chauhanvansi was the daughter of the Rajput king of Bundi, her son Chet Rai is claimed to have driven out the Rathor Rajas of Kumaon and grandson Phulchand conquered Bhojpur or south Bihar (Crooke, W. 1896: 215). The legend certainly suggests ruling power of the community in south Bihar and foothills of the Himalayas.

The history of political power of the Cheros is also found in some of their family records in which it is recalled that a group of Cheros were formerly chief of Kumaon and the Terai regions of Gorakhpur and north Bihar. Being expelled from there, they conquered Bhojpur in the Arrah district, where they established a small kingdom, which included Shahabad, Champaran and Muzaffarpur, and reigned for six generations (Watson, J.F. and Kaye, J.K. 1868). They were displaced by the Rajputs of Ujjain and Malwa from Bhojpur and adjacent regions in 1329. The struggle lasted for a century as mentioned in *Tarikh-e-Ujjainiya* (Prasad, M.V. 1905: 20). It was from

the Chero Raja, Mukundadeva, that the Rajputs seized the fertile land below the foothills of Kaimur (Roy Choudhury, P.C. 1965: 63), in between 1321 and 1323 (Prasad, R.N. 1987: 15). Relinquishing their stronghold, they were forced to retreat southwards, mostly migrating to Palamau. As quoted by Watson and Kaye (1868), "...They then some 250 years ago invaded Palamau, driving from there the Rajput raja of Ruksala family, who in turn took refuge in Sirguja. Three collateral branches are now in existence" (Watson, J.F. & Kaye, J.K. 1868). As late as the reign of Shershah, the power of the Cheros was formidable in Shahabad and a Chero king was in possession of Chainpur (Sherring, M.A. 1872: 377; Crooke, W. 1896: 215). With the help of Rajput ancestors of Ranka and Chainpur, Bhagwat Rai was the first Chero chief, who conquered Palamau in 1613 *ca* and by the beginning of the 17th century the Cheros had firmly established themselves in Palamau. Arant Rai, who resided the Mughals under Akbar, continued to be an independent chief throughout. He was followed by Medini Rai, the greatest and most powerful ruler of the dynasty. Medini Rai was succeeded by Prafap Rai and others (Patil, D.R. 1963: 351). At the time of conquest of Palamau, it was inhabited by the Kharwar, Gonds and Kurwa who allowed peaceful possession of the hill tracts. Of these the Kharwars were of dominant population. The Kharwars numbering 18,000 and the Cheros numbering 12,000 assisted Bhagwat Rai in his expedition. The former were known thereafter as Atharahazari and the latter as Barahazari, respectively (Russel, R.V. & R. Hiralal 1916: 427). In 1800, the Cheros along with the Kharwars staged a revolt against the British under the leadership of Churaman Rai of Palamau, the last Chero king who was reported to be in arrears to the British (Hamilton, W. 1820: 285-86). In 1817 there were further revolts and the British finally took control of Palamau in 1818 ending the last of the Chero dominion (Sinha, A.P. 2000: 126).

Political power of Cheros in Palamau region is thus established during the medieval and British times. But glimpses of their stronghold in earlier times in Varanasi and occupation of Kaimur region by this community too is available. The Cheros of the region informed us during the interview that members of their community from Palamau still come to Kaimur to collect mud and tree branches for their marriage rituals as this region is regarded as the original home by them. Cunningham quoting Buchanan has noted that, "...the Suits conquered the country from the Cheros, and ruled over Kanish desh (Shahabad) and the greater part of Benares from AD 499 to 989". And Cheros still exist in some numbers in the Shahabad hills to the south of Chayanpur (Cunningham, A. 1884: 131).

The fragmented history of the existence of Cheros mentioned above established their occupation of different regions lying between the foothills of the Himalayas and the Kaimur during the late historical period. But in view to ascertain their contribution to Mundeshwari temple, evaluation of their antiquity during the early historic times is necessary. Francis Buchanan's statement, "...that they (Cheros and Kharwars) were princes of the Surak family, who flourished in the times of Gautam, about 500-600 *BC*" is important to note (Buchanan, F. 1934: 40) because it suggests identification of Cheros as a distinct community during the early part of the historical era. Crooke also quotes that the Cheros were perhaps the Kikatas of the Sanskrit

writers (Crooke, W. 1896: 214). These Nagavanshi tribes predominant from Chunar to Banka and Rajmahal, with major centres of power at Kabar near Bodh Gaya, Jaran near Sasaram and Ramgarh, were the first to accept Buddha's doctrines and after its decline converted to Hinduism as Shakti worshippers according to Buchanan (Hunter, W. 1877: 190).

Their early history has a glimpse from the recording of Buchanan's account, who notes that they were expelled from Shahabad about 400-500 CE by the Savars or Suars according to some and by a tribe called Hariha according to the Cheros themselves (Buchanan, 1934: 208). The Chandravanshi Hariha, 11th in descent from Atri, were the same as the Andhras of Major Wilford whose governance started in the Gangetic plain in the first century CE. Should this be correct, the five dynasties of the Sunakas, Sisunagas, Mauryas, Sungas and Kanwas were all probably of impure Chero tribe (Buchanan, H. 1934: 42). One may not be sure to accept this conjecture, but it does suggest existence of Cheros being contemporary to these dynasties in the region of our study. In the light of the early historical as well as the later historical association of Cheros, it is logical to assume that this tribal community was not only the original inhabitants of Gangetic-Kaimur region, but it had played a prominent role in the political and administrative setup of the middle Ganga plain. Incidentally, Northern Black Polished Ware (NBPW) remains are found from Churmaladih (Churmaridih), which is located between Chero villages Betri and Datiaon, in Kaimur district. NBPW is the diagnostic finding of archeological sites associated with important Pre-Mauryan and Mauryan settlements of the Ganga plain. The archaeology seems to corroborate the ethnography, which mentions Cheros' association with empire-based settlements.

That Cheros once were politically and administratively a powerful community is still intact in the memory of some of their old members. Vimla Baija (S. No. 40: Table 2), during our interview, told that,

We were also Zamindars in earlier times but had to flee from this region.

Similarly according to Goonā Devi (S. No. 38: Table 2), who is a food gatherer –

We are no less than babu sahebs (Rajputs), because we also once ruled on the land. After removing us from our ancestral land other people grabbed our domain.

The contribution of Cheros to the ancient culture of the region would be a natural outcome of their ruling supremacy. This is reflected in the numerous monuments of the region which are assigned to them. Since most of these are religious in nature, a brief note on Chero religion is necessary.

The religious belief and rituals of the Cheros is a mixture of Brahmanical and tribal religions. Their tribal practices are testified by the faith and worship of supernatural powers and ancestors. The chief deity of the Cheros is Siari, a vague female form sometimes known as Devi Sitala, the goddess of smallpox and Dih, the aggregate of village gods (Crooke, W. 1896: 219). Dih worship is performed both by men and women. Fowl, goats and pigs are sacrificed to the deity. The other deities in whom they believe are Baghaut, Chenru, Dharti, Dukhnahi, Duarpar and Darha to

Śodha  
**Mīmāṃsā**

An International Refereed Research Journal

---

Year : IV

No. : XIII

January-March 2017

---

*Editor in Chief*

**Dr. Rakesh Kumar Maurya**

*Associate Editor*

**Dr. Jayant Kumar  
Prenika Verma**

*Published by :*

**Kusum Jankalyan Samiti**  
Deoria, U.P. (INDIA)

विश्व शांति एवं नावीन्यी-विचारधारा 137-138

सत्येन्द्र कुमार

स्त्री-मुक्ति की संघर्षिता : एक विश्लेषण 139-140

सत्येन्द्र कुमार

संगीत कलाओं के विकास में नैतिकता का दृष्टिकोण 141-143

डॉ० सत्येन्द्र कुमार जी

संविधानात्मक समाज की पारमार्थिक परिस्थिति का अध्ययन 144-145

सत्येन्द्र कुमार जी

सिद्धांतकारों के अर्थशास्त्रीय और सामाजिक दृष्टिकोण : एक अध्ययन 146-147

अनन्दिता राय व डॉ० सत्येन्द्र कुमार जी

संस्कृत, संस्कृत, तथा संस्कृत के साथ आधुनिकीकरण का संबंध : एक प्रतिक्रिया

सत्येन्द्र कुमार कुमारजी 148-150

समाज में अधिष्ठाता की स्थापना और सामाजिक विचार प्रसारण के माध्यम से समाज में एक अध्ययन 151-154

डॉ० प्रदीप शर्मा, डॉ० अनन्दा कुमार

सामाजिक न्याय में नृत्य का 155-159

डॉ० अनन्दा शर्मा

संस्कृतशास्त्र में साहित्यिक व्यंग्य का एक विश्लेषण : एक प्रतिक्रिया

सत्येन्द्र कुमार 159-162

संस्कृत में अधिष्ठाता राष्ट्रीय संस्था

सत्येन्द्र कुमार 163-164

संस्कृत-श्रीमती में आधुनिक साहित्यिक दृष्टि

डॉ० रामानंद शर्मा 165-168

समाजशास्त्रीय और सामाजिक जीवन की दृष्टि : समाज के विकास के लिए

सत्येन्द्र कुमार राय 167-169

सत्येन्द्र कुमार

सत्येन्द्र कुमार शर्मा 170-171

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण में सामाजिक न्याय का दृष्टिकोण : एक सामाजिकशास्त्रीय अध्ययन

सत्येन्द्र कुमार शर्मा 172-174

ENTREPRENEURIAL MOTIVATION AND SUCCESS: THE SMALL SECTOR EXPERIENCE 172-169

Abhinav Mishra

## jle/kjh fl g fnoIdj \*fi ; di dekjh feJi

गौतम काशी हिन्दी विश्वविद्यालय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस

भारत एक कृषि प्रधान देश है। स्वतंत्रता के पश्चात् गौरी में जो परिवर्तन हो रहा है, उसका विवरण हिन्दी कथा-साहित्य में भी दिखता है। हिन्दी लेखकों ने अपने लेखनों के द्वारा राजनीतिक सामाजिक और सांस्कृतिक स्थिति को उभारने का प्रयास किया। उन्होंने गौरी के इन पहलुओं को समझा और उसके विकासमान स्वरूप को दर्शाया। गौरी भी आधुनिकता के कसेपूर में डूब रहे थे। साथ ही ग्राम्य संबंधी कथा साहित्य में भी गौरी का चित्रण कइल जा था। बिहार के ग्रामीण जीवन का अलग चरित्रों सिद्ध दिशाकार की रचनाओं में देखने को मिलता है। इनकी कहानियों में- 'बिहार के गौरी की निर्धनता, दबंग किसानों द्वारा कलजोर किसानों का शोषण-दमन, शिक्षा के क्षेत्र में व्याप्त अज्ञानस्था से चुपकों की बेरोजगारी और इसका स्त्रियों का बम और जैन शोषण तथा उत्पीड़न सरकारी संस्थाओं में व्याप्त भ्रष्टाचार आदि का उदाहरण दिया है।'

गणधारी सिंह दिशाकार को ग्रामीण जीवन के कथा-शिल्पकार के रूप में जाना जाता है। इनका जन्म 1 जनवरी 1938 में बिहार प्रदेश के अरिया जिला स्थित नरपतगंज नामक गाँव में हुआ था। दिशाकार जी एक निम्न-सहजसंगीय किला परिवार को सम्बन्ध रखते थे। प्राथमिक शिक्षा-द्विधा गौरी में हुई। उन्होंने अपनी उच्च शिक्षा की महाई भागलपुर विश्वविद्यालय से सम्पन्न की और मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा से व्याख्याता के पौर पर हिन्दी अध्यापन का कार्य आरम्भ किया। उनकी पहली कहानी 'नई कहानियों के जून 1971' के अंक में प्रकाशित हुई। उन्होंने लगभग बाइस कहानी संग्रह और सात उपन्यास लिखा है। इसके अलावा शोध अंशोचना, सम्करण आदि पर भी दर्जनों पुस्तकें हैं। इनके मुख्य उपन्यास 'ज्या धर ज्या परदेस', 'काशी सुबह का सूरज', 'पंचमी तत्पुत्र', 'आग-पानी आकाश', 'दूतों कापरे और आकाश सं-या है।

गणधारी सिंह दिशाकार के कथा-साहित्य में ग्रामीण यथार्थ की जटिल संरचना और उसके बहुस्तरीय पतों को महचानने की एक सकल कोशिश है। आधुनिक युग में सामाजिक साधना से बहुत साँसे ऐसे तत्वों का समावेश हो गया है, जिसके कारण सामाजिक-अज्ञानता जमरा अस्त होतो जा रही है। इन अज्ञानता में सहजुच न पूर्णतः स्वीकारात्मक है न नकारात्मक, सामाजिक परिवर्तन की दिशाएँ शुद्ध और विकृष्ट, दोनो और विचारगोत्र है- 'ऐसे सतसंग काग में हिन्दी कहानी अपनी जातीय परंपरा और आकस्मिक रूप से परिष्कृत मान-मूल्यों के बीच कथ्य, शिल्प और भासा के स्तर पर जो उपस्थापन कर रही है, उसकी अनन्य स्पष्ट सुनी जा सकती है। 2 दिशाकार जी ने अपने कथा-साहित्य में इसी सतसंग को बाजीगी से पकड़ने की कोशिश करते हैं।

समाज में परिष्कृत परिदृश्य को वह अपने लेखनों से दिखाने का प्रयास करते हैं।

गणधारी सिंह दिशाकार अपने लेखन कथों के बारे में कहते हुए लिखते हैं- 'मैं स्वयं ऐसी ही परिष्कृत पृष्ठभूमि से रहकर आया था इसलिए नी-बाप, भाई-बहन और गाँव समाज के परिवेश को पूरी अलगता से जानता पहचानता था। लेखक जिस परिवेश से संस्कार और आत्मा के स्तर पर महसूस जुड़ाव करता है।' दिशाकार जी अपने लेखनों में मुख्यतः बिहार प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों के समस्याओं और उसके यथार्थ या अपना लेखन किया- 'इनकी कुछ कहानियों में गौरी से निकलकर राह में जा जाने वाले सिद्धित और उच्च पतों पर स्थापित एकल पतियों की मानसिकता का अच्छा चित्रण किया गया है।' उन्होंने अपने कथा-साहित्य में परिष्कृत रिश्तों को ज्यादा महत्व दिया है। इसलिए दिशाकार जी की मानवीय-रिश्तों एवं मानवीय-मूल्यों के पुनर्स्थापन का लेखक माना जाता है। वह सामाजिक संबंधों के महत्व पर हमेशा जोर दिया। छोड़ें हुई जमीन में नयी पीढ़ी की उदात्ता दिखाई गयी है। संबंध टाचक में माता-पिता की और पुत्र के संबंधों पर अच्छा लेखन कार्य है। इनके अतिरिक्त विद्यादृष्टि, अनात्मसंज्ञा, रीतिर अज्ञान, बड़े होते लोग कहानियों सामाजिक सम्बन्धों और मानवीय मूल्यों से जुड़े हुए है।

दिशाकार जी कहानियों और उपन्यास गौरी के सभी क्षेत्रों से जुड़ा हुआ है। चाहे वो सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक संबंध हो या गौरी में नैतिक और सांस्कृतिक गिरावट का चित्रण। दिशाकार जी स्वयं कहते हैं कि- 'मैं मुख्यतः गाँव पर लिखता रहा हूँ और गाँव का उदाहरण बहुत जटिल होता है। वह सितना अगमनी है, उतना ही परचगामी। जाति-अज्ञानता जैसे लो पूरे हिन्दू-सामज का अडिग और निर्णिकत्व यथार्थ है। लेकिन गौरी के कुछ ज्यादा ही दिखाई पड़ता है।' अज्ञान अतीत और मन्दिर चर्चि कागा बोलों में गौरी में ही रहे नैतिक और सांस्कृतिक गिरावट को दर्शाया गया है। मोहरे, माटी-पाटी और मखान-भेखर जैसी कहानी गौरी में जातिगत संघर्ष और रिश्तों की टलकनों को दिखाता है। जगतल, जहा जैसी कहानी गौरी में जलते उपराध को संस्कृति का चित्रण करती है।

बिहार के गौरी की पृष्ठभूमि पर गणधारी सिंह दिशाकार द्वारा लिखित अज्ञान संधा बदलाव की प्रक्रिया से गुजर रहे गौरी का प्रभावित वृत्तावेक है। वहाँ जमींदारी समाप्ति के पश्चात् सवर्गी की घटती सत्ता और दलितों में जनताधिकार चेतना के कारण बहते आत्मविश्वास की कहानी है। यह आरंभों द्वारा उन्हीं की भाषा में कही गई उन्हीं की कहानी है। मुख्य पात्र भाई और उसके पूरे जीवन काल की घटना का वर्णन ही कथानक का मुख्य उद्देश्य है। दलितों का राजनीतिक व सामाजिक उत्थान और सवर्गी का

पतन सामाजिक-व्यवस्था को तोड़ता है। दलित युवक से शादी करने में बुद्धी ब्राह्मण को समाप्तन धर्म व्यवस्था को नष्ट होने का बर्तन अकाल स्रष्टा है। यह व्यवस्था कठलाव की प्रक्रिया से गुजर रहे गाँवों का एक अच्छी देखा प्रपन है। उच्चतर आर्थिक गाँव व्यवस्था मानवीय मूल्य और गाँवों से नष्ट हो रही सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था का चिह्न बनती है। आधुनिक दौर में कई-लिखे हुए और बुद्धिजन अपने गाँव के विकास के लिए अपने क्षेत्रों में लौटकर आते हैं, परंतु उनके सपनों को उनके ही गाँव में अविश्वसनीय उन्हा की जाती है। इस कथानक में प्रोफेसर प्रमोद का अपने छूटे हुए गाँव के लिए लड़कने का सजस्य और सपने लेकर आना और बेरहमी से उनके आर्थिक किया जाना आज के बदलते हुए गाँव का निर्मल उद्यार्थ है।

समधारी सिंह विद्यालय के कथा-साहित्य का मुख्य विषय विहार-प्रवेश के सामीप अवल है। उन्होंने गाँवों की संस्रवा और

बदलते-सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक परिदृश्य को बड़े ही संवेदनशील माध्यम से अपनी लेखनी के द्वारा चित्रित किया है। यह श्वस्त होती सामन्ती सामीप व्यवस्था के सापेक्ष जो नयी समाज-व्यवस्था उभर रही है, उसके शुभ-अशुभ पक्षों की विचारण जी से पूरी सतकता से उल्लेख है। यह युवा मूल्यों के स्थान पर स्थापित नई मूल्यों में एक अविश्वास एवं बहुरंग की रूँ देखते हैं और लेखन का मुख्य उद्देश्य गाँव के उद्यार्थ को समझाना और मानवीय मूल्य और सामाजिक संबंधों को सहेजना है।

### {Unk }

1. दिवनी लड़कनी का इतिहास (1978-2000), गीतक संघ, पृ. 20
2. समीपक समधारी सिंह विद्यालय, पृ. 4
3. 10 प्रतिक्रिया लड़कनी, समधारी सिंह विद्यालय, पृ. 5
4. दिवनी लड़कनी का इतिहास (1978-2000), गीतक संघ, पृ. 133
5. 10 प्रतिक्रिया लड़कनी, पृ. 5



ISSN: 2347-4491  
UGC Journal No. 49095  
IIJF Impact Factor: 2.582

Vol. 7 No. 2 Issue - 2 April - June, 2019

# आयान् *Ayan*

An International Multi-Disciplinary Quarterly Refereed Research Journal



Editor-in-Chief  
Dr. Bindu Bhushan Upadhyay

Executive Editor  
Dr. Vikramaditya Rai

Managing Editor  
Dr. Neeraj Kumar Rai

Editors  
Dr. Vikash Kumar  
Dr. Kumar Varun



## देव की कविता : नैतिकता बनाम स्वाभाविकता

वंशीधर उमाध्याय

शांघ छात्र, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने कविता पर विचार करते हुए लिखा है 'ज्यों-ज्यों हमारी कृतियों पर सम्यक्ता के नए-नए आवरण चढ़ते जाएंगे, त्यों-त्यों एक ओर तो कविता की आवश्यकता बढ़ती जाएगी, दूसरी ओर कवि कर्म कठिन होता जाएगा।' सभ्यता के इस यांत्रिक विकास के दौर में कविता की आवश्यकता भी बढ़ी है और कवियों की संख्या भी। अब सवाल यह है कि क्या अच्छी कविताओं की संख्या भी बढ़ी है। पिछले कुछ दशकों में लिखने वाले कई कवियों का नाम तो आप बता सकते हैं लेकिन उनके द्वारा लिखी गई दस अच्छी कविताओं का नाम बताना कठिन है। इसका एक बड़ा कारण यह है कि समकालीन कविता में रचनात्मक कम ऐसे कवि हैं जिनका अपनी भाषा के प्राचीन कवियों से जुड़ाव है। अपनी भाषा के प्राचीन कवियों से उनका दुराव सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर पर एक खिटा का विषय है। हिन्दी भाषा के प्राचीन कवि और खासकर शैतिकालीन कवि अब विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों में सिमट कर रह गए हैं, वो भी बहुत संकुचित धरातल पर। जब इतिहासबोध की सबसे अधिक जरूरत है, वैसे में इतिहासबोध से दूर खड़े अधिकांश 'वर्तमान कविता' के कवि कितना लम्बा सफर तय कर पाएंगे यह कहना मुश्किल है। हम भाषा के स्तर पर, संस्कृति के स्तर पर इतना संकुचित होते जा रहे हैं कि स्वाभाविकता ही संदेह के घेरे में आ गई है। आज सम्पूर्ण मनुष्य की खोज से पहले जरूरी है स्वाभाविक मनुष्य की खोज। और यह तब सम्भव है, जब अपनी भाषा के प्राचीन कवियों के साथ समकालीन कवि एक संवाद स्थापित करे। संवाद की इस कड़ी में शैतिकालीन कविता के प्रमुख स्वर देव की कविताओं पर एक नजर डालते हैं, क्योंकि देव की कविता मनुष्य जीवन की स्वाभाविक अनुभूतियों की कविता है।

शैतिकालीन कवियों में देव का विशिष्ट स्थान है। उनका काव्य संसार विस्तृत और बड़ा है जिसमें व्यापकता के साथ-साथ गहराई भी है। वे शैतिकालीन कवियों में सबसे अधिक व्यापक अनुभव के भारतीय कवि हैं। उनके काव्य संसार में काश्मीर, तैलंग, उत्कल, सीबीर, द्रविड़, मूटान, आदि देशों की प्रकृति और तरुणियों का जितना स्वाभाविक और सुन्दर वर्णन मिलता है, उतना सच्चा वर्णन हिन्दी में किसी कवि के यहाँ नहीं है। देव की कविताओं में रस, छन्द, अलंकार का जितना सटीक और स्वाभाविक प्रयोग मिलता है उससे उनकी काव्य प्रतिभा का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। देव ने जब अपनी काव्य रचना प्रारम्भ की, उस समय रेखा के प्रमुख शायर बली की धूम थी। मराठी साहित्य में श्रीर और गुजराती में प्रेमानंद मष्ट जैसे प्रतिभाशाली कवि रचनात्मक थे। ब्रज में सुखदेव, वृद्ध उदयनाथ और लाल कवि जैसे कवियों की कविताई चारों तरफ गूँज रही थी। इन सभी कवियों के बीच देव ने अपनी कविताई शुरू की और बहुत कम दिनों में ही वह कवि मंडली और कविता प्रेमियों के यहाँ सम्मान के पात्र हो गए। देव की कवित्व शक्ति का प्रमाण यह भी है कि अपने समकालीन कवियों में सबसे अधिक उनकी का प्रभाव कई अन्य कवियों पर देखने को मिलता है। उदाहरण स्वरूप आप बोधा, बनिप्रवीण, पद्माकर तथा अन्य कई कवियों पर देव की कविताओं की छाप देख सकते हैं।

देव की कविताओं का सबसे प्रमुख रंग अनुराग का है। यहाँ तक की उनका दियोग वर्णन और वैराग्य भी अनुराग से रंजित है। आज भी जीवन और कविता में अनुराग का होना जरूरी है। अनुराग हमारे सागात्मक सम्बन्धों को प्रगाढ़ करता है। सत्ता द्वारा बार-बार इसी सागात्मक सम्बन्ध को नैतिकता के आवरण में लपेट कर मनुष्य के स्वाभाविक वृत्तियों को मार दिया जाता है। देव की कविता इसी नैतिकता के खिलाफ स्वाभाविकता की लड़ाई लड़ती है। उदाहरण रूप में आप उनकी कविता का एक रंग देखिए—

Reg. No. : 600/2009-10

ISSN : 0975 - 7880

# MANAVIKI

*An International Journal of Humanities & Social Science*

UGC List No:-42515

IJF Impact Factor:- 3.097

Vol. XI

No. 1

Issue II

January - June

2019



**Chief Editor**

*Ravindra N. Singh*

**Editors**

*Vikas Kumar Singh  
Amit Kumar Upadhyay  
Niraj Kumar Mishra*

**Associate Editors**

*Ajit Kumar Choudhary  
Amit Ranjan*

**A REFEREED JOURNAL OF THE SOCIETY FOR  
EDUCATION & SOCIAL WELFARE, VARANASI - 221005  
(INDIA)**

# हिन्दी आलोचना और महावीरप्रसाद द्विवेदी

दशमीवार उपाध्याय

सहायक प्राध्यापक, महिला महाविद्यालय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

महावीरप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य के कुछ बड़े साहित्यकारों में हैं, जिन्होंने आधुनिक हिन्दी साहित्य को अनेक विषय क्षेत्रों से जोड़कर व्यापकता प्रदान की है। जहाँ तक हिन्दी आलोचना के विकास का संबंध है, यह कह सकते हैं कि जिस हिन्दी आलोचना का उदभव भारत-युग में हुआ था, उस आलोचना को द्विवेदी जी ने व्यापक और तार्किक बनाया। वे एक कुशल सम्पादक होने के साथ ही साथ हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी, मराठी और बंगाल साहित्य के नर्मदा भी थे। उन्होंने हिन्दी साहित्य को ज्ञान के अन्व अनुशासन और भाषाओं के साथ जोड़कर समृद्ध किया। जैसे तो वे 'सरस्वती' पत्रिका के सम्पादक बनने से पहले प्रसिद्ध हो चुके थे, लेकिन इस पत्रिका के सम्पादक बनने के बाद उन्होंने संगठन समता का परिचय दिया। वैकट शर्मा लिखते हैं - 'सन् 1896 ई. के प्रारम्भ में नामरी प्रचारिणी पत्रिका में उनकी 'वृत्तसम्भार' की भाषा विषयक समालोचना प्रकाशित हुई, जिसका उत्तरवर्ती अश कालिकाकर से प्रकाशित होने वाले 'हिन्दोस्थान' नामक प्रसिद्ध पत्र में छपा। द्विवेदी जी की संस्कृत में नैसर्गिक रुचि थी। उन्होंने सन् 1897 ई. के नवम्बर से सन् 1898 ई. के मई तक वैकटेश्वर समाचार पत्र में 'कालिदास के अतुसंहार की भाषा' पर निरंतर रूप से समालोचनाएँ लिखीं। सन् 1901 ई. में 'कालिदास की समालोचना' प्रकाशित हुई, जिसमें रघुवंश और मेघदूत की आलोचना भी सम्मिलित कर दी गई थी। इस प्रकार कालिदास के ग्रन्थों का समीक्षण हिन्दी में प्रथम बार उनकी लेखनी का समतकार प्रदर्शित करता हुआ समालोचना जगत में सामने आया।'

हिन्दी आलोचना में महावीरप्रसाद द्विवेदी की व्यवस्थित शुरुआत 'सरस्वती' पत्रिका के सम्पादक बनने के साथ 1903 ई. से होती है। 'सरस्वती' के माध्यम से उन्होंने लेखकों का ऐसा दल तैयार किया जो आधुनिक हिन्दी साहित्य में नवीन चेतना के प्रसार करने में उनका सहायक बने। इसके साथ ही वे हिन्दी ग्रन्थ के विकास में विभिन्न भाषाओं और विषयों को माध्यम बनाएँ। कविता में ब्रज भाषा की जगह लड़ी बोली को प्रतिष्ठित करना और साम्राज्यवाद विरोध उनके आलोचना कर्म के प्रधान प्रतिमान हैं। रामविलास शर्मा उनकी भाषा विषयक दृष्टि की विवेचना करते हुए लिखते हैं - 'द्विवेदी जी ने हिन्दी भाषा के विकास के अनेक पक्षों पर ध्यान दिया। भारत में अंग्रेजी की स्थिति, भारतीय भाषाओं के बीच सम्पर्क भाषा की समस्या, हिन्दी-उर्दू की समानता और आपसी भेद, हिन्दी और जनपदीय उप-भाषाओं के संबंध आदि पर उन्होंने गहराई से विचार किया।' रामविलास शर्मा ने यह माना है कि द्विवेदी जी के महत्त्वपूर्ण कार्यों में एक भाषा संबंधी परिष्कार है, लेकिन वे साथ ही यह भी मानते हैं - 'भाषा-परिष्कार का काम उनके व्यापक कार्यक्रम का एक अंश मात्र है और वह उसका सबसे महत्त्वपूर्ण अंश नहीं है।' वहीं आचार्य शुक्ल का मानना है कि - 'द्वितीय स्थान के भीतर बहुत दिनों तक व्याकरण की विधिवलता और भाषा की रूपरूपादि दोनों साथ-साथ दिखाई पड़ती रहीं। व्याकरण के व्यतिक्रम और भाषा की अस्थिरता पर थोड़े ही दिनों में कोप दृष्टि पड़ी, पर भाषा की रूपरूपादि की ओर उतना ध्यान नहीं दिया गया। पर जो कुछ हुआ वही बहुत हुआ और उसका लिए हमारा हिन्दी साहित्य में महावीरप्रसाद द्विवेदी का सदा जगती रहेगा। व्याकरण की शुद्धता और भाषा की सफाई के प्रवर्तक द्विवेदी जी ही थे। 'सरस्वती' के सम्पादक के रूप में उन्होंने आधी हुई पुस्तकों के भीतर व्याकरण और भाषा की अशुद्धियाँ दिखाकर लेखकों को बहुत सावधान कर दिया। यद्यपि कुछ हठी और अनाड़ी लेखक अपनी भूलों और गलतियों का समर्थन तरह-तरह की बातें बनाकर करते रहे, पर अधिकतर लेखकों ने लाभ उठाया और लिखते समय व्याकरण आदि का पूरा ध्यान रखने लगे। गद्या की भाषा पर द्विवेदी जी के इस शुभ प्रभाव का स्मरण जब तक भाषा के लिए शुद्धता आवश्यक समझी जायेगी तब तक बना रहेगा।' जिस भाषा के परिष्कार का सम्बन्ध शुक्ल द्विवेदी जी की बड़ी उपलब्धि मान रहे हैं उसे रामविलास शर्मा केवल अश

UGC Approved, Journal No. 49321  
Impact Factor : 6.125



ISSN : 0976-6650

शोध दृष्टि

Shodh Dristi

An International Peer Reviewed Refereed Research Journal

Vol. 14, No. 1.1

January, 2023

PEER REVIEWED JOURNAL



## लोकानुभव सांस्कृतिक बोध के कवि ज्ञानेन्द्रपति...

डॉ० नशीम उपाध्याय

ज्ञानेन्द्रपति का परिचय उसी समय-समय है, क्योंकि वह जहाँ भी छे वहाँ के लोकानुभव सांस्कृतिक बोध से हिंदी भाषा, भाषा को समृद्ध करने छे है। वस्तुतः, ज्ञानेन्द्रपति लोकानुभव सांस्कृतिक बोध के कवि है। उनकी कविताएँ मानवीय रूप से अत्यंत संवेदनशील आध आधुनिक के रूप में बड़ी बोधी हैं और 'बन-बनु तथा जीवन-मृत्यु' के भिन्नताओं को अलग-अलग कर देती है। इसलिए ज्ञानेन्द्रपति की कविताएँ कई स्तरों पर आकर्षित करती हैं। आकर्षण इस रूप में और ज्यादा बढ़ जाता है कि इनके काल-संसार से मुक्त के बाद पाठक के सामने एक नई दुनिया निर्मित होती है। वह दुनिया जहाँ खुशी और संघर्षों के बीच बोल जाते हैं। पाठक को भी अधिक अपनी भावना-भाव के साथ जोड़ कर ले के बाद भी ज्ञानेन्द्रपति के कई प्रेम, जीवन संघर्ष, वैचारिक और सांस्कृतिक पक्षधर रूप अधिक उर्ध्वगामी है कि पाठक चकित हो जाता है। कवि का शुरु मानना है कि "कविता केवल अपने समय से बृहत्तर दृष्टि की जाती है, लेकिन वह उस काल-रूप से कलित नहीं होती, उसकी भविष्योन्मुखता ही उसकी न-मरझाने वाली नवीनता का ब्यक्त होती है।" [1] ज्ञानेन्द्रपति की कालानुभूति मानवीय अनुभव का ही सिद्धांत है। वास्तविक-अर्थ में मानवीय अनुभूति कालानुभूति की संज्ञा रखी जाती है, जब वह अर्थगत को कहीं अधिक छोड़कर के साथ संश्लेषित कर पाती है। कालानुभूति का वास्तविक काम है सामान्य अनुभूति को कहीं अधिक अर्थगत रूप में संश्लेषित करना और ज्ञानेन्द्रपति की 'कालानुभूति की चुनौत' में वह छोड़कर गए रूप में लिखती है।

ज्ञानेन्द्रपति का पहला संग्रह (जोख हाथ बनते हुए) 1970 में आता है। इस संग्रह की कविताओं में कवि का युवा मन मुग्धता-वीन स्तर पर जुड़ा है। पहला - जीवन और प्रकृति के इंद्र को समझने के स्तर पर, जहाँ निर्माण की प्रक्रिया शामिल है। दूसरा - वैचारिक इंद्र के स्तर पर, जहाँ इतिहासबोध की निर्मिती है। तीसरा - कला के स्तर पर, जहाँ अनुभूति की आत्मसाधिव्यक्ति की प्रक्रिया है। काल के रूप में उसका कोई मूल्य नहीं, जहाँ सिर्फ प्रकृति का अनुकरण हो। प्रकृति के अनुकरण का मतलब होता है, प्रकृति प्रदत्त पदार्थ को वापस करना जब तक कोई कवि प्रकृति प्रदत्त पदार्थ को अपनी आत्मानुभूति से नहीं तपसता, सच्ची कविता नहीं बनती है। ज्ञानेन्द्रपति की कविताओं में जीवन और प्रकृति को समझने की जो वैचारिक लक्ष्य है वही उनकी कालानुभूति को प्रकृति के अनुकरण से बचाती है और सच्ची कविता के रूप पर अग्रसर करती है। उनके पहले संग्रह की कविता 'एक गर्भवती औरत के प्रति दो कविताएँ' को उदाहरण के तौर पर देख सकते हैं।

“वह तुम्हारा उदर ब्रह्माण्ड हो गया है  
इसमें क्या है? एक बन रहा सिद्धु भरा?  
किल्ली में लिपटी मांस पानवी चेकना बरा?  
किल्ली फैसली का रही है परिधि तुम्हारे उदर की तुम क्या जानो  
कि अन्तरिक्ष तक चली गयी है यह विरूप गोलार्ध और ये  
पेट-पीछे, मकान, सड़कें, मैं, वह फूल, वह कुत्ता, उछलता वह भेड़क  
रिपायी माय, बाढ़ करता माती, क्षितिज पर का सूख  
सब उनके अन्दर चले गये हैं  
और तुम भी” [2]

यहाँ कवि प्रथम मूलक विद्या के साथ केवल सी के उदर को नहीं देख रहा है, वह भविष्य की उस आहट को महसूस कर रहा है जिसके निर्माण में पूरी प्रकृति है। हाँ, क्या छे यहाँ उदर का ब्रह्माण्ड में बदलना सिर्फ प्रकृति का अनुकरण नहीं है और न ही इस बदलने की क्रिया में कोई एक रातिक या निरामक है, बल्कि इस निर्माण में एक सामूहिकता है जो प्रकृति और मानव के सहभाव से निर्मित हो रही है। इसलिए यहाँ पेट-पीछे, मकान, सड़कें, फूल, कुत्ता, उछलता हुआ भेड़क, रिपायी हुई माय, बाढ़ करता माती, क्षितिज पर का भूला है। इस विभाग में कवि की कालानुभूति संघनित हो कर बिना विदूषण चर्चों को रखती है वह कवि का युग सत्य है। सला और पूर्ण के मठबोट से जो अर्थगत निर्मित हुई है उसने आत्मजन (आत्मगत आदिवासी समुदाय) के जीवन को तपस कर दिया है। उसकी समकाली प्रकृति ने विकास के नाम जो ब्रह्मचर्य की है उसमें प्रकृति चरण पर है। विकास के नाम पर जो रखा जा रहा है, क्या उनके तप-कभी हमने प्यार दिया है। उन आदिवासियों के जीवन का विचार हीन देना बिनके जीवन, जंगल और जमीन के दोहन से चमकती



LETTER • OPEN ACCESS

## A unifying framework for BRST and BRST-related symmetries

To cite this article: Bhabani Prasad Mandal et al 2023 EPL 144 14001

View the [full-text article](#) for updates and enhancements.

# A unifying framework for BRST and BRST-related symmetries

BHARANI PRASAD MANDAL<sup>1</sup>, SUMIT KUMAR RAJ<sup>2</sup> and RONALDO THIBES<sup>3,✉</sup>

<sup>1</sup> Department of Physics, Banaras Hindu University - Varanasi, 221005, India

<sup>2</sup> Veer Kumar Singh University - Ara, Bhagalpur, 821101, India

<sup>3</sup> Theoretical Physics Department, CERN - 1211 Geneva 23, Switzerland

received 13 July 2023; accepted in final form 9 October 2023

published online 26 October 2023

**Abstract.** – We propose a general framework to study BRST-related transformations. We investigate different forms of BRST and BRST-related symmetries, realized within a prototypical first-class system, including ordinary BRST, anti-BRST, dual-BRST, anti-dual-BRST and additional sets of new BRST-related symmetries. We identify a proper  $Z_4 \times Z_2$  discrete group of symmetries of the ghost sector, responsible for connecting the various forms of BRST-related transformations. Their distinct roles in different Hamiltonian and Lagrangian approaches are clarified. As a unifying framework, we use a gauge invariant prototypical first-class system encompassing an extended class of physical models.

 Copyright © 2023 The author(s)

Published by the EPLA under the terms of the [Creative Commons Attribution 4.0 International License](https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/) (CC BY). Further distribution of this work must maintain attribution to the author(s) and the published article's title, journal citation, and DOI.

**Introduction.** – One of the most prominent symmetries in physics, the fundamental Becchi-Rouet-Stora-Tyutin (BRST) transformation mixing physical fields with the anticommuting Faddeev-Popov ghosts has been introduced in the early seminal works of Becchi, Rouet, Stora and Tyutin [1–4]. Following that original BRST symmetry, by interchanging ghosts and anti-ghosts, a similar transformation was soon reported in the literature [5–7] generating what came to be known as anti-BRST symmetry [8–10]. On the other hand, the dual-BRST first appeared as a nonlocal nilpotent symmetry in QED [11], with more polished local covariant variants in [12,13] and has been initially criticized as being nothing more than a disguised ordinary BRST symmetry [14–17]. Their algebraic independence became more clear when Malik and collaborators constructed a consistent Hodge theory framework housing all of them on firm mathematical grounds [18–25]. In the present letter, we clarify the roles, similarities, differences and further properties of the four mentioned symmetries (BRST, anti-BRST, dual-BRST, anti-dual-BRST), an associated bosonic symmetry corresponding to the Laplacian operator in Hodge theory, as well as new sets of BRST-related symmetry transformations involving the Lagrange multiplier and ghost sectors within a concise prototype gauge-invariant model.

In this way, we isolate the main features of those symmetries in a model-independent way.

Our prototypical system comes from the generalization of the model first presented in ref. [26], in which we include an open potential function  $V(q^4)$  enlarging its applicability by allowing additional dynamics. This model can directly reproduce many others as particular cases, both mechanical [27–30] and field theoretical ones [26,31,32], and also enjoys a strong similarity with other gauge field models [28]. In ref. [28], the rigid rotor was used to convey a deep analogy with QED and QCD, mainly regarding its (anti-)BRST symmetry aspects. However, in [28] it was not so clear how a classical rigid rotor could be embodied with gauge symmetries. That explanation in a systematic form for a generalized quantum rigid rotor can be seen in [26], where a construction of a gauge-invariant potential obtained along the Faddeev-Jackiw-Barneskin-Neu-Witten (FJBW) symplectic algorithm is shown. Hence, we construct a unifying framework for considering BRST and BRST-related symmetries, where all their subtleties can be worked out and clarified and in which new BRST-related symmetries naturally emerge. For the reader's convenience, the present letter is organized as follows. In the next section below, we present our prototypical first-class system and perform its BV quantization, calculating the Green's functions generating functional. In the third section, we discuss other forms

✉E-mail: rthibes@cern.ch (corresponding author)

of BRST transformations corresponding to the (anti-) (dual-)BRST symmetries of the quantum action and show how these symmetries can be obtained from each other by composing operations from a discrete group of symmetries of the action. In the fourth section, we show that the configuration space version of the previous BRST related symmetries clearly distinguishes the dual forms while the BRST and anti-BRST transformations leave the classical action invariant, the dual-BRST and anti-dual-BRST ones leave the gauge-fixing terms invariant. In the fifth section, we discuss the algebra obtained from the BRST charge operators and obtain a corresponding bosonic symmetry associated to the Casimir operator of that algebra. The sixth section is reserved for the report of new BRST-related symmetries. We end in the last section with our conclusion and final remarks.

**BFV generating functional and ordinary BRST symmetry.** – Consider a prototypical first-class gauge-invariant dynamical system described by the generalized canonical coordinates  $(q^k, p_k)$ , with  $k = 1, \dots, n$ , defined by the Hamiltonian function

$$H = U(q^k, p_k) + V(q^k) + q^k T(q^k), \quad (1)$$

where  $V(q^k)$  and  $T(q^k)$  denote two given differentiable real functions. The former represents an arbitrary physical potential, while the latter characterizes a first-class constraint condition imposed along the system dynamical evolution. Still in eq. (1), we define further [26]

$$\begin{aligned} U(q^k, p_k) &\equiv \frac{R^{ij} T_i T_j p_k p_l}{2 f^{ij} T_i T_j}, \\ R^{ij}(q^m) &\equiv \int^N \int^M f^{ij} - f^{jk} f^k, \end{aligned} \quad (2)$$

with  $f^{ij} = f^{ij}(q^k)$  denoting a symmetric nondegenerated two-form and  $T_i$  standing for the partial derivative of  $T$  with respect to  $q^i$ . The system (1) can be easily extended to field theory models by considering DeWitt rotation, in which the Latin indexes carry also a continuous space dependence and the discrete summations include also spatial integrations.

Corresponding to the first-class constraints  $T(q^k)$  and  $p_0$ , we introduce a pair of Grassmann anticommuting ghosts variables  $(\mathcal{C}, \bar{\mathcal{C}})$  along with their respective canonically conjugated momenta  $(\mathcal{P}, \bar{\mathcal{P}})$  with ghost numbers  $gh\mathcal{C} = gh\bar{\mathcal{P}} = 1 = -gh\bar{\mathcal{C}} = -gh\mathcal{P}$ , and define the extended phase space as

$$z^A = (q^k, \mathcal{C}, \bar{\mathcal{C}}, p_k, \bar{\mathcal{P}}, \mathcal{P}), \quad \mu = 0, k \quad (3)$$

Hence, the generating functional can be written in the extended phase space as

$$\mathcal{Z}_h = \int \mathcal{D}z^A \exp(iS_{\text{eff}}), \quad (4)$$

in terms of the effective action

$$S_{\text{eff}} = \int dt (\dot{q}^k p_k + \dot{q}^0 p_0 + \dot{\mathcal{C}} \bar{\mathcal{P}} + \dot{\bar{\mathcal{C}}} \mathcal{P} - H_h), \quad (5)$$

and extended Hamiltonian

$$H_h = U(q^k, p_k) + V(q^k) + \{\Omega, \Psi\}, \quad (6)$$

with  $\Omega$  and  $\Psi$  denoting respectively the BRST charge and gauge-fixing fermion in the extended phase space. The curly brackets in (6) stand for the generalized Poisson (anti-)brackets binary operation, defined for two given functions  $F(z^A)$  and  $G(z^A)$  as

$$\{F, G\} = \frac{\partial^R F}{\partial z^A} \{z^A, z^B\} \frac{\partial^L G}{\partial z^B} \quad (7)$$

in terms of the non-null fundamental bracket relations

$$\{q^k, p_k\} = \delta_k^j, \quad \{\mathcal{C}, \bar{\mathcal{P}}\} = \{\bar{\mathcal{C}}, \mathcal{P}\} = -1 \quad (8)$$

At quantum level, we promote all generalized coordinates from the extended phase space, including auxiliary and ghost variables, to linear operators acting on a Hilbert space satisfying fundamental (anti-)commutation relations directly obtained from (8) with  $h = 1$  as

$$\begin{aligned} [q^k, p_k] &= i\delta_k^j, & [\mathcal{C}, \bar{\mathcal{P}}] &= -i, \\ [q^k, p_0] &= i, & [\bar{\mathcal{C}}, \mathcal{P}] &= -i, \end{aligned} \quad (9)$$

with the general definition

$$[A, B] = AB - (-1)^{\epsilon_A \epsilon_B} BA \quad (10)$$

for two operators  $A$  and  $B$  with Grassmann parities  $\epsilon_A$  and  $\epsilon_B$ . The quantum BRST charge in the extended Hamiltonian phase space  $\Omega_h$ , the operatorial version of  $\Omega$  in eq. (6), can be written as

$$\Omega_h = i(\bar{\mathcal{C}}T(q^k) + \mathcal{P}p_0), \quad (11)$$

and is responsible for generating the ordinary BRST symmetry. For the fundamental variables, we have

$$\begin{aligned} \delta_0 q^k &= 0, & \delta_0 q^0 &= -\mathcal{P}, & \delta_0 \mathcal{C} &= 0, & \delta_0 \bar{\mathcal{C}} &= p_0, \\ \delta_0 p_k &= \mathcal{C}T_k, & \delta_0 p_0 &= 0, & \delta_0 \mathcal{P} &= T, & \delta_0 \bar{\mathcal{P}} &= 0. \end{aligned} \quad (12)$$

The BRST charge  $\Omega_h$  has ghost number +1 and is nilpotent. As a direct consequence, the transformations (12) are off-shell closed.

Following ref. [33], we choose the ghost dependence of the gauge-fixing fermion as

$$\Psi = \bar{\mathcal{P}}q^0 + \mathcal{C}\chi, \quad (13)$$

where  $\chi = \chi(q^k, p_k, q^0, p_0)$  denotes a ghost-independent open function, and write the quantum BRST invariant Hamiltonian as

$$\hat{H} = U + V + q^0 T + p_0 \chi + i\mathcal{C}[T, \chi]\bar{\mathcal{C}} + i\mathcal{P}[p_0, \chi]\bar{\mathcal{C}} + \mathcal{P}\bar{\mathcal{P}}. \quad (14)$$

It can be immediately checked that the nilpotent ordinary BRST transformations (12) leave the Hamiltonian (14) invariant.

In order to have a nice working action and define a consistent framework for a later systematical discussion of various forms of BRST and BRST-related symmetries, particularly ready for comparison with previous studied cases in the literature, we consider next the standard



gauge function

$$\begin{aligned} \chi &= \vartheta^{-1}B + \frac{\xi}{2}p_0, \quad \text{with} \\ B &= \int^0 T_0 \varphi_j \quad \text{and} \quad \vartheta \equiv \omega^{-2} \int^0 T_i T_j. \end{aligned} \quad (15)$$

In the last equation above, we have introduced the quantity  $\omega$  for dimensional consistency. Since it enters through the gauge-fixing, it does not affect the physical results. Indeed, it will prove very useful for the construction of new symmetries and their comparisons, keeping track of the right dimensions throughout calculations. It could be argued that  $\omega$  introduces a scale, however, besides being allowed to take an arbitrary value for proper gauge-fixing, its time inverse physical dimension can be achieved by a combination of physical constants and parameters coming from the potential functions present in (1) characterizing the specific working model. Hence, the specific standard form (15) leads to the extended gauge-fixed action

$$\begin{aligned} S_{\text{ext}} = \int dt & \left( \dot{q}^i p_i + \mathcal{C}\dot{\mathcal{P}} + \dot{\mathcal{C}}\mathcal{P} - U(q^k, p_k) - V(q^k) \right. \\ & \left. - q^i T_i(q^k) - \frac{\xi}{2} p_0^2 + p_0(\dot{q}^0 - \vartheta^{-1}B) + \omega^2 \mathcal{C}\dot{\mathcal{C}} - \mathcal{P}\dot{\mathcal{P}} \right), \end{aligned} \quad (16)$$

in which  $\xi$  represents a control gauge-fixing parameter. We may compare the gauge choice (15) to the  $H_\xi$  gauges commonly used in QED and QCD, in which we have the limits of  $\xi$  tending to 0, 1, 3 and  $\infty$  corresponding respectively to the Landau, Feynman-'t Hooft, Fried-Yennie and unitary gauges.

**A set of BRST-related symmetries — Hamiltonian approach.** — Still in the extended phase space, additionally to the ordinary BRST symmetry (12), we have other BRST-related symmetries enjoyed by action (16). It can be seen by direct inspection that the three transformation sets

$$\begin{aligned} \text{anti-BRST:} \quad & \delta_{\bar{q}} q^i = 0, & \delta_{\bar{q}} q^0 &= -\mathcal{P}, \\ & \delta_{\bar{q}} p_i = -\dot{\mathcal{C}} T_i, & \delta_{\bar{q}} p_0 &= 0, \\ & \delta_{\bar{q}} \mathcal{C} = p_0, & \delta_{\bar{q}} \dot{\mathcal{C}} &= 0, \\ & \delta_{\bar{q}} \mathcal{P} = 0, & \delta_{\bar{q}} \dot{\mathcal{P}} &= -T, \end{aligned} \quad (17)$$

$$\begin{aligned} \text{dual-BRST:} \quad & \delta_{\mathcal{Q}} q^i = 0, & \delta_{\mathcal{Q}} q^0 &= -\omega \mathcal{C}, \\ & \delta_{\mathcal{Q}} p_i = \omega^{-1} \mathcal{P} T_i, & \delta_{\mathcal{Q}} p_0 &= 0, \\ & \delta_{\mathcal{Q}} \mathcal{C} = \omega^{-1} T, & \delta_{\mathcal{Q}} \dot{\mathcal{C}} &= 0, \\ & \delta_{\mathcal{Q}} \mathcal{P} = 0, & \delta_{\mathcal{Q}} \dot{\mathcal{P}} &= \omega p_0, \end{aligned} \quad (18)$$

$$\begin{aligned} \text{anti-dual-BRST:} \quad & \delta_{\mathcal{Q}} q^i = 0, & \delta_{\mathcal{Q}} q^0 &= -\omega \mathcal{C}, \\ & \delta_{\mathcal{Q}} p_i = -\omega^{-1} \mathcal{P} T_i, & \delta_{\mathcal{Q}} p_0 &= 0, \\ & \delta_{\mathcal{Q}} \mathcal{C} = 0, & \delta_{\mathcal{Q}} \dot{\mathcal{C}} &= -\omega^{-1} T, \\ & \delta_{\mathcal{Q}} \mathcal{P} = \omega p_0, & \delta_{\mathcal{Q}} \dot{\mathcal{P}} &= 0, \end{aligned} \quad (19)$$

leave the extended action (16) invariant. The above transformations (17), (18) and (19) are respectively generated by the charges

$$\begin{aligned} \Omega_{\bar{q}} &= i(-\dot{\mathcal{C}} T_i(q^k) + \mathcal{P} p_0), & \Omega_{\mathcal{Q}} &= i(\omega^{-1} \mathcal{P} T_i(q^k) + \omega \mathcal{C} p_0), \\ \Omega_{\bar{\mathcal{Q}}} &= i(-\omega^{-1} \mathcal{P} T_i(q^k) + \omega \mathcal{C} p_0), \end{aligned} \quad (20)$$

with ghost numbers

$$gh \Omega_{\bar{q}} = gh \Omega_{\mathcal{Q}} = -1, \quad gh \Omega_{\bar{\mathcal{Q}}} = +1, \quad (21)$$

and, similarly to (12), are off-shell nilpotent. Consequently, the corresponding symmetries are off-shell closed. The two dual-symmetries  $\delta_{\mathcal{Q}}$  and  $\delta_{\bar{\mathcal{Q}}}$  can be obtained respectively from  $\delta_{\bar{q}}$  and  $\delta_{\bar{\mathcal{Q}}}$  by the shifting

$$\begin{aligned} a: \quad & \mathcal{C} \rightarrow \omega^{-1} \bar{\mathcal{P}}, \quad \dot{\mathcal{C}} \rightarrow \omega^{-1} \bar{\mathcal{P}}, \quad \mathcal{P} \rightarrow \omega \mathcal{C}, \quad \dot{\mathcal{P}} \rightarrow \omega \dot{\mathcal{C}}, \\ & \text{(anti-)BRST} \rightarrow \text{(anti-)dual-BRST}, \end{aligned} \quad (22)$$

while the anti-symmetries  $\delta_{\bar{q}}$  and  $\delta_{\bar{\mathcal{Q}}}$  can be generated respectively from  $\delta_{\bar{q}}$  and  $\delta_{\bar{\mathcal{Q}}}$  by

$$\begin{aligned} b: \quad & \mathcal{C} \rightarrow -\mathcal{C}, \quad \dot{\mathcal{C}} \rightarrow \dot{\mathcal{C}}, \quad \mathcal{P} \rightarrow \mathcal{P}, \quad \dot{\mathcal{P}} \rightarrow -\dot{\mathcal{P}}, \\ & \text{(dual-)BRST} \rightarrow \text{(dual-)anti-BRST}. \end{aligned} \quad (23)$$

It turns out that action (16) is invariant with respect to the group  $Z_4 \times Z_2$  of discrete permutations among the ghost variables. More precisely, the transformations (22) and (23) can be concretely taken as the two generators, respectively  $a$  and  $b$ , for the  $Z_4 \times Z_2$  group presentation given by

$$Z_4 \times Z_2 = \langle a, b \mid a^4 = b^2 = e, ab = ba \rangle. \quad (24)$$

That is a symmetry group of order eight, whose elements give rise to the transformations  $\pm$ BRST,  $\pm$ anti-BRST,  $\pm$ dual-BRST,  $\pm$ anti-dual-BRST. The finite group (24) characterizes all possible dimensionally consistent permutations among the ghost fields  $(\mathcal{C}, \dot{\mathcal{C}}, \omega^{-1} \mathcal{P}, \omega^{-1} \dot{\mathcal{P}})$  resulting in canonical transformations preserving the fundamental relations (9). The same happens with any BRST-invariant action, the corresponding ghost permutation group of symmetries of the action produces other BRST-related symmetries and can be used as a criterion to span all possibilities. Thus, in a sense, the ghost permutation group describes a *symmetry of symmetries*. As an illustration, we mention here the known fact that quadratic gauges in QCD lead to actions without anti-BRST invariance [34], which can be understood from the lack of that symmetry in the corresponding group of ghost fields permutations. In the present case, by plugging (15) into (14), we obtain the quantum Hamiltonian

$$\mathcal{H} = U + V + \dot{q}^0 T + \frac{\xi}{2} p_0^2 + p_0 \dot{q}^0 - \omega^2 \mathcal{C}\dot{\mathcal{C}} + \mathcal{P}\dot{\mathcal{P}} \quad (25)$$

explicitly invariant under the ghosts permutations group (24) and which, consequently, can be checked to respect the previous symmetries (12), (17), (18) and (19). Therefore the cohomology classes generated by charges (11) and (20) produce the corresponding BRST-related closed and exact states. In particular, the zero

ghost number physical states  $|p\bar{h}\eta\rangle$  are defined by the annihilation property

$$0 = \Omega_b(p\bar{h}\eta) = \Omega_b(p\bar{h}\eta) = \Omega_d(p\bar{h}\eta) = \Omega_d(p\bar{h}\eta). \quad (26)$$

We remark that all previous symmetries occur in the extended phase space in terms of a Hamiltonian approach. Nevertheless, their original discovery can be clearly retrieved on the past literature within somewhat different contexts, namely, ordinary BRST [1–4], anti-BRST [5–7] and dual-BRST [11, 13, 35–37]. Here, we see all of them interconnected within a systematic unified treatment. Usually, genuine dual-BRST transformations are characterized by the invariance of the gauge-fixing term. In the present case however, by defining

$$S_{gf} = \int dt \left( p_0 (d^0 - d^{-1}B) - \frac{\xi}{2} p_0^2 \right) \quad (27)$$

we have the variations

$$\begin{aligned} \delta_d S_{gf} &= -\omega \int dt p_0 (\dot{C} + \bar{P}) \quad \text{and} \\ \delta_{\bar{d}} S_{gf} &= \omega \int dt p_0 (\bar{P} - \dot{C}). \end{aligned} \quad (28)$$

In fact, in order to have the well-known elegant interpretation corresponding to the plain invariances of the classical action and gauge-fixing terms respectively under (anti-)BRST and (anti-)dual-BRST transformations, we have to turn to a Lagrangian context.

**BRST symmetries in configuration space.** – In this section, we investigate further the various BRST and BRST-related symmetries of the prototypical system (1) from a gauge-fixed Lagrangian viewpoint. Concerning the momenta variable  $p_0$ , we see that it appears in the action (16) only through the gauge-fixing term  $S_{gf}$  defined in (27). Performing a functional integration over  $p_0$  would bring down an expression of the form

$$\frac{1}{2\xi} (q^0 - d^{-1}B)^2 \quad (29)$$

which, as argued by the end of the second section, can be compared to the usual quadratic coefficient gauge-fixing term present in the QED and QCD quantum Lagrangians. However, as is well known, the presence of this term spoils the off-shell nilpotency of the BRST symmetries which become closed only by means of the equations of motion, *i.e.*, on shell. It is clear that  $p_0$  plays the role of a Nakanishi-Lautrup variable and should remain alive in the theory for the sake of off-shell BRST closure. Therefore, we perform the functional integration of (4) in the ghost momenta variables  $\mathcal{P}$  and  $\bar{\mathcal{P}}$ , after which we obtain a neat first-order action in the exponential argument of  $Z_0$  given by

$$\begin{aligned} S = \int dt & \left( q^0 p_0 - \dot{C}\bar{C} - U(q^k, p_k) - V(q^k) - q^0 T(q^k) \right. \\ & \left. - \frac{\xi}{2} p_0^2 + p_0 (q^0 - d^{-1}B) + \omega^2 \dot{C}\bar{C} \right) \end{aligned} \quad (30)$$

To that extent, after the  $\mathcal{P}$  and  $\bar{\mathcal{P}}$  functional integrations, the symmetries and respective conserved charges of the new concise action (30) corresponding to eqs. (12) and (17) to (20) become

$$\begin{aligned} \text{ordinary BRST:} \quad & \delta_b q^0 = 0, \quad \delta_b q^0 = -\dot{C}, \\ & \delta_b p_0 = \dot{C}T_0, \quad \delta_b p_0 = 0, \\ & \delta_b \dot{C} = 0, \\ & \delta_b \bar{C} = p_0. \end{aligned} \quad (31)$$

$$\begin{aligned} \text{anti-BRST:} \quad & \delta_{\bar{b}} q^0 = 0, \quad \delta_{\bar{b}} q^0 = \dot{\bar{C}}, \\ & \delta_{\bar{b}} p_0 = -\dot{\bar{C}}T_0, \quad \delta_{\bar{b}} p_0 = 0, \\ & \delta_{\bar{b}} \dot{C} = p_0, \\ & \delta_{\bar{b}} \bar{C} = 0. \end{aligned} \quad (32)$$

$$\begin{aligned} \text{dual-BRST:} \quad & \delta_d q^0 = 0, \quad \delta_d q^0 = -\omega \dot{C}, \\ & \delta_d p_0 = -\omega^{-1} \dot{C}T_0, \quad \delta_d p_0 = 0, \\ & \delta_d \dot{C} = \omega^{-1} T, \\ & \delta_d \bar{C} = 0. \end{aligned} \quad (33)$$

$$\begin{aligned} \text{anti-dual-BRST:} \quad & \delta_{\bar{d}} q^0 = 0, \quad \delta_{\bar{d}} q^0 = -\omega \dot{\bar{C}}, \\ & \delta_{\bar{d}} p_0 = -\omega^{-1} \dot{\bar{C}}T_0, \quad \delta_{\bar{d}} p_0 = 0, \\ & \delta_{\bar{d}} \dot{C} = 0, \\ & \delta_{\bar{d}} \bar{C} = -\omega^{-1} T. \end{aligned} \quad (34)$$

with respective charges

$$\begin{aligned} \mathcal{Q}_b &= i(\dot{C}T + \dot{\bar{C}}p_0), & \mathcal{Q}_{\bar{b}} &= -i(\dot{C}T + \dot{\bar{C}}p_0), \\ \mathcal{Q}_d &= i(-\omega^{-1} \dot{C}T + \omega \dot{\bar{C}}p_0), & \mathcal{Q}_{\bar{d}} &= i(-\omega^{-1} \dot{\bar{C}}T + \omega \dot{C}p_0). \end{aligned} \quad (35)$$

The above transformations are off-shell nilpotent and each one of them can be checked to characterize a particular symmetry of the action (30). Furthermore, now the two dual-BRST symmetries do leave the gauge-fixing term invariant. Indeed, while the ordinary BRST and anti-BRST transformations leave the original classical action invariant, with the variation of the gauge-fixing term being canceled by the necessary ghost terms, the dual and anti-dual BRST transformations leave the gauge-fixing term invariant by itself, with a mutual cancellation between the variations coming from the classical Lagrangian and ghost terms. That means we have

$$\delta_b S_c = \delta_{\bar{b}} S_c = 0 \quad \text{and} \quad \delta_d S_{gf} = \delta_{\bar{d}} S_{gf} = 0. \quad (36)$$

with

$$S_c \equiv \int dt \{ q^k p_k - U(q^k, p_k) - V(q^k) - q^k T(q^k) \} \quad (37)$$

representing the classical action and the ghost-fixing term  $S_{GF}$  given by eq. (27). Along this line, in BRST-cohomology terms, we understand the BRST invariance of the action  $S$  in the sense that it can be decomposed as a sum between a BRST-exact and a BRST-closed parts. This assertion holds for each one of the four BRST symmetries, including the dual ones, as we may conveniently rewrite (30) in one of the two equivalent forms below,

$$S = \int dt \left\{ q^k p_k - U(q^k, p_k) - V(q^k) - q^k T(q^k) + \frac{1}{2} \eta_0 \dot{\eta}_0 [\zeta \zeta^2 - (q^0)^2 - \omega^{-2} \theta^{-2} B^2] \right\} \quad (38)$$

or

$$S = \int dt \left\{ -U(q^k, p_k) - V(q^k) - \frac{\zeta}{2} p_0^2 + p_0 (q^0 - \theta^{-1} B) + \frac{1}{2} \eta_0 \dot{\eta}_0 \left[ \left( \frac{\omega q^k p_k}{T} \right)^2 - (q^0)^2 \right] \right\}. \quad (39)$$

This represents an important feature distinguishing the (anti-)BRST from the (anti-)dual-BRST symmetries.

**BRST algebra.** – In this section we investigate the Lie superalgebra generated by the previous BRST charges. We start by recalling that all four introduced BRST charges (35) are fermionic operators and fully off-shell nilpotent, i.e.,

$$\mathcal{Q}_0^2 = \mathcal{Q}_1^2 = \mathcal{Q}_2^2 = \mathcal{Q}_3^2 = 0 \quad (40)$$

All BRST charges are conserved under time evolution modulo equations of motion. We may additionally introduce a ghost number operator given by

$$\mathcal{G} = i(\zeta \dot{\zeta} - \dot{\zeta} \zeta), \quad (41)$$

satisfying

$$\begin{aligned} [\mathcal{G}, \mathcal{Q}_0] &= \mathcal{Q}_0, & [\mathcal{G}, \mathcal{Q}_1] &= -\mathcal{Q}_1, \\ [\mathcal{G}, \mathcal{Q}_2] &= -\mathcal{Q}_2, & [\mathcal{G}, \mathcal{Q}_3] &= \mathcal{Q}_3 \end{aligned} \quad (42)$$

Ghost number conservation is then warranted by the global scale symmetry

$$C \rightarrow e^\lambda C, \quad \bar{C} \rightarrow e^{-\lambda} \bar{C}, \quad (43)$$

with  $\lambda$  denoting a continuous constant parameter. Indeed, transformations (43) clearly leave the quantum action (30) invariant, while time conservation of (41) follows directly from the equations of motion.

The two (anti-)BRST operators and the (anti-)dual-BRST ones satisfy

$$\begin{aligned} [\mathcal{Q}_0, \mathcal{Q}_0] &= 0, & [\mathcal{Q}_1, \mathcal{Q}_1] &= 0, \\ [\mathcal{Q}_0, \mathcal{Q}_1] &= [\mathcal{Q}_0, \mathcal{Q}_2] = [\mathcal{Q}_0, \mathcal{Q}_3] = [\mathcal{Q}_1, \mathcal{Q}_2] = [\mathcal{Q}_1, \mathcal{Q}_3] = [\mathcal{Q}_2, \mathcal{Q}_3] = [\mathcal{Q}_2, \mathcal{Q}_0] = [\mathcal{Q}_3, \mathcal{Q}_0] = [\mathcal{Q}_3, \mathcal{Q}_1] = [\mathcal{Q}_3, \mathcal{Q}_2] = 0, \end{aligned} \quad (44)$$

The above defined quantity  $\mathcal{W}$  represents a Casimir operator for the superalgebra generated by the BRST charges and gives rise to a new bosonic transformation defined for

an arbitrary function  $F$  as

$$\delta_W F \equiv (F, \mathcal{W}). \quad (45)$$

For the fundamental variables of the theory, the non-trivial  $\delta_W$  transformations read explicitly

$$\delta_W p_0 = \omega^{-1} T \dot{\zeta}, \quad \delta_W q^0 = -\omega p_0, \quad (46)$$

and constitute a further symmetry leaving (30) invariant.

**New symmetries.** – In none of the previously seen symmetries does the Nakanishi-Lautrup variable  $p_0$  transform. Inspired by the fact that the gauge-fixing term (27) is left invariant under the substitution

$$p_0 \rightarrow -p_0 + \frac{2(q^0 - \theta^{-1} B)}{\zeta}, \quad (47)$$

it is possible to look for correspondingly new forms of BRST transformations involving  $p_0$ . Accordingly, in the same fashion as the particular models discussed in refs. [38–40], the quantum action (30) enjoys the further nilpotent symmetries

$$\Delta_1 p_0 = \zeta T_0, \quad \Delta_1 p_0 = -\frac{2}{\zeta} (\omega^2 \zeta + \bar{C}), \quad (48)$$

$$\Delta_1 q^0 = -\bar{C}, \quad \Delta_1 \bar{C} = -p_0 + \frac{2}{\zeta} (q^0 - \theta^{-1} B),$$

of ghost number 1 and its corresponding anti version

$$\Delta_2 p_0 = -\bar{C} T_0, \quad \Delta_2 p_0 = \frac{2}{\zeta} (\omega^2 \bar{C} + \bar{C}), \quad (49)$$

$$\Delta_2 q^0 = \bar{C}, \quad \Delta_2 \bar{C} = p_0 - \frac{2}{\zeta} (q^0 - \theta^{-1} B),$$

of ghost number  $-1$ .

Additionally, we report here two brand new sets of non-local symmetries for action (30) with ghost numbers 1 and  $-1$  given, respectively, by

$$\begin{aligned} \Delta_3 p_0 &= \frac{1}{\zeta} (\omega^2 \zeta + \bar{C}), & \Delta_3 q^0 &= \frac{1}{2} \bar{C} + \frac{\omega^2}{2} \int C dt, \\ \Delta_3 \bar{C} &= \frac{1}{2} p_0 - \frac{1}{\zeta} (q^0 - \theta^{-1} B) - \frac{1}{2} \int T dt, \end{aligned} \quad (50)$$

and

$$\begin{aligned} \Delta_4 p_0 &= -\frac{1}{\zeta} (\omega^2 \bar{C} + \bar{C}), & \Delta_4 q^0 &= -\frac{1}{2} \bar{C} - \frac{\omega^2}{2} \int C dt, \\ \Delta_4 \bar{C} &= \frac{1}{2} p_0 - \frac{1}{\zeta} (q^0 - \theta^{-1} B) - \frac{1}{2} \int T dt. \end{aligned} \quad (51)$$

The above  $\Delta_2$  symmetries are clearly distinct from the  $\Delta_1$  ones, as the former do not affect  $p_0$ , i.e.,

$$\Delta_2 p_0 = \Delta_3 p_0 = 0, \quad (52)$$

while the latter contains terms corresponding to integrals of  $T$  and  $C$ . A comparative analysis of the  $\Delta$  symmetries as well as its relevance in specific quantum field theory models is currently under investigation.

**Conclusion.** — The quantization of the prototypical first-class system along the functional BVFV procedure has allowed us to realize a considerable set of forms of BRST-related transformations constituting symmetries at quantum level. These symmetries comprised not just the ordinary BRST ones but included also the dual- or co-BRST ones which have appeared in the literature in a plethora of different contexts in field theory. By clarifying the action of a discrete group of transformations on the ghost sector, we have seen that the dual- and anti-BRST symmetries can be freely interchanged among a total of eight possibilities connected by canonical transformations in a Hamiltonian framework. When coming to a gauge-fixed Lagrangian approach, the dual-BRST symmetries achieve its full glorious interpretation, displaying its main characteristic of leaving the gauge-fixing term invariant. Further, the BRST charges exhibit the Hodge theory properties and it is possible to define a Casimir operator leading to an extra bosonic symmetry closing a Lie superalgebra among the conserved symmetry generators. The brand new forms of BRST-related symmetries reported are currently under further analysis.

\*\*\*

RPM acknowledges the research Grant for faculty under IoE Scheme (No. 0031) of Banaras Hindu University, Varanasi.

**Data availability statement:** No new data were created or analysed in this study.

## REFERENCES:

- [1] Becchi C., Rouit A. and Stora L., *Phys. Lett. B*, **52** (1974) 344.
- [2] Becchi C., Rouit A. and Stora L., *Commun. Math. Phys.*, **42** (1975) 127.
- [3] Tyutin I. V., *Gauge Invariance in Field Theory and Statistical Physics in Operator Formalism*, P. N. Lebedev Physical Institute preprint, FIAN Nix 39, LEJIBDKV-75, arXiv:0812.0580 [hep-th] (1975).
- [4] Becchi C., Rouit A. and Stora L., *Ann. Phys.*, **98** (1976) 287.
- [5] Conci G. and Ferrara R., *Nuovo Cimnto A*, **32** (1976) 161.
- [6] Conci G. and Ferrara R., *Phys. Lett. B*, **63** (1976) 91.
- [7] Ojima I., *Prog. Theor. Phys.*, **64** (1980) 625.
- [8] Hwang S., *Nucl. Phys. B*, **231** (1984) 396.
- [9] Raulino L., *Phys. Rep.*, **129** (1985) 1.
- [10] Hwang S., *Nucl. Phys. B*, **222** (1987) 107.
- [11] Lavillo M. and McMullan D., *Phys. Rev. Lett.*, **71** (1993) 3758.
- [12] Tang Z. and Finkelstein D., *Phys. Rev. Lett.*, **73** (1994) 3255; **74** (1995) 4359.
- [13] Yang H. S. and Lee H. H., *J. Korean Phys. Soc.*, **28** (1995) 572.
- [14] Rivillas V. O., *Phys. Rev. Lett.*, **75** (1995) 4150.
- [15] Raulino S. J. and Gauth P., *Phys. Rev. D*, **52** (1995) 7205.
- [16] Park D. K., Kim H. S. and Kim J. K., *Mod. Phys. Lett. A*, **11** (1996) 2555.
- [17] Rivillas V. O., *Phys. Rev. D*, **53** (1996) 2247.
- [18] Malik R. P., *Mod. Phys. Lett. A*, **14** (1999) 1637.
- [19] Malik R. P., *J. Phys. A*, **33** (2000) 2437.
- [20] Harikumar V., Malik R. P. and Sivarajah M., *J. Phys. A*, **33** (2000) 7149.
- [21] Malik R. P., *Mod. Phys. Lett. A*, **15** (2000) 2079.
- [22] Kumar R. and Malik R. P., *EPL*, **94** (2011) 11001.
- [23] Bhania T., Shukla D. and Malik R. P., *Eur. Phys. J. C*, **73** (2013) 2535.
- [24] Kumar S., Kuroda H. K. and Malik R. P., *Int. J. Mod. Phys. A*, **36** (2021) 2150212.
- [25] Kuroda S., Kumar R. and Malik R. P., *Ann. Phys.*, **414** (2020) 168087.
- [26] Thines R., *Mod. Phys. Lett. A*, **36** (2021) 2150116.
- [27] Gupta S. and Malik R. P., *Eur. Phys. J. C*, **68** (2010) 325.
- [28] Nijmehansky D., Pirotschopoulos C. R. and Weinstraub M., *Ann. Phys.*, **183** (1988) 226.
- [29] Shukla D., Bhania T. and Malik R. P., *Adv. High Energy Phys.*, **2016** (2016) 2618101; **2018** (2018) 5217871.
- [30] Bhania T., Shrivast N. and Malik R. P., *Int. J. Mod. Phys. A*, **34** (2019) 1901831.
- [31] Pandey V. K. and Thines R., *Mod. Phys. Lett. A*, **37** (2022) 2250066.
- [32] Anonias Neto J., Moraes W. and Thines R., *EPL*, **141** (2022) 22001.
- [33] Hounniaux M., *Phys. Rep.*, **126** (1985) 1.
- [34] Joglekar S. D. and Mandal B. P., *Phys. Rev. D*, **51** (1995) 1919.
- [35] Yang H. S. and Lee H. H., *J. Math. Phys.*, **37** (1996) 6106.
- [36] Malik R. P., *Int. J. Mod. Phys. A*, **15** (2000) 1555.
- [37] Malik R. P., *Mod. Phys. Lett. A*, **16** (2001) 477.
- [38] Lashin A., *Class. Quantum Grav.*, **18** (2001) 3885.
- [39] Rivillas V. O., *Class. Quantum Grav.*, **19** (2002) 2525.
- [40] Bai S. K. and Manvat R. P., *Mod. Phys. Lett. A*, **25** (2010) 2281.

# पूर्वदेवा

ISSN 0974-1100

सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

**P Ū R V A D E V Ā**

A Social Science Research Journal

Peer Reviewed Bilingual International Research Journal  
The Journal Indexed in the UGC-CARE list.

वर्ष 27 अंक 107 एवं 108

■ संयुक्तांक ■

अक्टूबर, 2021 - मार्च, 2022

प्रधान सम्पादक

डॉ. हरिमोहन धवन



मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी प्रकाशन

# पूर्वदेवा

सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

PŪRVADEVĀ

वर्ष , अंक एवं संयुक्त



प्रधान सम्पादक  
डॉ. हरिमोहन धवन



सह सम्पादक  
डॉ. प्रेमलता चुटेल



प्रकाशक  
पी.सी. बैरवा



मध्यप्रदेश वलिल साहित्य अकादमी  
बाल सङ्ग्रह, सेक्टर स्कूल के सामने, उजीन (म.प्र.) 466010  
दूरभाष (0734) 2518737

E-mail : [mpdsaujn@gmail.com](mailto:mpdsaujn@gmail.com) Website : [www.mpdsa.org](http://www.mpdsa.org)

# पूर्वदेता

सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

## परामर्श मण्डल

डॉ. प्रकाश बरतुनिया

कुलसचिव- पाठ्य साधन अभ्युक्तक केन्द्रीय विश्वविद्यालय, लखनऊ

डॉ. रामगोपाल सिंह

पूर्व अध्यक्ष- डॉ. पी. डार, अभ्युक्तक सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, मद्रा (म.प्र.)

डॉ. रहमान अली

पूर्व अध्यक्ष- भारतीय भारतीय विश्वविद्यालय अभ्युक्तक विज्ञान विश्वविद्यालय, उज्जैन

डॉ. जयप्रकाश कर्दम

परिचय साहित्यकाल एवं समाजशास्त्र, दार्जिल साहित्य कॉलेज, नईदिल्ली

डॉ. रमेशचन्द्र जाटव

अतिरिक्त संचालक, राजकीय कला एवं शिक्षा विभाग, मध्यप्रदेश

डॉ. डी. डी. बैरिया

अध्यक्ष एवं निदेशक, माध्यामिक शिक्षा संचालन विभाग विश्वविद्यालय, उज्जैन

## सम्पादक मण्डल

डॉ. अंगनन्द शिर्सेसरा

पूर्व अध्यक्ष- अभ्युक्तक व माध्यामिक शिक्षा संचालन विभाग, महविद्यालय, मन्डली

डॉ. रीलेन्द्र भारद्वाज

पूर्व अध्यक्ष- समाजशास्त्र व अध्यापक अभ्युक्तक पीठ, विश्व विश्वविद्यालय, उज्जैन

डॉ. एन.एच. बंसोडा

पूर्व अध्यक्ष, समाजशास्त्र, वास्तु, कला संचालक विभाग महविद्यालय, उज्जैन

डॉ. अरुण कुमार

समाजशास्त्राध्यक्ष, शिक्षण, कलाविभाग शिक्षक महाविद्यालय, जदनी (म.प्र.)

डॉ. ब्रह्मदीप अग्रुने

समन्वयक, व्यक्तिगत विकास प्रयोग, अभ्युक्तक मध्यप्रदेश, भीमल

## पुष्पान सम्पादक

डॉ. हरिमोहन धवन

अध्यक्ष, राजकीय विज्ञान व पूर्व प्रशासन, उच्च शिक्षा विभाग, (म.प्र.)

## सह सम्पादक

डॉ. प्रेमलता गुरैल

अध्यक्ष, शिक्षण अभ्युक्तक विभाग विश्वविद्यालय, उज्जैन

प्रकाशक : पी. सी. बैरवा

समाचारिका : मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी,

बालाघट मार्ग, सेंट्रल स्टेशन के सामने, उज्जैन (म.प्र.)

इस अंक का मूल्य रुपये 150/-

वित्तीय सहयोग

भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद, नईदिल्ली

विद्या नवयुग, नारंगी जयपुर

संपादन व प्रकाशन सर्वथा अवैतनिक एवं अन्यायकारिक

**पूर्वदेवा**  
**सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका**

□ अनुक्रम □

1. राजस्थान के सहरीय जनजाति के सैकणिक विकास में आभन  
छात्राध्यासों की भूमिका डॉ. विशनराम चौधरी 1
2. भारत में गरीबी को दशा एवं दिशा डॉ. सुवील कुमार चौधरी 13
3. सतत्व विकास एवं गौधी विचार दर्शन डॉ. कामना बेन 26
4. महाकवि वसंत अरुंधक शेवडे प्रणीत विंध्यवासिनी महाकाव्य में भारत का  
प्रकृतिक भूगोल व काव्यमयी राष्ट्र आधारित धार्मिक जीवन डॉ. इंदरराज मीना 35
5. भारतीय राजनीतिक चिंतन में दत्तिलोद्धार का पूना पैक्टः  
गांधी बनाम अम्बेडकर डॉ. कैलाशचन्द सामोता 45
6. डॉ. अम्बेडकर के विचारों के परिप्रेक्ष्य में दत्तिलोत्थान और  
अस्पृश्यता का प्रश्न डॉ. अजीत कुमार राय 56
7. संत पीताजी का समाज दर्शन : एक विवेचन डॉ. संगतराज नागर 62
8. भारतीय राजनीति और जाति श्री शिवु कुमार 65
9. तलानबादा और परित्यक्ता महिलाओं की संवेगात्मक परिपाकता व  
इनके बालकों की संवेगात्मक स्थिरता डॉ. श्रीमती सुन्दर त्वागी 74
10. भाषा साहित्य डॉ. अम्बेडकर का सामाजिक न्याय श्री संजय कुमार 84
11. पंचतल्प पर महाभारत का प्रभाव डॉ. विशाल चारदाज 102
11. Economic Prospects of Emerging Tourism in Kashmir Valley Dr. Munim A. Beigh 108
12. पुस्तक समीक्षा सुश्री अर्चना वैन्वली 120

पूशिका में प्रकाशित लेख एवं उनमें आकृत विचार लेखकों के निजी विचार हैं,  
सम्पादक व प्रकाशक वह उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है ।



## डॉ. अम्बेडकर के विचारों के परिप्रेक्ष्य में दलितोत्थान और असृश्यता का प्रश्न

डॉ. भागीरथ कुमार राय

सहायक प्रोफेसर, संस्कार कालम्हार्डे पटेल कालेज, ममुजा जैपुर

E-mail: brijabhu19@gmail.com

डॉ. प्रियंका कुमारी मिश्रा

पीएच-डीकरीएल पीएल, डॉ.अम्बेडकर अन्तर्राष्ट्रीय केंद्र, नईदिल्ली

### सारांश

जाति व्यवस्था हिन्दू समाज का अभिन्न अंग रही है। प्राचीन समाज में जाति का वितरण मिलता है। साम्राज्य के चोत्र ही जाति बलकर काम के प्रकार पर जातियत विचारण का आधार बना। भारतीय समाज में दलित सामाजिक स्तरीकरण के सबसे अधिक स्तर पर है। प्राचीन भारत में जाति शब्द का प्रयोग किसी भी जगह पर नहीं मिलता है। दैविक साहित्य में वर्ण और अन्न शब्दों में कुल शब्द का प्रयोग विभिन्न कार्यों में निष्कृत लोगों के लिए किया गया है। कालान्तर में यही कुल और वर्ण जाति व्यवस्था में परिष्कृत हो गए। कृषि और गैर-कृषिक काम में लिये जाने वाले लोग हिन्दू वर्ण में वर्ण व्यवस्था के कर्मणा स्वरूप के चमना स्वरूप में बदलने से वे हाशिये पर धकेल दिए गए। आधुनिक भारत में इस समाज को सभी अधिकारों से वंचित रखा गया और उन्हें वंचितकृत किया गया। इसी वंचितकृत समाज को दलित कहा गया।

दलित लोग उन्हें कहा गया जो शुद्र वर्ग से भी ऊपर की श्रेणी में जाते थे। मानक हिन्दी शब्द काष्ठ में दलित का अर्थ दलितघर बरिद तथा गना-बीना और बहुत ही निम्न कोटि का कहा गया है। दलित शब्द का प्रयोग आधुनिक समय में सबसे ज्यादा किया जा रहा है। दलित शब्द मुख्यतः मराठी से है जिसका अर्थ 'दुखे' से है। संस्कृत हिन्दी शब्द कोश में दलित का अर्थ दलन किया हुआ, गिरा हुआ और अविश्वसित कहा गया है। वर्तमान समय में उन सभी जातियों के लिए दलित शब्द का प्रयोग किया जाने लगा जो समाज में सबसे निम्न स्तर पर था। और उन्हें कोई सामाजिक, राजनीति, जातिक और धार्मिक अधिकार नहीं प्राप्त थे। इन दलित लोगों को कालान्तर में विभिन्न नामों से पुकारा गया है। जैसे - शुद्र, अन्धकार, अनपूत्र, अधूरा, किरायेदार, जाउन-डोकन इत्यादि।

ज्याँतीका फुले ने सर्वप्रथम उन्नीसवीं शताब्दी में 'दलितों की श्रेणी' शब्द का प्रयोग किया गया। लोक प्रभासित रूप से इसका प्रयोग सत्तर के दशक में दलित पंथेरे द्वारा किया गया। आधुनिक समय में दलितों को हरिजन नाम से भी सम्बोधित किया जाता है। हरिजन शब्द का प्रयोग महात्मा गाँधी ने किया था। विभिन्न शब्दकोशों को अनुसार दलित का अर्थ सफ़्त होने के बाद हिन्दी के साहित्यकार और अन्य विद्वान् दलित शब्द को विभिन्न रूप में परिभाषित करते हैं। डॉ. रवीचन्द्र सिंह वैष्णव दलित शब्द की व्याख्या करते हुए कहते हैं- "दलित" वह है जिसे भारतीय संस्कृतान ने अनुसूचित जाति का दर्जा दिया है।" इसी प्रकार केवल भारती का मानना है कि 'दलित' वह है जिस पर अस्पृश्यता का निमग्न लागू किया गया है। जिसे कठारे और मान्दे कार्य करने के लिए कर्म किया गया है। जिसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतन्त्र व्यवसाय करने से मना किया गया और जिस पर अछूतों ने सामाजिक निर्दोषपताओं को सर्वोच्च लागू की, और जो दलित है और इसके अन्तर्गत सभी जातियाँ आती हैं, जिन्हें अनुसूचित जातियों कहा जाता है।\* अनुसूचित जाति शब्द अंग्रेजी द्वारा दिया गया। 1930-31 के गोलमेज सम्मेलन में ब्रिटिश प्रशासन द्वारा यह रूप किया गया कि जो जातियाँ हिन्दू समाज में किसी न किसी कारण से उपेक्षित रही हैं, जिनकी एक अनुसूची बनायी जाये। इस कारण 1931 के जनगणना में एक सूची तैयार की गयी। पूजा-पूजा सम्बन्धिता के बाद भारत सरकार अधिनियम 1935 में पहली बार अनुसूचित जाति शब्द का प्रयोग किया गया।\*

जाति-प्रथा वर्ण-व्यवस्था का विकृत रूप था। इस व्यवस्था के कारण प्राचीन काल से ही उच्च वर्ण द्वारा अछूतों को समाज से लगभग अलग कर दिया गया। साथ ही उच्च वर्ण द्वारा अनेक प्रकार से सामाजिक प्रतिशोध निम्न वर्ण के ऊपर चोम दिए गए। उनके ब्रह्म-पान, सदन-सहन के तीर-तरीके और निजस के निर्मित और कठोर नियम बने हुए थे। अछूत वर्ण उच्च वर्ण द्वारा प्रवृत्त नदी छट, कुआँ या जलाशयों से पानी नहीं ले सकते थे। मंदिरों में प्रवेश नहीं कर सकते थे। शास्त्रों का अध्ययन, पूजा-पूजा, यज्ञ इत्यादि भी उनके लिए वर्जित थे। उन्हें कोई भी ऐसे अधिकार प्राप्त नहीं थे, जिससे कि वे अपनी स्थिति सुधार सकें। मध्यकालीन भारत में मुसलमानों के आगमन के पश्चात् इनकी स्थिति और बदतर हो गयी। इस्लाम में धर्म परिवर्तन के कारण हिन्दू समाज में भक्ति आन्दोलन का उत्पन्न हुआ और सभी जाति को हिन्दू धर्म में बनाते रखने के लिए कुछ मंदिरों को समाज के लिए हाताकारक बताया गए। और सभी जाति को मुख्यधारा से जोड़ने का प्रयास

साथ सही द्वारा किया गया पर ये प्रयास असफल रहा। इस समय काबीर, वैद्यनाथ, भगुदास जैसे विभिन्न जातियों के संत परिलक्ष्य थे।

आधुनिक भारत का उदय अंग्रेजों के भारत में राज्य स्थापित करने के समय से माना जाता है। नई सभ्यता और संस्कृति के प्रभाव में भारत में पुनर्जागरण को जन्म दिया। जिसके फलस्वरूप भारत में कई धार्मिक-सामाजिक सुधार आंदोलन हुए। इस जाति-प्रथा की सुप्रभा को समाप्त करने में अंग्रेजी सरकार की नीतियाँ एवं भारतीय समाज-सुधारकों दलों का योगदान है। राजाराम मोहन द्वारा स्थापित ब्रह्मसमाज, काशी दयानंद सरस्वती द्वारा स्थापित अरवसमाज, चण्डीका प्रबंधन समाज, त्रिवेकानंद का संस्कृत मिशन जैसी संस्थाओं ने जाति-प्रथा के विरुद्ध जागृता उठाई और इस प्रथा के दुष्परिणाम को समाज के सामने रखा। 1917 ई० में विद्वत्भाई पटेल ने जाति-प्रथा को समाप्त करने का प्रयास किया। 1922 ई० में जाति-व्यवस्था को मंग करने के लिए एक संस्था स्थापित की गई।

अंग्रेजों द्वारा विकसित आधुनिकता के संसाधनों के ज्ञान जैसे वास्तुतः के साधनों (रिज, बस इत्यादि) के विकास, औद्योगिकीकरण एवं शहरीकरण की प्रक्रिया, कानून को समझ समानता की नीति, शिक्षा-प्रसार इत्यादि ने जाति-प्रथा को बंधन ढीले कर दिए। राष्ट्रीय आंदोलन एवं कांग्रेस के नेताओं ने भी इस सामाजिक ढोब को दूर करने, विशेषतः अस्पृश्यता को मिटाने एवं हरिजनों को समानता का दर्जा देते के लिए संघर्ष किया। महात्मा गांधी ने इस दिशा में विशेष प्रयत्न किए। उन्होंने अधुनी को 'हरिजन' कहा और उनके उद्धार के लिए अनेक प्रयास किए। उनके प्रयासों के फलस्वरूप 1932 ई. में 'अखिल भारतीय हरिजन संघ' की स्थापना की गई। पूना-गैजट के द्वारा अंग्रेजों को विभाजन की नीति को अस्वीकृत करने हेतु सित्त नवंबर, 1933 से दो अगस्त, 1934 तक लगातार दस महीने तक गांधी ने अस्पृश्यता मिटाने की एक लंबी यात्रा भारत में की। इस यात्रा के 'हरिजन दौरा' के नाम से जाना जाता है। धरम हाजर पंथ सौ मील की इस यात्रा में उन्होंने न केवल अस्पृश्य जन-जागृति पैदा की, बल्कि हरिजन कल्याण कोष की स्थापना की और उसको लिए आठ लाख रुपये भी जमा किए।

महाराष्ट्र के श्री सीमराज अंबेडकर का जन्म 14 अप्रैल 1891 को इंदौर के महु नामक स्थान में हुआ था। उनके पिता रामजी पीज में सुबेदार थे। उनकी माता का नाम सीमाबाई

सनातन या, जब वो महज पांच साल के थे तभी उनकी माता का देहांत हो गया था। अम्बेडकर ने सन् 1907 में मैट्रिक और एन्ट्रान्स एग्जामिनेशन से इंटर की परीक्षा पास की। 1912 में उन्होंने बीए पास करने के उपरान्त न्यूयार्क विश्वविद्यालय से 1915 में एमए की डिग्री हासिल की।

भीमराव अम्बेडकर का जीवन एक प्रकार से स्वर्ण और निम्न वर्ग के हिंदुओं के घरेलू संघर्ष का इतिहास रहा है। उनका जन्म महार जाति में हुआ था, उन्हें बंधन से ही भेदभाव का पता चला। जैसे जैसे वे बड़े होते गए, उनके पास पास घटित कुशाग्रता की बदलाए में उनके मन में अमित छाप छोड़ी, और आहूतों से प्रति उनके मन में कठना की महार उठाना हुई। उनमें मुस्लिमों के बावजूद भी उन्होंने डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। पढ़े लिखे होने के बावजूद भी उनके साथ भेदभाव किया जाता था। उन्होंने इस भेदभाव के खिलाफ कहा था कि— 'जब मेरे जैसा उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्ति को साथ अछूत होने के कारण ऐसा अमानवीय व्यवहार हो सकता है, तब मेरे अनपढ़ बलिष्ठ भाइयों को क्या हाल होगा होगा? सदियों से विद्यमान इस घृणित प्रथा का यदि मैं जन्म नहीं कर सका तो मेरी जान-सालना का मूल्य ही क्या रहेगा।'

डॉ अम्बेडकर ही ऐसे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने हिन्दू वर्ग प्रणियों में जाति और उच्च-निम्न वर्ग का आलोचनात्मक वैज्ञानिक विश्लेषण करने वाले व्यक्ति थे। उन्होंने उच्च जाति के हिन्दुओं को चुनौती दी और बलिष्ठों के सामने नुक्ति का मार्ग प्रशस्त किया। डॉ अम्बेडकर जी घृणित में भारतीय समाज चार वर्गों में विभाजित था। आरम्भ में यह वर्ग विभाजन क्षमता और दक्षता (कौशल/कौशल) के आधार पर होता था और व्यक्ति अपना वर्ग बदल सकता था। अर्थात् वर्गों को व्यक्तियों के कार्य की परिवर्तनीयता स्वीकार थी। उनका मानना था कि वर्ग की उत्तमता स्वाभाविक रूप से हुई है। वह पैतृक व्यवस्था को अपनाया अत्यंतवहिक आदर्श मानते थे। वह आधुनिकता के विरोधी थे, उनका मानना था कि— आधुनिकता ऐसा जहर है, जिससे हिन्दू धर्म बर्बाद हुआ है। वह पुरोहित वर्ग को विशेषक द्वारा नियंत्रण में रखने की बात कर्ते थे, जिससे पुरोहिताई प्रजातांत्रिक संस्था बन जाये और पुरोहिता बनने के द्वार सभी के लिए खुल जाए।' बाबा साहब का जाति के बारे में मानना था कि जाति पैतृक पेशा को अपनाए पर ही बन जाती है, चाहे कोई अयोग्य हो क्यों न हो। उनका मत था कि 'यदि जाति प्रथा का अर्थ नरत्न, रथ की सुदृढता होती तो फिर किसी को भी उसमें गलत के व्यक्तियों के साथ समागम से जाति की किरम में सुधार करने में आपत्ति नहीं हो

सकती थी। परन्तु ऐसा न तो वैज्ञानिक है और न ही व्यवहारिक है। एक ऐसा संकल्पनात्मक असाध्य भी नहीं है कि जिससे एक ही जाति को उत्तम नर-नारी जायस में विभाजित कर सकें हैं।

अम्बेडकर के विचारों के तीन प्रमुख स्रोत थे। पहला सत्ताका अपना अनुभव, दूसरा-महात्मा ज्योतिबा फुले का सामाजिक आंदोलन तथा तीसरा-बुद्धिज्म। इन स्रोतों की जड़ में भारत की असमानतायें जाति व्यवस्था थी। डॉ. अम्बेडकर ने दलितोत्थान के लिए सर्वप्रथम 1920 ईस्वी में महात्मा पत्रिका 'मूक माधक' का प्रकाशन किया। छत्रपती साहू जी महाराज की आश्रयता में मई 1920 में नागपुर में अधिल भारतीय दलित वर्ग परिषद का आयोजन हुआ जिसमें महाराज ने पुत्र अम्बेडकर को दलित-अध्यापक का महीना महीना इन्किया डिप्लोमा का संशोधन एसीसिडेशन का महीना नागपुर में 1926 में हुआ। इसके पहले निर्धारित अर्थसंग्रह महीना के एम.सी. राजा से और डॉ. अम्बेडकर उसको एक जगहवादी थे। बाद में उन्होंने इस एसीसिडेशन से त्याग पत्र दे दिया।

डॉ. अम्बेडकर ने बहुसंख्यक दलितकारिणी सभा की स्थापना की। इस सभा की माध्यम से वह दलितों को सामाजिक और राजनीतिक बुद्धिकोण से समाज के बंधनों के संसार पर लाना चाहते थे। उन्होंने ने दलितों के लिए शिक्षा का प्रसार छात्रवृत्तियाँ, पुस्तकालयों और सामाजिक आश्रम केंद्रों की स्थापना पर बल दिया है। डॉ. अम्बेडकर ने अपनी सभा की तरफ से साइमन कमिशन को एक पत्र दिया जिसमें उन्होंने पिछड़ों के नाम निर्देशक तत्वों की जगह आश्रित रखने की मांग की और सत्तावादी नीतियों में दलितों के लिए अल्प से शर्तों की मांग की। डॉ. अम्बेडकर के लिए सबसे बड़ा चुनौती का वर्ष 1927 का रहा, जब उन्होंने महात्मा बाबासाहेब अम्बेडकर को जल पिजाने के लिए संस्थापक किया।<sup>10</sup> यह संस्थापक 20 मार्च 1927 को महाराष्ट्र के राजगढ़ जिले में महात्मा स्थान पर हुआ था। जिसमें अम्बेडकर ने अपने दोनों हाथों से उस संस्थापक का पानी पिया। तिसका अनुकरण उनके हजारों श्रमिकों ने किया।

डॉ. अम्बेडकर के लिए 1927 का वर्ष उनके जीवन का सबसे प्रमुख वर्ष था। इस वर्ष का प्रारम्भ उन्होंने फोरे गैस को पुद्द स्तरक की मात्रा से प्रारम्भ की। और पिछड़ों को पुद्द गैस देने वाले महार बाबासाहेब की विरल को मन्त्र किया। उन्होंने अप्रैल 1927 में बहीष्कृत भारत की पत्रिका का सम्पादन किया। इसी वर्ष अमरावती की अम्बादेवी मन्दिर में दलितों के प्रवेश के लिए संस्थापक का आयोजन किया। उसी वर्ष डॉ. अम्बेडकर को बम्बई विधान परिषद का सदस्य नियुक्त किया गया। समान मानव अधिकारों के लिए 22 मार्च

1928 को बम्बई में 500 अछूतों को जनमत धारण करवाया। 1929 में उन्होंने जलपाव की सभा में हिन्दू धर्म छोड़कर अन्य धर्म को आनाने का विचार करने पर बल दिया। उन्होंने अन्य जाति के लोगों को दलितों के प्रति अपनी विचारों को बदलने के लिए कई प्रस्ताव पास किये। 1930 में ब्रिगिड काठाराम मन्दिर प्रवेश के लिए सत्याग्रह प्रारम्भ किया। उन्होंने आत्म सहायता ही सबसे उत्तम सहायता की नीति पर बल दिया और दलितों के लिए नारा दिया कि शिक्षित बनो, संगठित रहो और संघर्ष करो।

डॉ. अम्बेडकर 1930 ई. तक एक आस्थावान हिन्दू की तरह सयोग से दलितों के लिए मन्दिर प्रवेश का आग्रह और सत्याग्रह करते रहे। गोलमेज सम्मेलन के बाद उन्होंने दलितों के राजनीतिक अधिकार को लेकर ब्रिटिश सरकार के सामने जगन्ना पक्ष रखा। और राजनीतिक भागीदारी की मांग की। भारत के स्वतन्त्र होने के परभाव जब उन्हें संविधान के प्रारूप समिति का अध्यक्ष बनाया गया तब उन्होंने अपने सपने को संविधानिक स्वरूप प्रदान किया।



**सन्दर्भ -**

1. अम्बेडकर डॉ. बाबासाहेब साहेब, जीवन - द्वितीय खण्ड, सम्पादन 1994, पृ. 22
2. अम्बेडकर डॉ. बाबासाहेब साहेब, जीवन - तृतीय खण्ड, सम्पादन 1994, पृ. 102
3. <http://www.ambabhai.org/2009/09/01/ambabhai-ambabhai/>
4. अन्वित्तः प्रसाद, रिजर्वेशन पोलिसी एक प्रोविजन्स इन इण्डिया, ए सीमा 2, एन एच, टीप एम टीप प्रिन्टिंग प्रेस, नई दिल्ली 1991, पृ. 18
5. बिलव कुमार, पुस्तकी, अम्बेडकर - जीवन और दर्शन, भारतीय टीप प्रेस, नई दिल्ली 1968, पृ. 28
6. भीमराव अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाक्य 1, खण्ड-1 और अन्वित्तः प्रसाद, भारत सरकार, नई दिल्ली 1998, पृ. 20
7. सदी, पृ. 107
8. सदी, पृ. 111
9. बी.आर. अम्बेडकर, राष्ट्रीय आन्दोलन में डॉ. अम्बेडकर की भूमिका, सभा साहित्य संघ, जयपुर, 1988, पृ. 27
10. सदी, पृ. 21

# शोध कल्पतरु

An International Multidisciplinary Research Journal

अंक 9

अप्रैल 2013 - जून 2013

*A Refereed Journal, Published Tri-monthly*



संयोजक, सम्पादक

डॉ० मनोज कुमार सिंह

हिन्दी विभाग,

भारतीय विद्यापीठालय,

बाराबंकी

अध्यक्ष, सम्पादक

अमिताभ तेलंग

सम्पादक :

डॉ० विद्या सिंह

डॉ० लक्ष्मण केशव पाण्डेय

सह सम्पादक :

गरिमा सिंह

JOURNAL OF THE AKHIL BHARATIYA BHASHA EVAM

SAHITYA ANUSHILAN SAMITI

10. सीता : स्त्री अस्मिता की ध्वजवाहिका  
-हनी दर्शन 88-95
11. पार्वतलक्ष्मण तथा भीमदशरथ में साम्य  
-उमा आर्या 98-108
12. आधुनिक हिन्दी नाटक में श्रेय और धारा का अन्तर्द्वन्द्व : 'अपराध का एक दिन'  
-प्रियंका कुमारी मिश्रा 109-114
13. रेणु के उपन्यासों में सारी का संघ  
-प्रदीप कुमार शर्मा 115-121
14. समसामयिक सामाजिक निवृत्तियों का समाधान : स्मृति व वेदों अनुसार  
-डॉ. पृथ्वि शर्मा 122-127
15. दर्शन की व्यावहारिक उपयोगिता : पर्यावरण-प्रदूषण के विशेष संदर्भ में  
-डॉ. शब्दा राव 128-132
16. रेणु की राजनीतिक दृष्टि और मूल्य जीवन  
-प्रियंका 133-137
17. व्यावहार्यदर्शन में जाति की अभ्यारण  
-डॉ. सोमवीर 138-153
18. मैथिली पुरुषा श्रं अशा साहित्य में ग्रामीण जीवन  
-कंचनजीत डौर 154-159
19. आधुनिक भारत में महिला राजनीतिकरण  
-निवेद्यानंद तिवारी 160-167
20. स्त्री अस्मिता और कुम्भा सोबती का उपन्यास-साहित्य  
-विजयलक्ष्मी 168-177
21. स्वामी निवेद्यानन्द की दृष्टि में कर्म एवं कर्तव्य  
-डॉ0 उपेन्द्र कुमार त्रिपाठी 178-185
22. साहित्य और युगबंध  
-डॉ0 संतोष कुमार 186-191
23. दृष्टि, स्थिति एवं प्रत्यक्ष विषयक चिन्तन : स्वामी इत्यामन्य जारखती के परिप्रेक्ष्य में  
-हरेली सात गौना 192-202
24. जन चेतना का क्रांति चिन्तन  
-नीलम देवी 203-207
25. 1930-40 के दशक में प्रमुख चिन्तन आन्दोलन  
-सुरील कुमार सिंघ 208-213
26. योगादर्शों की समीक्षा  
-डॉ0 मनुदेव 214-223



99. वापसीपत्रां विचारवादात्मक वी. ए. 2/20
100. वैश्वनिकप्रवृत्ति, भारतीय पत्राचारपुर 541
101. पत्राचार विचारों के अन्तर्गत अन्वेषण, आर. वी. 2, 1997-1998 और
- वर्षिका, वी. ए. प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, विचारवादीपत्रिका। मासिक 2, 1998
102. भारतीय पत्राचारप्रवृत्ति, वी. ए. वी. 5/2
103. भारतीय विचारों के अन्तर्गत, वैश्वनिक प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, 1997-1998
104. वी. ए. 2/2
105. विचार प्रवृत्ति, वी. ए. वी. 2/2
106. वापसीपत्राचार 20/22-38 शीर्षक
107. वापसीपत्राचार (विचार) प्रवृत्ति, वी. ए. 2/2
108. भारतीय प्रवृत्ति, वी. ए. वी. 2/2

### सहायक ग्रन्थ-सूची :

1. वापसीपत्राचार और प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, वापसीपत्राचार, 2006
2. वापसीपत्राचार (विचार) प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, वापसीपत्राचार, 2006
3. वापसीपत्राचार (विचार) प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, वापसीपत्राचार, 2006
4. वापसीपत्राचार और प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, वापसीपत्राचार, 2006
5. वापसीपत्राचार और प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, वापसीपत्राचार, 2006
6. वापसीपत्राचार (विचार) प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, वापसीपत्राचार, 2006
7. वापसीपत्राचार और प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, वापसीपत्राचार, 2006
8. वापसीपत्राचार और प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, वापसीपत्राचार, 2006
9. वापसीपत्राचार और प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, वापसीपत्राचार, 2006
10. वापसीपत्राचार और प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, वापसीपत्राचार, 2006
11. वापसीपत्राचार और प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, वापसीपत्राचार, 2006
12. वापसीपत्राचार और प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, वापसीपत्राचार, 2006
13. वापसीपत्राचार और प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, वापसीपत्राचार, 2006
14. वापसीपत्राचार और प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, वापसीपत्राचार, 2006
15. वापसीपत्राचार और प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, वापसीपत्राचार, 2006
16. वापसीपत्राचार और प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, वापसीपत्राचार, 2006
17. वापसीपत्राचार और प्रवृत्ति, वापसीपत्राचार, वापसीपत्राचार, 2006



## आधुनिक हिन्दी नाटक में प्रेम और यथार्थ का अन्तर्द्वन्द्व : "आषाढ़ का एक दिन"

\* प्रियंका कुमारी मिश्रा

'संवेदनशील को अभिव्यक्त कर, वेदों से सब बोलकर  
बदलना व्यक्तित्व दिखलाकर बरताने वाला साहित्य ही  
सादृश्यशास्त्र कहलाता है।'

नाट्यशास्त्रीय भूतानुनि ने लीयगुला के अनुकरण को ही नाटक कहा है- 'लोकप्रियानुकरण नाट्यमूलभूतमा कृतम्।' जैसा कि हिन्दी नाटक की परम्परा तो संस्कृत साहित्य की परम्परा से जुड़ी रही है, अभिव्यक्ति के माध्यम शब्द और दृश्य से साधारणीकरण का मार्ग सरल, सुगम रहा है। इसी नाट्य परम्परा में प्रयोगशील नाटककार के रूप में मोहन रावैय्य का व्यक्तित्व अवतरित हुआ। काल जाता है -

'समकालीन रंगमंचना की' पहचान का पहला प्रमाणित संकेत है, 'मोहन रावैय्य।' अधिकांश नाटकों की रचना न करने पर भी वे नाटक क्षेत्र के मसीहा कहलाए, यह वा केंद्रित प्रयोगशील नाटककार थे केंद्रित वैयक्तिक और सामाजिक समस्याओं पर भी उनकी दृष्टि बराबर केंद्रित रही है। उन्होंने कुल तीन नाटक लिखे - आषाढ़ का एक दिन, लहरों का राजहंस, आगे-आगे, उनके संघर्षमय जीवन का प्रतिफलन उनकी रचनाओं में देखने को मिलता है। लेकिन उनकी जिन्दगी जितनी उलझी हुई थी, उतनी रचनाएँ उतनी ही चुलझी हुई हैं। जिस तरह वह अपने जीवन में उन्मुख एवं स्वतंत्र रहे उसी प्रकार उनके पात्र भी सभी संघर्षों से मुक्त हैं।

'आषाढ़ का एक दिन' आधुनिक हिन्दी नाटक में ऐतिहासिक परिपेक्ष्य पर रचा गया ऐसा यथार्थ है, जो आज के जीवन को विभंगता,

\* गीत काल, हिन्दी विचार, ऊर्जा हिन्दी विचारविचार, आगामी-22/10/65

*Shodh*

# HASTAKSHEP

Multilingual and Multidisciplinary  
International Research Journal

Vol. : 2

No. : 4

( July - December 2014 )



*Editor*

Dr. Satya Pal Sharma

*Associate Editors*

- Pankaj Kumar Gautam
- Neeraj Dhankhar

*Assistant Editors*

- Dr. I.S. Chauhan
- Vijay Kumar Ranjan

**JOURNAL OF THE SOCIETY FOR EDUCATIONAL EMPOWERMENT  
VARANASI, U.P., INDIA**

संसार की  
गतिरत्न की  
पानिना होने  
ने की इदप  
न पकिरपी  
ति है और

गिर विरह  
कर्मसे हुए  
बाधा और  
मे ली की  
मूलपावन  
गीतर से  
न पंत जी

1 प्रकाशन

1 90 117

प्रअगेपी

## मौन में अभिव्यक्त प्रेम

प्रियंका कुमारीमिश्रा

नयी कहानी के दौर में प्रेम की परिभाषा और अर्थ परिवर्तित होते गये। प्रेम एक ऐसा भाव है जो स्वर और असुर दोनों की भाषा बना है। एक एक ऐसा प्रयोगात्मक भाव जिसे कभी कहा नहीं जा सकता है। जिसकी अभिव्यक्ति हमारी इन्द्रियों के माध्यम से हुई है। निराकृत अंतरों से भी प्रेम की अभिव्यक्ति हुई है। प्रेम का अर्थ है, प्रेम का अर्थ है, प्रेम का अर्थ है, प्रेम का अर्थ है, प्रेम का अर्थ है, प्रेम का अर्थ है।

प्रेम सम्बन्धों को आधार बनाकर लिखी गई रंजु जी की कहानियों की खूब चर्चा हुई है। तीसरी कसम अर्थात् मारे गये मूलफाम, बसिकप्रिया और एक आदिम रात्री की महक इत्यादि इन सबों ने साजगी और मरपन से बहुतेरे को अभिभूत किया था। सामाजिक सित्त्वों में एक ऐसे अनोखे प्रेम की अभिव्यक्ति की है रंजु जी ने जिसमें प्रेम से बने हर सम्बन्ध को महत्व दिया जाता है, इसी कलपा, प्रेम, उत्साह और काव्यात्मक संवेदना ने इनकी कहानी तीसरी कसम अर्थात् मारे गये मूलफाम को वर्णित किया।

रंजु जी की कहानियों का समग्र दृष्टि से मूल्यांकन करते हुए हरिकृष्ण शील ने ठीक ही कहा है-

जन्मों समान मानवीय दृष्टि से रंजु ने जीवन और जगत में सुख, सम्यक सम्बन्धों, न देखकर ममता, करुणा, गिवा, आस्था और सुन्दरता देखी। रंजु जी की कहानियाँ पढ़कर लगता है कि जीवन जीने योग्य है, यह संसार स्थग्य नहीं माना है।

रंजु जी की अन्य कहानियों की तुलना में तीसरी कसम अर्थात् मारे गये मूलफाम में रोमन्ती भाव-बोध अधिक स्पष्ट और मुखर है। सामाजिक सन्दर्भों का एक बेहद बारीक और नाजुक सा तन्तु इस कहानी को धामे दिखाई देता है। अल्पश प्रेम की अभिव्यक्ति हीरामन की पीठ में हुई गुदगुदी से होती है। जहाँ किसी परिषद या प्रश्न का सवाल नहीं उठता है। हीरामन गाड़ीवान की गाड़ी में एक ऐसी जगना सवारी है जो धमाका फूल है, जिससे गाड़ी मह-मह महक रही है। अपरिचित से इस प्रेम भाव को रखना मौन में प्रेम की अभिव्यक्ति को प्रस्तुत करता है। इस कहानी में कही-कही मनाविज्ञान को भी दर्शाया गया है, जब जगना सवारी की नाक पर जुगनु जगमगा उठा, हीरामन को सब कुछ रहस्यमय अजगुत-अजगुत लगने लगा है, कहीं अकिम-पिशाचिन तो नहीं है।

हीरामन गाड़ीवान की गाड़ी पर बैठी जगना अपने सौन्दर्य के द्वारा उन दोनों के बीच उपस्थित अपरिचित भाव को भेद कर रही थी उस महिला के द्वारा हीरामन को भीता कहकर सम्बोधित करना किसी प्रेम भाव का ही परिचय देता है। जिससे हीरामन के मन में कोई अज्ञानी रागिनी नज़ उठती है, पूरा देह स्थिरचित्त उठता है, तब वो कहता है-

“बेस को मारते हैं तो आपकी बहुत बुरा लगता है”

हीरामन को जगना सबसे जितना नाम हीराबाई है उसका शरमाना हीरामन अच्छा लगता है। इसलिए जब अपने गाँव का नाम जानपुर बताता है तो उसकी हसी खिलखिला उठती है, जिस पर जी बहती है-

“नाकपुर भी है जो। गाँव रे दुनिया क्या-क्या नाम होता है कानपुर नाकपुर।

समात्मक प्रेम का वो सम्बन्ध जिसे किसी हब्दों की आवश्यकता नहीं पड़ती है, प्रेम सम्बन्ध

# अनमै साँच

ISSN : 2321-2276

त्रैमासिक शोध-पत्रिका

A Multidisciplinary Refreed Research Journal

पत्रांक 003

दिनांक 01/06/13

## स्वीकृति पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि प्रियंका कुमारी मिश्रा  
का शोध-लेख समकालीन कविता में न्याय और तिवंगति

अनमै साँच पत्रिका में प्रकाशनार्थ प्रस्तुत किया गया है। उपर्युक्त शोध-लेख का  
पत्रिका के आगामी अंक अप्रैल - जून 2013 में  
प्रकाशित किया जायेगा।

संतोष पाण्डेय

डॉ० संतोष पाण्डेय सत्यम  
संपादक

संपादकीय पता -

Dr. Santosh Pandey 'Satyam'

Vill-Raipura, Post-Kateya, Distt-Gopalganj-841437 (Bihar)

E-mail : pandeysatyamsantosh@gmail.com Mob. No. : 09918931977

## समकालीन कविता में व्यंग्य और विसंगति

प्रियंका कुमारी मिश्रा\*

‘दूर कर दिया है, हमें  
पुराने विचारों, वादों से  
बदल दी सोच इन कथनों से  
दिलों की तस्वीर आज की  
कविताओं ने, जो बदल गई है  
समकालीनता में।’

उड़ान की चिड़िया भी अपने पंखों को नये-नये आकाशतल में खोलती है। कविता जीवन की ऐसी व्याख्या है, जो ज़िन्दगी के तमाम (कलसाके) को अपने भीतर समेटे रहती है। नई कविता के दौर को अपनी प्रौढ़ता और यथार्थ के साथ समाप्त करने वाली धारा ही अपने युग और परिवेश से सम्भूत कविता है।

समकालीन हिन्दी कविता एक ऐसी प्रबल प्रभावशाली काव्यधारा थी, जिसमें—‘भारतीयदुर्गुण पुनर्जागरण काल की नवीन चेतना, द्विवेदीयुगीन जागरण-सुधारणकाल की नैतिकता और छायावादी स्वच्छंदतावादी दृष्टिकोण प्रगतिवादी यथार्थानुखता एवं प्रयोगवादी लघु मानव की प्रतिष्ठा तथा कालक्रमानुसार होने वाली शैलिक वैकल्प को लांघती हुई देखता ही समकालीन कविता में परिणत हो गई है।’<sup>1</sup> यह कविता उस मोहभंग को दर्शाती है जो हमारी आशा-निराशा-आकांक्षा, राग-विराग, हर्ष-विषाद सबकुछ को अपने में समाये हुए है।

समकालीनता का तात्पर्य अपने समय की रचनाशीलता का मूल्यांकन और विश्लेषण करना है। समकालीन साहित्य का अभिप्राय अपने युग की ऐतिहासिक प्रक्रिया में जनवादी मदिष्योन्मुखी दृष्टि के साथ विश्लेषित करने की क्षमता। कहा जाता है कि काव्य कवि की अन्तर्मन की अभिव्यक्ति होता है। प्रसिद्ध आलोचक डॉ० नगेन्द्र के अनुसार ‘कवि की अभिव्यक्ति ही साधारणीकरण का माध्यम है।’

इस वाक्य का अनुसरण हमारे साहित्य में मर्मज्ञ कविगणों ने किया है, जिनमें कबीर, तुलसी, भारतेन्दु और निराला की रचना परम्परा का आकलन कर सकते हैं। इस दृष्टि से ये सभी कवि समकालीन हैं, इसके साथ समकालीन कविता ने सातवें-आठवें दशक की नयी कविता और अकविता के अन्तर्विरोधों और अराजकता को स्वीकार किया। वस्तुतः समकालीन कविता की कोई प्रमाणिक एवं पुष्ट परिभाषा दे पाना सम्भव नहीं है—‘समकालीन कविता का आधार यथार्थ है, व्यंग्य और आक्रोश के स्वर से भरा हुआ है, जीवन की विसंगतियों को विशेष महत्व दिया जाता है। असौन्दर्य को महत्ता दी जाती है, सपाटबयानी में जीवन के वास्तव चित्र

\* शोध छात्र, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

# वीक्षा

मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान की अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका

प्रधान संपादक

सदानन्द शाही

संपादक

बृजराज सिंह

कमल कुमार



लीकायत प्रकाशन



## शिवमूर्ति के गाँव का बदलता यथार्थ

प्रियका मिश्रा

भारतीय संस्कृति के पधार्थ का आधार ही ग्रामीण जीवन रहा है। जिसने भारतीय पधार्थ में साध, भारत मोरन और स्वार्थ रहित। जनसाधन में बनने वाला प्रम है जो बदलने समय का पधार्थ और कष्ट को गहनता भी है।

वेदक युग के आदर्श में धर्मधर्म के कष्ट, गहनता, समाज और राज्य व्यवस्था तबसे बदलता आया। सन् ६० के बाद प्रामाणिक संस्कृति में कई बदलाव आये, जिनका सामाजिकता और औपनिवेशिकता को लक्ष्य करी तक भी पहुँचा है। ग्रामीण जीवन का पधार्थ परिवर्तित हुआ। आकादी के बाद का भारत भी भी ग्रामीण भारत अपनी तथ्या विद्वपताओं और

धर्मिकता दुआ है जो का कथाकार है 'शिवमूर्ति'। सन् ६० के बाद का बाद प्रमनद और गुरु का जीवन है अपने बदलते समय के साथ वह शिवमूर्ति का गाँव भी है। जैसे जो कहा गया है कि— 'अस्तित्व जिस वर्ग या वर्ग में पैदा होता है। उसी को जीवन, आदर्श व आकादीओं को अयोग्य कर लेता है और समाज में जो उसे मान-सम्मान, विरक्तता-पूजा, प्यार, हिंसा व पथ जो मिलता है, वही उसके अस्तित्व का हिस्सा बन जाता है।'

शिवमूर्ति इसी बदलते समय के प्रामाणिक जीवन को जीने वाली है अतः इनके अस्तित्व में भी बदलते समय के कष्ट पधार्थ को इनकी रचनाओं (कथा साहित्य) में देखा जा सकता है। आकादी के बाद के गाँव का रूप अलग है। इसी चिन्ता को उभरने अपनी रचनाओं— 'कसाईबाड़ा', विरिया—विरिह, भारतवर्षम् विरी उमर जोर, अफालन्द, कंकर—कम्प्यू आदि में संकेतित किया है। इनके कथा उपन्यासों में अर्थ का प्रामाणिक संस्कृति का संकेत अलग मिलता है। प्रमनद के बाद आने वाला गुरु, गहनता, गहनता वीरों और शिवमूर्ति आदि ने कथाकारों के भारत गाँव को बहुविध रचना का कथाकार रखा है। उभरने पधार्थ को केवल खेतिहर किसान का पधार्थ समझने के अर्थ, प्रामाणिक अर्थव्यवस्था में शामिल कई पधार्थ जैसे रबी-जीवन, जातिवाद, गहनता अर्थव्यवस्था और आपसी ईर्ष्या आदि को कथाकारों का आधार बनाया।

शिवमूर्ति को एक अति प्रसिद्ध कहानी 'विरिया—विरिह' है। जिसमें गाँव के जीवन का पधार्थ हर तरफ से दिखता है। एक लाधार स्त्री की शुरुवा पीड़ा को उम कदासी में व्यक्त किया गया है। जैसाकि लोकगीत सबसे बड़ी प्रभावी रचा रही है, परन्तु वही लोकगीत देश को सबसे कमजोर वर्ग के लिए रचा कर पा रही है। 'विरिया—विरिह' को नयिका विमली अपने पेटे पर खड़ा होना जो जानती है, परन्तु पुरुष वर्ग के यकबूह को भेदना नहीं जानती है। परिवारिक संस्कार से बंधी रहती है, पितृसत्ता उसके सफल व्यक्तित्व के बनने में बाधक बनती है। एक स्त्री को अल्पनिर्भर बनने में रोकती है और जब इस सफलता को पाने के लिए घर से बाहर जाती है तो स्त्रियों के लिए भयानक, असुरक्षित, वास्तविक व चरित पर दाग पैदा करने वाला संसार के रूप में चित्रित होती है।

'कसाईबाड़ा' और विरिया—विरिह से लेकर 'आखिरी छलाक' (उपन्यास) तक जो परिदृश्य है, वह समकालीन भारत का पधार्थ रूप है। परिवार, धान, कोर्ट, जाति—जाति, किसान, दलित धर्म, साम्प्रदायिकता, खेती—नौकरों परिवारिक विषय का जो एक सपना चित्र चित्रित होता है जो असुंदर और दण्डार है। अर्थव्यवस्था का हस्तगत प्रारम्भिक व्यवस्था से लेकर शिवा के गाँव में भी फैलता गया है, जिसे 'भारतवर्षम्' कहानी में प्रस्तुत किया गया है। पधार्थ को गह तो दूसरों से अपेक्षित होते हैं, परन्तु बदलते समय में एक संघुक्त विरिह का

शोधकर्ता (हिन्दी विभाग),  
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,  
वाराणसी



# वीक्षा

मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान की अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका

प्रधान संपादक

सदानन्द शाही

संपादक

बृजराज सिंह

कमल कुमार



लीकायत प्रकाशन



## शिवमूर्ति के गाँव का बदलता यथार्थ

प्रियका मिश्रा

भारतीय संस्कृति के पधार्थ का आधार ही ग्रामीण जीवन रहा है। जिसने भारतीय पधार्थ में साध, भारत मोरन और स्वार्थ रहित। जनसाधन में बनने वाला प्रम है जो बदलने समय का पधार्थ और कष्ट को राजनीति भी है।

वेदक युग के आदर्श में धर्मधर्म के कष्ट, राजनीति, समाज और राज्य व्यवस्था तबसे बदलता आया। सन् ६० के बाद प्रामाणिक संस्कृति में कई बदलाव आये, जिनका सामाजिकता और औपनिवेशिकता को लक्ष्य करी तक भी पहुँचा है। ग्रामीण जीवन का पधार्थ परिवर्तित हुआ। आकादी के बाद का भारत भी भी ग्रामीण भारत अपनी तथ्याय विद्वपताओं और

धर्मिकता दुआ है जो का कथाकार है 'शिवमूर्ति'। सन् ६० के बाद का बाद प्रमनद और गुरु का जीवन है अपने बदलते समय के साथ वह शिवमूर्ति का गाँव भी है। जैसे जो कहा गया है कि— 'अस्तित्व जिस वर्ग या वर्गों में पैदा होता है। उसी को जीवन, आदर्श व आकादीओं को अयोग्य कर लेता है और समाज में जो उसे मान-सम्मान, विरक्तता-पूजा, प्यार, हिंसा व पथ जो मिलता है, वही उसके अयोग्यता का हिंसा बन जाता है।'

शिवमूर्ति इसी बदलते समय के प्रामाणिक जीवन को जीने वाली है अतः इनके आचरण में भी बदलते समय के कष्ट पधार्थ को इनकी रचनाओं (कथा साहित्य) में देखा जा सकता है। आकादी के बाद के गाँव का रूप अलग है। इसी चिन्ता को उभरने अपनी रचनाओं— 'कसाईबाड़ा', 'तिरिया-चरित', 'भारतवर्षम सिरी उमर जोर, अफालन्द, कंकर-कम्पूरी आदि में संकलित किया है। इनके कथा उपन्यासों में अर्थ का प्रामाणिक संस्कृति का संचालन मिलता है। प्रमनद के बाद आने वाला गुरु, राजनीति, राजदर बोली और शिवमूर्ति आदि ने कथाकारों के भारत गाँव को बहुविध रचना का कथाकार रखा है। उभरने पधार्थ को केवल खेतिहर किसान का पधार्थ समझने के अर्थ, प्रामाणिक अर्थव्यवस्था में शामिल कई पधार्थ जैसे रबी-जीवन, जातिवाद, राजनीति अर्थव्यवस्था और आपसी ईर्ष्या आदि को कथाकारों का आधार बनाया।

शिवमूर्ति को एक अति प्रसिद्ध कहानी 'तिरिया-चरित' है। जिसमें गाँव के जीवन का पधार्थ हर तरफ से दिखता है। एक लाधार स्त्री की शुरुआत पीड़ा को उमर कदासी में व्यक्त किया गया है। जैसाकि लोकगीत सबसे बड़ी प्रभावी रचा रही है, परन्तु वही लोकगीत देश को सबसे कमजोर वर्ग के लिए रचा कर पा रही है। 'तिरिया-चरित' को नयिका मिलती अपने पैरों पर खड़ा होना जो जानती है, परन्तु पुरुष वर्ग के यक्यूह को भेदना नहीं जानती है। परिवारिक संस्कार से बंधी रहती है, पितृसत्ता उसके सफल व्यक्तित्व को बनने में बाधाक बनती है। एक स्त्री को आत्मनिर्भर बनने में रोक्ती है और जब इस सफलता को पाने के लिए घर से बाहर जाती है तो स्त्रियों के लिए भयानक, असुरक्षित, वास्तविक व चरित पर दाग पैदा करने वाला संसार के रूप में चित्रित होती है।

'कसाईबाड़ा' और 'तिरिया-चरित' से लेकर 'आखिरी छलाक' (उपन्यास) तक जो परिदृश्य है, वह समकालीन भारत का पधार्थ रूप है। परिवार, धान, कोर्ट, जाति-पाति, किसान, दलित धर्म, साम्प्रदायिकता, खेती-नौकरों, पारिवारिक विघटन का जो एक सपना चित्र चित्रित होता है जो असुंदर और दण्डार है। अर्थव्यवस्था का हस्तगत प्रारम्भिक व्यवस्था से लेकर शिवा के गाँव में भी फैलता गया है, जिसे 'भारतवर्षम' कहानी में प्रस्तुत किया गया है। पधार्थ को गठ तो दूसरों से अपेक्षित होते हैं, परन्तु बदलते समय में एक संघुक्त चरितार का

शोधकर्ता (हिन्दी विभाग),  
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,  
वाराणसी

Letter No. : NSI/ISSN/INF/2014/461

ISSN 2348-4624

# Śodha Mīmāṃsā

Vol. I

No. I

January-March 2014

Editor in chief  
Dr. Rakesh Kumar Maurya

Associate Editors  
Dr. S.K. Ojha      Dr. D.C. Pandey

Published by :  
Dr. Rakesh Kumar Maurya  
Varanasi, U.P. (INDIA)

शोध गीर्वासा के प्रथम अंक के प्रकाशन में संस्थाप-  
प्रो० मोहम्मद सलीम (पूर्व अख्यत समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू  
विश्वविद्यालय, वाराणसी) का मार्गदर्शन रहा जिन्होंने मेरे हृदय से आभार  
प्रकट करता हूँ।

शोध गीर्वासा के प्रथम अंक को प्रकाशित कराने में डॉ० अनीश  
कुमार वर्मा का सराहनीय सहयोग रहा है, उनको मैं धन्यवाद देता हूँ।

शोध गीर्वासा के प्रथम प्रकाशन में सहायक सम्पादक  
डॉ० डी०सी० पाण्डेय, डॉ० सुरील कुमार ओझा के सहयोग के लिए  
हृदय से आभार प्रकट करता हूँ तथा प्रकाशन मण्डल के अन्य सभी सदस्यों  
के सहयोग के लिए हृदय से आभार प्रकट करता हूँ।

शोध गीर्वासा के प्रकाशन में अशुद्धियों को शुद्ध करने में  
डॉ० शाहीद अली, डॉ० डी०सी० पाण्डेय, डॉ० सुरील कुमार ओझा,  
श्री राज गौर्य एवं श्री अभिषेक गौर्य के प्रति हृदय से आभार प्रकट  
करता हूँ।

अन्त में सभी सम्मानित लेखकों, पाठकों एवं अन्य विद्वत्त्वजनों के  
प्रति हृदय से आभार प्रकट करते हुए प्रथम प्रकाशन के अवसर पर उनसे  
सुझाव, सहयोग एवं आशीष की कामना करते हैं।

नगरराज

मार्च 2014

  
सम्पादक

## अनुक्रमणिका

1.	लोक और शास्त्र का द्वन्द्व-काशी की साहित्यिक परम्परा डॉ० मनीष अरोरा	1-5
2.	"गीडिया" महिला सशक्तिकरण का रक्षक या म्हाक रीषिका यादव	6-9
3.	वैदिक युग में नारी तृप्ति श्रीवास्तव	10-12
4.	संगीत शिक्षा का महत्व एवं उद्देश्य आरती याही	13-18
5.	संगीत शिक्षण प्रणाली-प्राचीन से आधुनिक निधि श्रीवास्तव	19-25
6.	रागावण में उल्लेखित स्त्री आभूषण तृप्ति श्रीवास्तव	26-29
7.	प्राचीन भारतीय मुद्रा प्रणाली में विदेशी तत्वों का समावेश : हिन्द-यवन मुद्राओं के सन्दर्भ में अरविन्द कुमार दूबे एवं राजेश कन्नोजिया	30-34
8.	सन् 60 की कहानियों में विदोही स्वर प्रियका कुमारी मिश्रा	35-38

## सन् 60 की कहानियों में विद्रोही स्वर

श्रियंका कुमारी मिश्रा

शोध छात्र, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी

किसी भी युग के परिदृश्य में अनेक स्थितियों का अग्रलोकन होता है, युग का इतिहास उसके समाज, साहित्य और राजनीति स्तर में जुड़ा रहता है। उसके सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों को जानने के लिए उस समय की साहित्यिक विद्या का अत्यधिक महत्वपूर्ण बिन्दु के रूप में देखा जाना चाहे। इन साहित्यिक विद्याओं में कहानी प्रारम्भिक साहित्यिक विद्या के साथ-साथ समाकालीन साहित्य की प्रतिष्ठित विद्या के रूप में इसलिए प्रतिष्ठित हुई कि अपने समय की जटिलता और जीवन की विविध परिस्थितियों को समझना से परखने और जीवन की संवेदनात्मक स्थिति को यथार्थपूर्ण ढंग पर अभिव्यक्त कर सके और जिसे रचनाकार अपनी अनुभव की सीमा में प्रमाणिकता से समेट ले।

सन् 60 की कहानियों में मानव समाज और मानव संबंधों का जो स्वरूप उभरकर आया है, वो अपने आप में बदलाव की दिशा में लौ के समान था। इससे पहले के कथासाहित्यों में नास्तिक विगाहन, धार्मिक अंधलों का परिदृश्य, समाज में आदर्शवादी स्वरूपों की बात कही भी गई और प्रकाशित भी हुई।

प्रेमबंद या प्रेमचन्दयुगीन हिन्दी कथा साहित्य में जो आदर्शवाद हमें दिखाई देता है वही उसका सामाजिक आकार है। 'पंच बर्मेस्वर', 'नमक का दोगा या 'बुढ़ी कान्ही' से लेकर 'सया सैर मेहूँ', 'पूस की रात या कफन कहानी में प्रतिरोध का स्वर नहीं दिखता जबकि आजादी के स्वर्ण का हो दशक बीतने जा रहा होता है, ऐसा क्यों? सन् 60 के दौर की कहानियाँ 'अवहानी प्रवृत्तियों से छाई हुई हैं जहाँ व्यक्ति चेतना प्रमाण होती गयी। यह दौर आगे-आगे कहानी का स्वर बदला। रवीन्द्र कालिया ने लिखा है कि—

“वास्तव में सन् 60 के बाद की कहानी ने स्वीकृत कथा तत्वों चालू नुरखी और कर्मल की संशयान् अवधारणा करके आगे अनुभव की प्रमाणिकता पर अधिक बल दिया है। पठन बीते हुए काल की कहानी है न सम्भावना के काल की इसलिए इतने सुस्पष्ट भी नहीं है, जो सुन्दरे जीवन का काल्पनिक

ISSN 2249-605X

*15 Days*

Vol. 66

An International Research Journal Related  
to Higher Education for all Subject.

**EDITOR IN CHIEF**

**MUKESH KUMAR MALVIYA**

ASST. PROFESSOR

LAW SCHOOL, BHU, VARANASI (U. P.)

MO. : 91-9094651125

**SPECIAL MEMBER OF  
ADMINISTRATION**

**SHRI SHYAM BABU PATEL** DEPUTY REGISTRAR  
& CAO (S&A) BANARAS HINDU UNIVERSITY VARANASI

**MEMBERS OF EDITORIAL BOARD**

**DR. MONA PURI** HOD, LAW DEPARTMENT,  
BI, BHOPAL.

**DR. ARCHANA BANJA** HOD, SCHOOL OF LAW,  
DAVV, INDORE.

**SHRI P. T. SHENI** HOD, LAW DEPARTMENT,  
DLSVV, S. GAD.

**DR. ANRENDRA KUMAR MISHRA** HOD, LAW  
DEPARTMENT, DDU GORAKHPUR.

**DR. SHERNAJ YADAV** HOD, LAW DEPARTMENT,  
MUVV, BAREILLY.

**DR. VANI BHUSHAN** FORMER HOD, PG  
DEPARTMENT OF LAW, UNIVERSITY OF PATNA.

**DR. J. K. JAIN** PRINCIPAL, NDM GOVT. LAW  
COLLEGE, INDORE.

**DR. R. K. MURALI** ASSO. PROFESSOR, LAW  
SCHOOL, BHU, VARANASI.

**DR. AHMED NASEEM**, ASST. PROFESSOR, LAW  
DEPARTMENT, DDU, GORAKHPUR.

**SHRI ROSHAN LAL** ASST. PROFESSOR, LAW  
DEPARTMENT, UNIVERSITY OF ALAHHABAD.

**PATRON**

**PROFESSOR SUKHPAL SINGH**

VICE CHANCELLOR, Hidayatullah NATIONAL  
LAW UNIVERSITY, RAIPUR.

**SPECIAL RESEARCH SCHOLARS EDI.  
BOARD**

**PRIYANKA VAIDYA** ASSISTANT PROFESSOR GOVT.  
P. G. COLLEGE WALAGARIH DISTT. SOLAN (H. P.)

**SHRI RANA NAVNEET ROY** JUNIOR RESEARCH  
FELLOW, LAW SCHOOL, BHU, VARANASI.

**EDITORIAL ADVISORY BOARD**

**DR. SANTOSH KUMAR TIWARI** ASST. PROFESSOR  
LAW FACULTY, NDU UNIVERSITY, ALAHHABAD.

**DR. JADHAV SUNIL GULAB SINGH**, ASST. PROF.,  
YADAVANT COLLEGE, NABED, (MH).

**DR. SAMTA JAIN** ASST. PROFESSOR (ECONOMICS),  
MATA GURJI WOMENS COLLEGE, JALALIYUR.

**DR. AMIT KUMAR PANDEY** HOD, DEPARTMENT,  
BHU VARANASI.

**DR. DEEPAK SHARMA** ASST. PROFESSOR PER JAIN  
COLLEGE OF EDUCATION, AMBALA CITY.

**DR. SHARAD DHAR SHARMA** SENIOR RESEARCH  
ASSOCIAT BHU VARANASI.

**DR. SURENDRA PANDEY**, DEPARTMENT OF HINDI,  
BHU VARANASI.

**SHRI SUNIL KUMAR** LAW SCHOOL, BHU, VARANASI.

**SHRI QILF KUMAR** ASST. PROFESSOR, LAW  
FACULTY, NDU UNIVERSITY, ALAHHABAD.

**KOMAL PRASAD YADAV** ASST. PROFESSOR, LAW  
FACULTY, NDU UNIVERSITY, ALAHHABAD.

**KU. ANITA SHUKLA** ANISHI COLLEGE OF  
NURSING, JALALIYUR.

## NATIONAL JUDICIAL COMMISSION- NEED OF THE HOUR

\*Suman Tiwari

Assistant Professor, Law, DMS Unnati University, Dehradun India)

Bulboox Hostel, Room Number-1K, Roll Number: 217, Kailash Road, Dehradun, (UK) Phone Number-99566918

## Introduction

The National Judicial Commission is related to the judicial appointments in higher courts i.e. Supreme Court and High Court and transfer of judges from one high court to another high court. The judicial appointment commission Bill<sup>1</sup> 2013 sought to replace the present collegium system of appointment to the post (given in Second Judges transfer case in 1993 and elaborated in detail in third judges transfer case in 1998) by judicial appointment commission, through giving it constitutional status and inserting Art 124A and 124B dealing with appointment and function respectively. For the sake of knowledge it is pertinent to mention here that before coming into force the collegium system judicial appointment is dealt under Art 124(2)<sup>2</sup> and 217(1)<sup>3</sup> under which president of India appoint Supreme Court and High Court judges respectively after consulting with the legal luminaries mentioned in the Art concerned. The central issue of democratic accountability has either not address or swept under the carpet that is the reason why the collegium system needs to be scrapped. If we go thoroughly to the provision of the Constitution we will find that the principle of separation of power with check and balance is provided under the constitution unlike US Constitution. But only establishment of the commission will not serve the purpose so after taking due account to these kind of institutions prevalent in various countries the suited one should be considered because unless and until the concerns of composition is properly dealt with, the objective of fair appointment to these post cannot be achieved. The composition of the commission should be as in which neither the executive nor the judiciary ought to be in a position to dominate the decision though the member from both branch should be added along with other legal luminaries of outside. i.e. member of bar, law professor and even laymen.

## CONSTITUTIONAL MANDATE-

Art 124(2) and 124(3) deals with appointment and qualification of Supreme Court judges whereas Art 217 deals with appointment and qualification of High Court judges. However the general practice was to appoint the senior most judge to be the chief justice because this process was free from any bias but this practice was not followed in the appointment of justice A.N Roy and justice Begs appointment. Justice Roy was appointed superseding justice Shelke, Hodge and Crouer. Again justice Beg was appointed superseding justice Khanna. However after retirement of justice Beg senior most judge justice Chandrabud was appointed as Chief Justice of India<sup>4</sup>. Since then again the rule of seniority has been followed in the matter of appointment of CJ of India. Pertinent that in over six decades of history of the apex court, single chunk of its judges has come from the category of senior most judges of HC, only five noted distinguished jurist have got the distinction of being directly appointed as SC judges, the last being justice a. Santosh Hishoda in 1999.<sup>5</sup>

## COMING OF COLLEGIUM SYSTEM-

After seeing the failure of the executive to give proper reasons for appointment of justice A.N Roy and justice Beg superseding senior judges, for the first time in *Shamsher Singh v State of Punjab*<sup>6</sup> the SC stated that appointment to the SC or HC must have approval of the CJ of India. The Emergency and the post emergency era witnessed attempts by the executive to muzzle the judiciary, it was to check this erosion of the independence of the judiciary that the collegium system was evolved, by which the senior most judge of the SC and HC select judges with the executive merely being consulted<sup>7</sup>. So the interpretation of the term consultation used in art 124 and 217 came for consideration firstly in *Sankuichald Shetti*<sup>8</sup> case in which it was specifically held that the term consultation does not means concurrence, so the president is having right to differ from their views and may take contrary views. Once again the same issue

13. सुप्रीम कोर्ट के जज्जने में विवाद की प्रक्रिया

50-51

\*स्नेहा सुन्दर यादव

14. सर्वोच्च और उच्च न्यायालय में नयी नई बदलावी सुविधा

52-53

\*प्रदीप कुमार शर्मा

15. भारतीय संसिद में नयी विधय और नयी प्रक्रिया

54-56

\*दिव्यजा कुमारी शिवा

\*\*\*\*\*



ISSN. 2349-1205

# वैचारिकी

बहुआयामी शोध पत्रिका

अर्द्धवार्षिक

अंक-20

जुलाई 2019

विशेषांक

“स्वतंत्रता सेनानियों की परिकल्पना और वर्तमान भारत”



रामजी प्रसाद सिंह ग्रामीण विकास सामाजिक एवं आर्थिक  
शोध संस्थान, आरा के तत्वावधान में प्रकाशित ।

## अनुक्रमणिका

सम्पादनकार्य		30
1. भारत छोड़ो आन्दोलन: आजादी की निर्णायक लड़ाई	: डॉ० शशि कुमार सिंह	1
2. भारत का स्वधीनता-संग्राम और स्वतंत्रता सेनानियों के सपने: एक सर्वेक्षण	: डॉ० जकील उज्जामा अंसारी	4
3. गांधी का सपना: गाँव एवं ग्रामस्वराज्य आज के संदर्भ में	: प्रो० पारस नाथ सिंह	8
4. नारी स्वतंत्रता और महात्मा गांधी	: डॉ० अंजू सिंह	11
5. भारतीय लोकतंत्र के प्रणेता: पीड़ित जनवाहक चण्डल नेहरू	: डॉ० ज्योति सिंह	17
6. भारत का औद्योगिककरण: एक सार्थक पहल	: डॉ० पूर्णिमा राय	20
7. स्वतंत्रता सेनानियों का सपना: इन्दिरा गांधी का दृष्टिकोण	: डॉ० उमा शंकर सिंह	23
8. राजीव गांधी और स्वतंत्रता सेनानों सम्मान	: डॉ० अजय उपाध्याय	27
9. स्वराज्य की चुनियार - नयी तालीम	: प्रो० इन्दया नन्द सिंह	29
10. आज हम गांधीजी को कितना मानते हैं?	: प्रो० (डॉ०) बलराम सिंह	39
11. आज गांधी कितने प्रासंगिक	: डॉ० सरला	43
12. भारत छोड़ो आन्दोलन: ऐतिहासिक विश्लेषण	: डॉ० सुप्रिया लक्ष्मी मिश्रा	45
13. 15 अगस्त	: बजरंग चलो सिंह	47
14. Role of X-Ray and U.S.G. in Neonatal Intussusception	: Dr. Balajee Shrivatava	49
15. Components of Integrated Child Development Services (ICDS) Programme: An Evaluation	: Dharmendra Kumar Pandey	50

- |                                                                                   |                                             |    |
|-----------------------------------------------------------------------------------|---------------------------------------------|----|
| 16. Social Security: Needs of Informal Workers                                    | Sunil Kumar                                 |    |
| 17. ब्रिटिश शासनकाल में कृषि                                                      | दिनु चर्मा प्रसाद<br>डॉ० विमल कुमार सिंह    | 3  |
| 18. बिहार में पंचायती राज का विकास और महिलाओं                                     | ज्योति कुमारी गुप्ता<br>डॉ० विमल कुमार सिंह | 4  |
| 19. ब्रिटिश मू-राजस्व व्यवस्था का भारतीय ग्रामीण जीवन पर प्रभाव                   | दिनु चर्मा प्रसाद<br>डॉ० विमल कुमार सिंह    | 5  |
| 20. स्वामी विवेकानन्द: यात्रा, और शिकागो भाषण                                     | सोनी कुमारी<br>डॉ० दिग्विजय सिंह            | 6  |
| 21. भारतीय राजनीति में बाबू जगजीवन राम का योगदान                                  | ✓ मानु प्रताप सिंह<br>डॉ० सीमा पटेल         | 7  |
| 22. संस्कृति, शिक्षा एवं धर्म के संदर्भ में स्वामी विवेकानन्द का दर्शन: एक विवेचन | सोनी कुमारी<br>डॉ० दिग्विजय सिंह            | 8  |
| 23. भारतीय लोकतंत्र में चुनावी प्रक्रिया: एक विश्लेषण                             | डॉ० अशोक कुमार सिंह (मोन्ड)                 | 9  |
| 24. भारतीय चुनाव प्रणाली और विकास: एक समीक्षा                                     | सुनील कुमार                                 | 10 |

## भारतीय राजनीति में बाबू जगजीवन राम का योगदान

भानु प्रताप सिंह\*

डॉ० सीमा पटेल\*\*

भारतीय राजनीति में बाबू जगजीवन राम का महान योगदान रहा है। उनका सम्पूर्ण जीवन इतिहास, सम्मानुलक समाज की स्थापना, पॉइंट-कॉन्ट्रिपॉइंट गरीब लोगों के कल्याण व देश के सार्वभौमिक विकास में लगा रहा। वे जातिवाद, सामाजिक बहिष्कार, पैरधराचरी, जूटसाफ़ी व गरीबों के खिलाफ अन्वयत लड़ते रहे। उन्हें भारतीय राजनीति का शिल्पी व चापकूत कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। बाबू जगजीवन राम इन महान राजनीतिज्ञों की कड़ी हैं जिसमें डॉ० भोमराव आंधेकर, डॉ० राममनोहर लोहिया, डॉ० राजेन्द्र प्रसाद, मौलाना अब्दुल कलाम आजाद व स्वर्णर पटेल शामिल थे। अपने जीवन काल में बाबू जगजीवन राम ने जो महान उपलब्धियाँ हासिल कीं उनकी इन महान उपलब्धिओं को भाँकी पाँटों हमेशा श्रद्धा के साथ देखेंगे। बाबू जगजीवन राम का सम्बन्ध केवल इतिहास-पिछड़ा से नहीं था बल्कि सम्पूर्ण सर्वोच्च समाज से था। उन्होंने हमेशा भूखे, बेरोजगार-लाचार, कमजोर, दुःखी व अल्पसंख्यकों को आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक न्याय व ईसाई दिलाने के लिए उन्होंने लगातार अभियान चलाया। वह भारत को अखण्ड, मजबूत, समृद्ध व सुन्दर बनाने के लिए कृतसंकल्पित थे। कृषि, छात्र, श्रम, सहकारिता, रेलवे, संघार, परिवहन और रक्षा मंत्रालयों को यागद्वार उनमें उस समय सीपी गये जब ये विभाग भँवकर समस्याओं से ग्रस्त थे। उन्होंने इन विभागों का कार्याकल्प पूरी ईमानदारी, निष्ठा व कर्मठता के साथ किया जिसे इतिहास कभी भुला नहीं सकता।

बाबू जगजीवन राम का जन्म 5 अप्रैल 1908 को बिहार के साहाबुद सम्राटि भोजपुर जिलान्तर्गत आरा के चंदवा नामक ग्राम में हुआ था। उनके पिता का नाम शंभू राम व माता का नाम श्रीमती चरन्ती देवी था। उन्होंने 1914 में आरा के प्राथमिक स्कूल से प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त की। 1920 में जगजीवन बाबू ने आरा के अणुवाल मध्य विद्यालय में दाखिला लिया। 1922 में आरा टाउन हाई स्कूल में प्रवेश किया। पढ़ाई के दौरान उन्हें सुआइज़न व जातिवाद का कटु अनुभव हुआ। हिन्दू छात्रों द्वारा उनके घड़े से पानी पीने का जोरदार विरोध किया गया। विरोध के मद्देनजर प्रधानाध्यापक ने उनके लिए अलग घड़े की व्यवस्था की। बाबू जगजीवन राम की भावना को काफी ठेस लगी और उन्होंने अलग घड़े से पानी पीने से इन्कार कर दिया। उन्होंने विरोध स्वरूप हिन्दू छात्रों के लिए अलग से रखे गये घड़े को फोड़ दिया। उनका एकसदर समाज से जातिवाद व सामाजिक बहिष्कार को समाप्त कर समतामूलक समाज का निर्माण करना था। अन्ततः उन्हें हिन्दू घड़े से पानी पीने में विजय प्राप्त हुई। सन् 1925 में आरा छात्र सम्मेलन में उनके द्वारा संस्कृत में दिये गये ओजस्वी भाषणों ने सं० सदन मोहन गालबोय को काफी प्रभावित किया और उच्च शिक्षा हेतु उनमें काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में आगमन किया गया। सन् 1925 में उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा गणित एवं संस्कृत में शत-प्रतिशत अंक प्राप्त कर उत्तीर्ण की।

\*सोपे टावर, इतिहास विभाग, डॉ० कुंजर सिंह विश्वविद्यालय, आरा।

\*\*सोपे, विदेशिका, एमएचसीट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, एम.के.पी. कॉलेज, भुवनेश्वर।

बाबू जगजीवन राम ने कुर्कट 1926 में भारतीय हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रवेश किया। उन्हें दो वर्षों का अध्ययन करने का मौका मिला। छात्रावास में रहते हुए वे अन्तर्गत कौटिल्य या कौटिल्य के नाम से भी प्रसिद्ध हुए। 1928 के दौरान ही जयप्रिय समूह मुद्रित प्रकाशन में प्रवेश की, अन्य कर्मचारी सहित कार्य में संलग्न हुए। उन्होंने 1928 में भारतीय हिन्दू विश्वविद्यालय में आई.एम्.सी. परीक्षा उत्तीर्ण की और उसी वर्ष जयप्रिय में मुद्रित विश्वविद्यालय के अधिकाधिक लिखा। सन् 1931 में जो.एच.सी. की परीक्षा कलकत्ता विश्वविद्यालय में उत्तीर्ण की।

बाबू जगजीवन राम का राजनीति में प्रवेश 1 दिसम्बर 1928 को कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में हुआ। इस अधिवेशन में उनका राजनीतिक सम्पर्क सुभाषचन्द्र बोस, ए.ए.एम. राम, चन्द्रशेखर आजाद, मन्मथ नाथ गुप्त व डॉ॰ विद्यालाल राय जैसे देश के सफल साम्यवादी, प्रतिकारी व कांग्रेस नेताओं से स्थापित हुआ। सन् 1929 में अखिल भारतीय कांग्रेस समिति के लार्ड अधिवेशन में भाग लिया। लार्ड कांग्रेस के अध्यक्ष डॉ॰ जवाहरलाल नेहरू के साथ उन्हें उनका सन्तर्क स्थापित हुआ। 1932 में गांधीजी द्वारा दलितों के पुस्तक प्रतिनिधित्व के खिलाफ आभारण अनशन का बंदोबस्त विरोध किया और उन्हें बहुत विरोध पत्र लिखा। 1932 में ही पटना में आयोजित विहार प्रांतीय सम्पूर्ण विरोधी सम्मेलन में डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद के साथ भाग लिया और अपने उद्योगों से उन्हें बर्खास्त किया। सन् 1933 में वे बिहार प्रदेश हरिजन मंचक संघ के मंत्री बने। उसी वर्ष बिहार में अन्तर्गत विचारवादी भूकम्प पीड़ितों को सेवा डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद व सन् 1934 में गांधीजी के साथ किया। सन् 1934 में ही उन्होंने अखिल भारतीय दलित वर्ग संघ व विहार मंचक संघ को नीचे डालते। उन्होंने इसी वर्ष पूरे के जगन्नाथ मंदिर, काशी विश्वनाथ मंदिर, बनारस में अशुभ के प्रवेश-आंदोलन का भी सुभास्य किया। सन् 1935 में वे कानपुर में आयोजित राष्ट्रीय दलित वर्ग एकता आन्दोलन के सचिव निर्वाचित हुए। 19 अक्टूबर 1935 को रांची में ईगण्ड कमीशन के सचिव दलितों के महाधिकार व उनके शिक्षा के अधिकार को मांगे की।

बाबू जगजीवन राम 1936 में बिहार विधान परिषद के सदस्य निर्वाचित हुए। 1937 में वे बिहार विधान सभा में चुने, मन्मथ शाहाबाद ग्रामीण क्षेत्र से निर्वाचित किया गया। गांधीजी ने उनसे प्रभावित होकर उन्हें अमूल्य रत्न की संज्ञा से विनियमित किया। 1937-38 में वे बिहार कांग्रेस मंत्रिमंडल में संसदीय सचिव नियुक्त हुए और विकास, सार्वजनिक और उद्योग विभाग के प्रभारों बर्नाये गए। सन् 1938 में उन्होंने अंडमान के कैदियों और दलितों विरुद्ध के संचाल पर बिहार मंत्रिमंडल से त्यागपत्र दे दिया। सन् 1940 में बाबू जगजीवन राम बिहार प्रदेशीय कांग्रेस समिति के मंत्री निर्वाचित हुए। सन् 1942 में मेरठ में आयोजित अखिल भारतीय दलित वर्ग संघ के आठम वार्षिक अधिवेशन का सभापतित्व किया। भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान 19 अगस्त, 1942 को गिरफ्तार किये गये और 5 अक्टूबर, 1943 को वे जेल से रिहा किये गए। 2 सितम्बर, 1946 को वे जवाहर लाल नेहरू की अन्तर्गत सरकार में सभ मंत्री बर्नाये गये और इस पर पर वे 13 मई, 1952 तक बने रहे। वे 1947 में नई दिल्ली में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय क्षम संगठन के एनाबाबी देशों के क्षेत्रीय अध्यक्ष चुने गए। सन् 1950 में वे कांग्रेस के केंद्रीय संसदीय मंडल के सदस्य बने। सन् 1952 में प्रथम लोकसभा चुनाव बिहार के सासाराम संसदीय क्षेत्र से निर्वाचित हुए। वे 13 मई 1952 से लेकर 7 दिसम्बर 1956 तक भारत सरकार के संचार मंत्री रहे। संचार मंत्री के रूप में वे सरकारी हवाई यातायात का राष्ट्रीयकरण किया और डाक-तार व दूरभाष सेवाओं का सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों में विस्तार किया। वे 7 दिसम्बर 1956 से 17 अप्रैल तक परिवहन व रेल मंत्री रहे। सन् 1957 में उन्होंने द्वितीय बार सासाराम संसदीय क्षेत्र का प्रतिनिधित्व किया। बाबू जगजीवन राम 17 अप्रैल 1957 से 10 अप्रैल 1962 तक भारत सरकार के रेल मंत्री पद पर रहे। उन्होंने रेलमंत्रियों के रूप में रेलवे का जापूनीकरण के साथ इसका विस्तार देश के विभिन्न भागों में किया। सन् 1962 में तृतीय बार सासाराम लोकसभा संसदीय क्षेत्र का प्रतिनिधित्व किया। 10 अप्रैल 1962 से 31 अगस्त 1963 तक भारत सरकार के परिवहन व संचार मंत्री पद पर बने रहे। उन्होंने काँग्रेस संगठन को सुदृढ़ करने के मकसद से कामगज प्लान के अन्तर्गत सरकार से त्यागपत्र दे दिया। 24 जनवरी 1966 से 13 मार्च 1967 तक वे भारत सरकार के श्रम, संस्कार और पुनर्वास विभाग के मंत्री रहे। उन्होंने 1967 में सासाराम संसदीय क्षेत्र का चौथी बार प्रतिनिधित्व किया। वे 13 मार्च, 1967 से 27 जून 1970

एक भारत सरकार के खाद्य, कृषि, सामुदायिक विकास व सव्यवस्था विभाग के मंत्री रहे। उन्होंने 1969 से 1971 तक भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष पद को सुशोभित किया। सन् 1971 में साम्प्रदायिक संघर्ष क्षेत्र से संसदीय क्षेत्र निर्वाचित हुए। 27 जून 1970 से 10 अक्टूबर 1974 तक वे भारत सरकार के प्रतिरक्षा मंत्री रहे। सन् 1972 में उन्हें कानपुर विश्वविद्यालय द्वारा "डॉ० ऑफ सटन्स" की मानद उपाधि से सम्मानित किया गया। 10 अक्टूबर, 1974 को वे भारत सरकार के खाद्य मंत्री बनावे गये। 19 जनवरी 1977 को उन्होंने कांग्रेस एवं प्रोग्रेसिव फ्रंट में त्यागपत्र दे दिया और 5 फरवरी 1977 को प्रजासत्तव कांग्रेस का गठन किया। 25 मार्च, 1977 से पुनः साम्प्रदायिक संघर्ष क्षेत्र से छाती चार निर्वाचित हुए। 1 मई, 1977 को उन्होंने प्रजासत्तव कांग्रेस का जनता पार्टी में विलय कर दिया। 28 मार्च 1977 से 24 जनवरी 1979 तक वे पुनः देश के रक्षा मंत्री रहे। सन् 1979 में उन्हें भारत सरकार का उपाध्यक्षमंत्रि बनना पड़ा। सन् 1980 में साम्प्रदायिक संघर्ष क्षेत्र का खाती चार प्रतिनिधित्व किया। इसी वर्ष उनका जनता पार्टी से मोड़भंग हो गया और पहली बार विपक्ष में बैठे। 5 अगस्त 1981 को उन्होंने कांग्रेस जे० का गठन किया एवं उनके अध्यक्ष चनाये गये। दिसम्बर 1984 में वे पुनः साम्प्रदायिक संघर्ष क्षेत्र से अष्टमि चार कांग्रेस जे० को टिकट पर समाज चुने गये। 6 जुलाई 1986 को उनका नई दिल्ली को डॉ० राममोहन लौकिक अभ्युदय में संलग्नकन हो गया।

इस प्रकार 1936 को विश्व विद्यालय परिसर व 1946 को संविधान सभा से लेकर मूल्य पर्यन्त 1986 तक साम्प्रदायिक संघर्ष क्षेत्र का 40 साल तक लगातार संसद का प्रतिनिधित्व कर विभिन्न प्रतिष्ठान बनना। इस दौरान भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों को सुशोभित किया। उन्होंने रेलमंत्री, धर्म-योजना मंत्री के रूप में लाखों योजनाओं का मूकन कर संतोषकारी को योजना उपलब्ध कराया। शिक्षण, स्वास्थ्य, परिवहन, डाक-संचार क्षेत्रों में नये युग व ऊर्ध्व को सुदृष्टता को। भारत को साक्षर संकट से मुक्त कराया और अन्धव्य अन्धता निर्मूलता को समाप्त किया। रक्षा मंत्री के रूप में योजना रक्षा मूकन आंदोलन को नयी राशि प्रदान की और संजला देश को अभ्युदय में अनुसूचित योजना दिया एवं भारत को विकसित राष्ट्र बनाया। भारत-पाक युद्ध को निर्णायक रूप में पहिणक और पाकिस्तान पर ऐतिहासिक विजय प्राप्त कराया। स्वतंत्रता आंदोलन में सुभाषचंद्र बोस लिंग और कांग्रेस को एक नयी दिशा और ऊर्ध्व प्रदान की। साम्प्रदायिक जटिल को समाप्त करने और समाज मूलक समाज के निर्माण में अनुसूचित योजना दिया। राष्ट्र व समाज तथा देश को राजनीतिक, साम्प्रदायिक आर्थिक व शक्ति तथा धार्मिक सम्भावना को क्षेत्र में किये गये महान योजनाओं को लिए राष्ट्रीयकरी व भारत सर्वत्र उनको चार रलोगा।

#### संदर्भ:

1. युक्ति के अन्वय - १ सत्येक प्रकाश
2. सन् १९९०००००० का पालन - 18 दिसम्बर 1983, 1972 काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, 1968.
3. अधिपतिपत्रिका दिल्ली।
4. संसदीय कार्य-विभाग - 1952, 1967, 1971, 1977, 1984.
5. आज - अक्टूबर 1981
6. भारतीय - जनवरी 1979.

ISSN 0975-119X

UGC-CARE GROUP I LISTED

वर्ष 12 अंक 5 सितंबर-अक्टूबर 2020

# दृष्टिकोण

कला, मानविकी एवं वाणिज्य की  
मानक शोध पत्रिका



IMPACT FACTOR : 5.051

India's Leading Refereed Hindi Language Journal

उत्सवकार्ड के राष्ट्रीय स्तरों से जारी तौरों में ही रहे फलान से महिलाओं के सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन पर प्रभाव का एक अध्ययन -डॉ० इंदिरा मिश्र शर्मा	896
राष्ट्रीय प्रवास एवं होली का त्यौहार-डॉ० संजय कुमार मिश्र	904
संविधान एवं भीमिका: वर्तमान संसद निर्वाचन के मतदाताओं का स्थिति- डॉ० विवेक शर्मा	907
महिला अधिकार : भीमिका एवं सामाजिकता-रजनी	911
भारतीय जनसंख्या में शहर-ग्राम का विलयन-कल्याण शर्मा	914
समाज में बच्चों-सहित में आर्थिक चेतना-डॉ० विवेक शर्मा	917
समाज-जीवी के संस्था का राष्ट्रीय स्तर-स्वायं-डॉ० विवेक शर्मा; संजय प्रसाद	921
समाजशास्त्री शोध का अर्थ-डॉ० कल्याण शर्मा	924
कृषि क्षेत्रों के अर्थ-डॉ० 'कृषि' में 'कृषि' के जीवन शैली की नवीन अभिव्यक्ति-डॉ० श्रीराम प्रसाद शर्मा; रजनी मिश्र	927
संविधान एवं समाज का अर्थ-डॉ० कल्याण शर्मा	931
अध्यापक एवं कृषि संसार एवं कृषि संसार प्रौद्योगिकी: सिलचस्त्र जिले के छात्राध्यक्षों के संदर्भ में एक अध्ययन -विद्याभूषण शर्मा; डॉ० संजीव कुमार शर्मा	934
जिला सिलचस्त्र के सामाजिक विद्यार्थियों के समाज एवं अनुसंधान जनजाति के विद्यार्थियों की आकांक्षा धार का अध्ययन-डॉ० विद्या मिश्र	938
अंतर्राष्ट्रीयकृत अनुसंधान (इंटरनेशनल) : विदेशीकरण अध्ययन-डॉ० रजनी शर्मा	942
सोनी चर्चों के निरंतर में आत की कृषि व्यवस्था-डॉ० जयंत कुमार मिश्र	947
संविधान संसूचि में समाजिक इतिहास तथा चेतना-डॉ० रजनी	950
समाजशास्त्री शोध के धार्मिक वैचारिक प्रति चिन्त-डॉ० श्रीराम शर्मा; भीमिका	955
समाज में स्त्री विचार-चिन्त का रूप-डॉ० सुधीर कुमार	959
समाज की सामाजिक के अर्थ-डॉ० समाजशास्त्र-डॉ० सिन्धु शर्मा	961
समाजशास्त्र शिक्षा और विचार की रचना-डॉ० रजनी शर्मा	965
समाज में जातिव्यवस्था शिक्षा संसार-डॉ० श्रीराम शर्मा; मनीष कुमार शर्मा	968
समाज का अर्थ-डॉ० समाजशास्त्र 2005 का अर्थ-डॉ० सुधीर कुमार-डॉ० विक्रम मिश्र	972
समाजशास्त्र के अर्थ-डॉ० समाजशास्त्र : एक अध्ययन-डॉ० श्रीराम शर्मा; डॉ० श्रीराम शर्मा	978
समाजशास्त्र में जातिव्यवस्था एवं राष्ट्रीय विद्यार्थियों के सामाजिक परिणाम का अर्थ-डॉ० रजनी शर्मा; डॉ० श्रीराम शर्मा	979
समाजशास्त्र में जातिव्यवस्था एवं राष्ट्रीय विद्यार्थियों के सामाजिक परिणाम का अर्थ-डॉ० रजनी शर्मा; डॉ० श्रीराम शर्मा	983
समाजशास्त्र में जातिव्यवस्था एवं राष्ट्रीय विद्यार्थियों के सामाजिक परिणाम का अर्थ-डॉ० रजनी शर्मा; डॉ० श्रीराम शर्मा	986
समाजशास्त्र में जातिव्यवस्था एवं राष्ट्रीय विद्यार्थियों के सामाजिक परिणाम का अर्थ-डॉ० रजनी शर्मा; डॉ० श्रीराम शर्मा	990
समाजशास्त्र में जातिव्यवस्था एवं राष्ट्रीय विद्यार्थियों के सामाजिक परिणाम का अर्थ-डॉ० रजनी शर्मा; डॉ० श्रीराम शर्मा	993
समाजशास्त्र में जातिव्यवस्था एवं राष्ट्रीय विद्यार्थियों के सामाजिक परिणाम का अर्थ-डॉ० रजनी शर्मा; डॉ० श्रीराम शर्मा	997
समाजशास्त्र में जातिव्यवस्था एवं राष्ट्रीय विद्यार्थियों के सामाजिक परिणाम का अर्थ-डॉ० रजनी शर्मा; डॉ० श्रीराम शर्मा	1002
समाजशास्त्र में जातिव्यवस्था एवं राष्ट्रीय विद्यार्थियों के सामाजिक परिणाम का अर्थ-डॉ० रजनी शर्मा; डॉ० श्रीराम शर्मा	1005
समाज में जातिव्यवस्था एवं राष्ट्रीय विद्यार्थियों के सामाजिक परिणाम का अर्थ-डॉ० रजनी शर्मा; डॉ० श्रीराम शर्मा	1008
समाजशास्त्र में जातिव्यवस्था एवं राष्ट्रीय विद्यार्थियों के सामाजिक परिणाम का अर्थ-डॉ० रजनी शर्मा; डॉ० श्रीराम शर्मा	1011
समाजशास्त्र में जातिव्यवस्था एवं राष्ट्रीय विद्यार्थियों के सामाजिक परिणाम का अर्थ-डॉ० रजनी शर्मा; डॉ० श्रीराम शर्मा	1014



# बिहार में क्रांतिकारी किसान संघर्ष

डॉ० सीमा पटेल

सह-आचार्य, इतिहास विभाग, ए.ए., पटेल महाविद्यालय, भद्रुआ

मनोज कुमार यादव

शोध छात्र, इतिहास विभाग, वीर सूंवर सिंह विश्वविद्यालय, अता (बिहार)

को एक बिहार क्रांतिकारी संघर्षों के बिहार जाने के भारतभरभर भारतीय कम्युनिस्ट आंदोलन में सांख्यिक उत्थार का करने-पुनर्ले का बीका मिल  
एक के रूप में भी नहीं कि सामाजिक जनकारियों को इस विजय की भारी कीमत चुकानी पड़ी। ये जनारण्यु ने सत्य एक आंधीतक स्तिह बनकर  
ले में भी नहीं इरवमगत पर कभी अपनी छात्र नहीं अक्रिय कर पाए। अब पक्षी भी सत्य संगत में लगान की तनी तक सांख्यिक उत्थार को पूर्णपूर्  
क्रिया मेंले का कार्यधर्म बने रहकर भी यदि सी.पी.आई. बिहार में एकान नहीं खू पाई तो इससे थल और का भीक निकलत का?

एव कम्युनिस्ट एक कं की एलील जरा सुभिय: भात में बिहार सबसे पिछला हुआ राज्य है, जो जातिवार के बट्टर धुकेकाग ने बड़ा हुआ है। नि  
को दुईकरी मुलतों का कोई उत्पंखधीय इतिहास नहीं रहा। त्त, सचमुच ये तथ्य उलने ही निश्चिकर है, जिनके निश्चिकर का बिपर कि मिल पकल पर  
जातिवक जनकर अपने धाध पुरी करता है, चली से क्रांतिकारी जनवार अपनी मात सुक करता है। यही बिहार केर पिछला राज्य और क्रांतिकारी कलपन  
के लालों केकी संधिष हुआ है। समाज के सबसे निचले स्तर के लोग आज किसान संघर्षों के इतिहास में विष आर है। पिता इत्यकाण्ट हो या अणकल  
ज्वाल, पूर को पक्षी नभसमालों की संभार हो या गोली से बात बनने वाले अर्ध-सैनिक दल, "कम्युनिस्ट क्रांति" के पीठवार हो या "राली" विपल के  
इत्यार कोई भी लोक बिहार के धधकते बैल-खलिहाले में मरफट की शक्ति नहीं कलपन कर पाई, और न ही कोई सक्रि इतिहास के सत्य से इन नवीकल  
इतिहासों को संभव में धकत साकेगी।

लेकिन बिहार का किसान संघर्ष कथा सचमुच कोई नई राह खोज साकेगा? या फिर, अपने पूर्ववर्ती किसान संघर्षों को तारक यह भी बिनात एक या पुनर्ले  
जब कोष ल में समझीत कर लेगा? उनाम सन्ने मावसंबारियों और क्रांतिकारी जनवार के हमदरों के विपल में यही इन पूर रहा है। यह संघ संज्जल  
ही पल से निचले की विपल में हमारा पहला कदम है। अगर इससे पहले कि हम इस शोध को विपण्यसु तक पहुँचे, अवर का सांख्यिक कम्युनिस्ट आंदोलन  
में ले-ले उलने पर एक नजर डालते हुए बिहार के किसान संघर्ष द्वारा अपनाए गए विरिष्ट गतिधध की खींच को जाए।

इसे प्रथम बिहार् देशों में कम्युनिस्ट पार्टियों की कार्यसंति के इस संरी बुनिकारी सकलों को हल करने पकल है: किसानों के संघ संघ और दुईकरी  
पं के लक संभव 1921 में लेनिन ने पुन के कम्युनिस्टों को यह सलाह दी थी कि वे इस की संसंकि क्रांति को आम सिद्ध के अलप पर अपने-अपने  
को भी संसंकि संघ संघ करे। लेनिन ने यह स्पष्ट चेतावनी दी थी कि उन्हें अपनी समसंघों का इस संघका: किसी भी कम्युनिस्ट किलप में नहीं  
लेने।

अ कोको कोली को लान परकल हो गई तो लेलंगला के उत्थान ज पलन (1946-51) के संरंभ में भारतीय कम्युनिस्ट आंदोलन में स्पष्ट: पुनक लेन  
की संसंघ का। संसंघ एक कं की लान में चीनी क्रांति के महारव को सुकंध दिख गया, माओ पर पुसा टीलें बनने का इत्यन लणकर भीपन  
कलपन किम एक एक संघ संघों में संकदर बने के विद्रोहों को आधार बनाकर जनवारी और जनकवारी क्रांतियों को साथ-साथ सलपन करने को लेलको को  
को कोली को लक पुनसंघकरी लान चीनी क्रांति और माओ लपेपुध के प्रति स्वालिन को प्रारंभिक संसंघों को पुको बन कर लेकन चाली थी, पर अलत:  
को को लक निर गई।

लेलन के कलपुन संघ संघ के निर्माण में अध संकंठारिष्ट की लान कापी हर एक चीने अनुभवे और काओ की शिखरों पर निर्भर थी। यद्यपि अध  
को कोली-पुनक, अध संसंघ का साथ लालमल कापम कर निवाम की संसंघी निरकुहात के किलप आंदोलन चलने में संकल रहा, पर वेदक संसंघार  
को लको कोली का सुकंधकल करने की क्रांति संसंघा को हल करने में जरी असफलता हाथ लगी। संसंघति संसंघति में उनके लिए सावर इस कापली  
को लाल लान करन संसंघ भी न था, और इसीलिए पार्टी की अंदर से लालों के संघ संघ को उलत उलसंघ संसंघ तक नहीं पहुँचाया जा सका। नारदाल  
कलपुन पार्टी के लक में अवकल चले किसान संघ संघों के इतिहास में लेलंगला एक गीलकथ अलप मान जात है। यह चली नेपुध के एक हिस्से द्वारा  
को कोली के अनुभव से सिद्ध लेने का और भूमि क्रांति को पूरी बालकर भारत की जनवारी क्रांति के लिए एक अलक कार्यसंघ लिक करने का पलन  
की प्रथम थी।





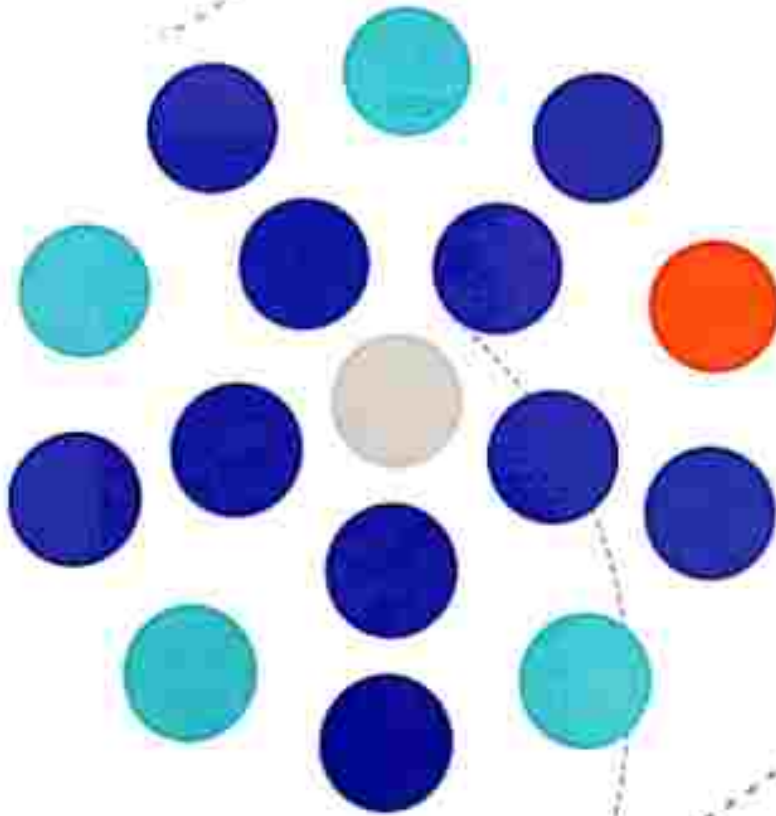
ISSN 0975-119X

UGC-CARE GROUP I LISTED

वर्ष 11 अंक 5 सितंबर-अक्टूबर 2019

# दृष्टिकोण

कला, मानविकी एवं वाणिज्य की  
मानक शोध पत्रिका



India's Leading Refereed Hindi Language Journal

कहानी की कहानियों में गणित मध्यमवर्गीय जीवन मूल्य-सुधीर सिंह; डॉ० प्रमोद कुमार सिंह	927
लगातार मानस में प्रख्यात और उत्साह का वैशिष्ट्य-विशाल मिश्र	932
हिन्दी उपन्यास; समाज में नारी की जगह-हरिहरद्वारा; डॉ० प्रमोद कुमार सिंह	935
दुर्गा प्रेमचंद के कथा-साहित्य में किसानों की राजनीतिक स्थिति-कमल शर्मा; डॉ० प्रमोद कुमार सिंह	938
सामकालीन कहानी साहित्य : एक अवलोकन-डॉ० प्रेमचंद चन्दल	942
साहित्यिक स्वप्न में संगीत चिकित्सा की भूमिका-डॉ० रंजित काश्यप	946
संगीत साहित्य की रक्षा और दिशा-डॉ० अनिल कुमार सिंह	949
जलवा और अजमेर जिले की अर्थव्यवस्था में पर्यटन उद्योग की भूमिका-डॉ० अशु शर्मा; सुशील कुमार शर्मा	953
डॉ० सोमेश अम्बेडकर का सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक दर्शन; एक विस्तारण-डॉ० अरुण शान्त शर्मा	956
कृष्ण संकाय की कहानियों में मूल्यसोध-डॉ० रेणु गुप्ता	959
इतिहासिक स्तर पर हिंदी मुलेखन कोषाल के प्रोत्साहन की आवश्यकता एवं महत्व-अश्विनी कुमार शर्मा	963
धार्मिक धारणा के संदर्भ में भारतीय मनोविज्ञान की भूमिका-डॉ० रंजित कुमार शर्मा	968
जनजागरण, सूचीकरण और सामान्यवाद की पहचान करती कहानियाँ-डॉ० कृष्ण प्रताप सिंह	971
मिथिला विश्वविद्यालय के माध्यमिक विद्यालयों के सामान्य एवं अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों की आकांक्षा स्तर एवं शैक्षणिक उपलब्धि के संबंध में तुलनात्मक अध्ययन-डॉ० विमल मिश्र	974
सोनीजी नदी की परिकरिता का हिन्दी भाषा विकास में योगदान-प्र० अशोक गुलाबी शर्मा	978
सामाजिक राजनीतिक पुनर्जागरण के संदर्भ में नरेश पेंतल का काव्य-डॉ० संदीप शर्मा	982
भारत में पर्यटन स्थल का विकास व जीवोपार्क पर प्रभाव-किरण कुमारी	987
गांधी जी के अहिंसा का दर्शन एवं सत्याग्रह की परिभाषना-प्रमिला शर्मा	991
ज्ञान और जनजागरण-डॉ० दिनेश कुमार	995
विद्यार्थियों में किसानों की स्थिति एवं समाचार-डॉ० सीमा पटेल; मनीष कुमार शर्मा	1000
हिंदी के काल में परम्परागत अर्थव्यवस्था का पतन-रंजित शर्मा; डॉ० सीमा पटेल	1003
जीवन-कार्य में प्रचलित परम्परागत ज्ञान की न्याय व्यवस्था का ऐतिहासिक अध्ययन-धीरेश सिंह; सत्यंजय शर्मा	1006
अर्थव्यवस्था की अग्रगण्यता और 'मिथिला अर्थव्यवस्था' का रूपगठन-अपीतम कुमार शर्मा	1014
एन० टी०एस० टपाभावा का शिक्षा दर्शन-डॉ० डॉ० विमल मिश्र	1019
प्रेम और शिक्षा-डॉ० वृंदा कुमारी शर्मा	1022
एक जनजातीय व्यवसाय परम्परा एवं सामाजिक संरचना के विशिष्ट आयाम-डॉ० नरेश सिंह	1025
सांस्कृतिक स्तर पर जनजात एवं विद्यालय स्थान विद्यार्थियों के अभिभावक सम्बन्ध का तुलनात्मक अध्ययन-सुरेश कुमार	1030
नारी उत्थान की अवधि काव्य-डॉ० सुमित्रा शर्मा	1037
स्त्रियों के जीवन प्राचीन भारतीय समाज में स्थिति-डॉ० प्रभात कुमार; जनीता देवी	1049
भारत में चुनाव सुधार-रक्षा और दिशा-डॉ० अर्चना शर्मा	1044
नेपाल में लोकतंत्र की प्रमुख चुनौतियाँ; जनजात के विशेष संदर्भ में-डॉ० सुरेश कुमार	1047
हिन्दी कथा साहित्य की विकास में साहित्यिक परिवर्तनों का योगदान-महेंद्र कुमार शर्मा; डॉ० अनीता शर्मा	1050
हिन्दी कहानी में नारी-विमर्श; नारी संरक्षण के संदर्भ में-डॉ० मिथु शर्मा	1053

# ब्रिटिश काल में परम्परागत अर्थव्यवस्था का पतन

राहुल पाण्डेय

शोधार्थी

डॉ० सीमा पटेल

शोध विदेशीकरण, एनोमिस्ट प्रोफेसर, सह-आचार्य, इतिहास विभाग, स० क० पटेल यादविकाश्रम, मन्डल

भारतीय जनता का जीवन, सामग्री विकसृष्टता, विदेशी दमन, अमानवीय शोषण और खर्ब चालवारी के खिलाफ लड़े स्वर्णों में एक चरण है। स्वतन्त्रतापूर्वक रूप से विकसित भारत सू-भाग की शोषण और लोभधर्मों की लूट और धिरे ही भी यहाँ तक पहुँची जो जनता पर शासन। इन मूल्यों के अन्तर्गत भारत को भारतीय जनता को पुनर्जागरित किया। भारतीय अर्थव्यवस्था में परिवर्तनीय मूनी की जबरन प्रवेश ने इस शोषण को और बिलाल दिया। भारत की बहुसंख्यक जनता में खा-खा के पुनर्जागरण और प्रभुत्व के खिलाफ स्वर्ण किया और अपने भविष्य को रक्षने का प्रयास किया। भारतीय में 14 वीं जरी के जन में पुनर्जागरण के प्रथम लक्ष्य दिखाई देते हैं। यहाँ पुनर्जागरण का विकास बहुत बढित, सामाजिक और आर्थिक प्रक्रिया को खरीर धरे-धीरे हुआ। अनुचित भारतीय जनता को खा-खा में पुनर्जागरण का ही टो टो है। भारतीय जनता को लोभधर्म से संबंधित जटिल प्रक्रिया और अति वैदेशिक स्वतन्त्रता एक विपन्न और विकसित अर्थव्यवस्था का विषय है। इन सुविधाओं की सुविधा के लिए कुछ तथ्य हमारी मदद कर सकते हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था को स्वतन्त्र अर्थव्यवस्था के रूप में मान्यता का विरोधण ऐसे अध्यापन के लिए आज भी स्पष्ट दिशा निर्देशन प्रदान है। 1853 ई० में जब ब्रिटिश सरकार के मन्त्री जेम्स ब्रैन्टन का खरे (भाग 185) भारतीयजनता के लिए प्रस्ताव किया गया तब मन्त्री ने अनुपस्थित डेवरी विन्सटन में खा-खा के रूप में जनता के लोभधर्म के लिए विपन्न अर्थव्यवस्था में भारत के रूप में मान्यता के प्रथम प्रथम पुनर्जागरण (1857 ई०) में जरी है। यह लोभधर्म के लोभधर्म के साथ यह सब लोभधर्म अर्थव्यवस्था में भारत के रूप में मान्यता के प्रथम प्रथम पुनर्जागरण (1857 ई०) में जरी है। यह लोभधर्म के लोभधर्म के लोभधर्म का रूप है। मन्त्री का विरोधण 'पुनर्जागरण अर्थव्यवस्था' की विरोधण से प्राप्त होता है जिसमें लोभधर्म अर्थव्यवस्था में लोभधर्म अर्थव्यवस्था का रूप है और जनता के लोभधर्म का रूप है। मन्त्री का विरोधण 'पुनर्जागरण अर्थव्यवस्था' की विरोधण से प्राप्त होता है जिसमें लोभधर्म अर्थव्यवस्था में लोभधर्म अर्थव्यवस्था का रूप है और जनता के लोभधर्म का रूप है। मन्त्री का विरोधण 'पुनर्जागरण अर्थव्यवस्था' की विरोधण से प्राप्त होता है जिसमें लोभधर्म अर्थव्यवस्था में लोभधर्म अर्थव्यवस्था का रूप है और जनता के लोभधर्म का रूप है।

यह समुदाय लोभधर्म के लोभधर्म का रूप है। मन्त्री का विरोधण 'पुनर्जागरण अर्थव्यवस्था' की विरोधण से प्राप्त होता है जिसमें लोभधर्म अर्थव्यवस्था में लोभधर्म अर्थव्यवस्था का रूप है और जनता के लोभधर्म का रूप है। मन्त्री का विरोधण 'पुनर्जागरण अर्थव्यवस्था' की विरोधण से प्राप्त होता है जिसमें लोभधर्म अर्थव्यवस्था में लोभधर्म अर्थव्यवस्था का रूप है और जनता के लोभधर्म का रूप है। मन्त्री का विरोधण 'पुनर्जागरण अर्थव्यवस्था' की विरोधण से प्राप्त होता है जिसमें लोभधर्म अर्थव्यवस्था में लोभधर्म अर्थव्यवस्था का रूप है और जनता के लोभधर्म का रूप है।

# दृष्टिकोण

से अधिक लोगों का जीवनमान होता है। यदि जनसंख्या बढ़ जाती है तो पुराने समुदाय को तो तरह जिस जमीन पर कब्जा न हो उनपर एक नए समुदाय को स्थापित कर ही जायेंगे। यह संपूर्ण प्रक्रिया व्यवस्थित रूप से इन समुदायों के अर्थव्यवस्था को उद्वृत्त करती है लेकिन उद्योगों से होने वाले लाभों में वैसा अग्र-विभाजन होता है, वैसा यहाँ असंभव है, क्योंकि सुन्दर, लोहार या बर्तन आदि को एक अपरिवर्तनीय बाजार मिलता है और अन्ततः इनकी कीमतों के स्वरूप पर निर्भर करती है। समुदाय में अर्थव्यवस्था का नियंत्रण प्राकृतिक न्याय के अपरिवर्तनीय अधिकार से नियंत्रित होता है। इसके साथ ही यह प्राथमिक शिल्पकार, लोहार, बर्तन आदि सभी अपनी उद्योगों में अपनी जातियों के सभी कार्य स्वतंत्रतापूर्वक, परंपरागत रूप में संपन्न करते हैं। इनके एक कोर्ट भी अधिकारी नियंत्रण नहीं करता। इन समुदायों के आत्मबोध उत्पादन की सामाजिक दायें की सरलता यह है कि यह उसी रूप में किया जाने की पुनर्स्थापित करता है और जब कभी दुर्घटनावश बर्थाप हो जाता है तो उसी स्थान पर उसी नाम से पुनः प्रस्थापित हो जाता है। यही व्यवस्थितता एतद्विषय समाज को अपरिवर्तनीयता के स्वयं को बूझती है। ऐसी अपरिवर्तनीयता को अनाधाराय विरोधाभास के साथ एतद्विषय राज्य के कर्मों की प्रत्यक्ष व हानि वाले राजस्व के परिवर्तन के साथ विभटन और पुनर्स्थापना में मौजूद है। इस समाज के आर्थिक दायें के ताल, राजनीतिक बदलायों की तुलना राज के साथ भी अनुपम धरे रहते हैं। भारत द्वारा की गई यह विवेचना बहुत सुंदर ढंग से प्राचीन भारतीय अर्थव्यवस्था और समाज का सार प्रस्तुत करता है।

ब्रिटिश साम्राज्यवादियों के औपनिवेशिक शासन और शोषण ने भारत की परंपरागत उत्पादन व्यवस्था और स्वावलंबी समाज व्यवस्था को विनाश कर दिया। 1757 ई. में प्लासी का युद्ध जीतने के बाद ब्रिटिश सेना भारत के विभिन्न इलाकों पर कब्जा करती गई। ब्रिटिश सेना द्वारा अधिभूत इलाकों में हुई आर्थिक व्यवस्था और सामाजिक अर्थव्यवस्था को भी चरमनाश कर दिया गया। इसके पर-कब्जा करने के साथ ही उच्च इलाकों का अतिरिक्त उपहार व सामान्यवादियों को प्राप्त हो गया। साम्राज्यवादियों ने भारतीय संघ को खुलकर लूट और शोषण किया। लुटेरी गई भारतीय संघ सीधे इंग्लैंड सेवी बने लगे। ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत के अंदर व्यापार करने पर धारी कर लगा दिया। कंपनी ने खुद कर देने और सूदखोरी का काम शुरू कर दिया। इस प्रकार ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारतीय जनता से अनाद धन निचोड़ लिया। इस प्रकार लूट को मार्क्स ने जनता। संपूर्ण 18वीं सदी में प्रथम लूट के जरिए भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी को भेजी गई वह व्यापार द्वारा जीवित को गई विनाश संघर्ष में कई गुना अधिक थी। ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत से इंग्लैंड तक भारत को बाली शाही की तरह भूमिका निभाई। भारतीय जनता के खून-पसीने की कमाई कंपनियों में बदल गई और यही धन ब्रिटेन की शुरुआत हुई। इन कर्मों का मुख्य जग था। ब्रिटिश उपनिवेशकों ने 1757 ई. से 1812 ई. तक 55 वर्षों में भारत से सीधे आमदनी के रूप में दस करोड़ पाउंड से बड़ी अंश धन एकत्र किया। हादसालाठी तरीके से सैनिक विजय और विजित क्षेत्रों में संघर्ष लूटने का मिलसिला कई देशों तक जाते रहा। धीरे-धीरे उपनिवेशों ने अनुभव किया कि ब्रिटिश शासन के स्थायी और संचित कर के लिए शोषण को नियंत्रित करना चाहिए और उसे कानूनी स्वरूप देना चाहिए। इसीलिए ब्रिटिश औद्योगिक क्रांति के लिए साम्राज्यवादियों ने कुछ प्रशासनिक तयों लागू किए और भूमि व्यवस्था में भी कुछ परिवर्तन किए। साम्राज्यवादियों ने 1757 ई. से 1783 ई. में ब्रिटिश उपनिवेशकों ने भूमि के स्वामी बंदीवस्तु अधिनियम को पारित कर नियमित रूप से ईस्ट इंडिया कंपनी के उपनिवेशों में कर वसूलने की व्यवस्था बनाई। 1793 ई. के अधिनियम और अन्य अधिनियमों के जरिए निश्चित कर दिया गया कि जमीन पर जमींदार का ही अधिकार होगा और किसानों का नहीं। साम्राज्यवादियों के उद्योगधरकरी संबंधी अधिनियम और छोटे-से-मालिकों के अधिनियमों की मान्यता समाप्त कर दी गई। इन कानूनों के तहत बंगाल प्रेसीडेंसी की जनता को जमीन पर उनके उद्योगधरकरी दायों से संबंधित कर दिया गया और जमींदारों के अनाद सहाय करने वाले जमींदार को उनके पर अधिकार सौंप दिया गया। जमीन पर एक तरह का मालिकाना हक होने के बावजूद जमींदार को औपनिवेशिक ब्रिटिश शासन का एक नए रूप में पुनः स्थापना देना पड़ा था। ऐसा न कर पाये पर राज्यसत्ता, जमीन किस्मों दूसरे व्यक्ति को दे देती, जो यह धन हाथ चुका देता था। इसीलिए औपनिवेशिक शासन को संतुष्ट के लिए और अपनी जनता के लिए जमींदार किसानों का और अधिक शोषण करते थे। धीरे-धीरे यह शोषण अमानवीय सीमा तक हो जाता था। जमींदारों द्वारा ब्रिटिश शासन को निश्चित कर देना था। लेकिन वे किसानों पर किसी भी तरह तक कर वसूल सकते थे। पुरानी भारतीय सामंती व्यवस्था की अस्थिरता समाप्त हो गई और इस प्रक्रिया के जरिए जमींदारों का एक नया तबका सामने आया जिसमें सूदखोरी, व्यवसाय और औपनिवेशिक अधिकारी शामिल थे। यही करने वाले किसानों और जमींदारों में बीच में अनेक तबकीय विघ्नोत्पत्ति पैदा हो गए। इनमें हर कोई किसान को बीच सेना चाहता था। इन प्रकार किसानों का शोषण हर प्रकार की योजना पर कर गया। उपनिवेशकों ने किसानों का शोषण करने के लिए शिक्षण भारत में रैसतवारी व्यवस्था लागू की। किसान जमीन को एक टुकड़े का स्वामी ज्ञातकर बन गया। एक सहेतवी किसान समाज जिम्मेदारियों के साथ जमीन से बंध गया। चायपान में यह सुनिश्चित हो जाकर गया।

इस प्रकार जमींदारों और रैसतवारी, किसानों का शोषण करने के लिए दो मुख्य परिवर्तित सामंती तरीके बने। यह नए सामंती तरीके किसानों को लूट करने वाले और उपनिवेशकों के लिए पूर्ण रूप से लाभकारी थे। अंग्रेजी पूंजीपतियों ने, इंग्लैंड की औद्योगिक क्रांति की सहायता देने के लिए भारत में लूट और शोषण का नया इंग्लैंड नईकाने के साथ-साथ भारत में इंग्लैंड के औद्योगिक माल के उत्पादन की आवश्यकता महसूस की। दूसरे शब्दों में, इन दोनों के साथ मुख्य व्यापार बंध सकते हैं। 1757 ई. के प्लासी युद्ध के समय से अब तक भारत के साथ एकाधिकारी रूप से ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा लूट संपूर्ण रूप से ब्रिटिश पूंजीपतियों को हित मिलता नहीं था। एक नए बाजार की खोज से प्रेरित इंग्लैंड की पूंजीपति ने ईस्ट इंडिया कंपनी को मुनाफा के संचयन करने का लक्ष्य अभिमान उठे दिया। सन् 1813 ई. में भारतीय व्यापार में ईस्ट इंडिया कंपनी का एकाधिकार समाप्त कर भारत के साथ मुक्त व्यापार को इन खोल दिया गया। यह वास्तव में भारत के आर्थिक शोषण के नए दौर की शुरुआत थी। ईस्ट इंडिया कंपनी अब तक भारतीय जन, किसान और अन्य भित्तिवादी के सामने बंध कर, इंग्लैंड को निर्यात कर मुनाफा कमा रही थी। लेकिन 1813 ई. के बाद भारतीय बाजार को ब्रिटिश औद्योगिक उत्पादों के लिए खुला कर देने से भारत में ब्रिटिश माल केतों से आयात होने लगा।

यह वास्तव सन् 1814 ई. में 160000 पाउंड की तुलना में सन् 1828 में 5800000 पाउंड तक बढ़ गया। यह संपूर्ण ब्रिटिश निर्यात का अंश बन गया। सन् 1828 ई. में भारत के साथ व्यापार में अनेक ब्रिटिश व्यापारी लक्ष्यों ने करीब 110000 टन माल डोया। सन् 1814 ई. में ब्रिटेन ने भारत को 210000 टन माल-कपड़ा और 800000 टन रंगीले मूल्य कपड़ा भेजा। वर्ष 1826 ई. में यह क्रमशः 160 लाख और 200 लाख तक बढ़ गया। भारत में लूट

का तरीके से विकास होने से बंदरगाहों का व्यापारिक क्षेत्रों से सीधे संबंध टूट गया। इसलिए ब्रिटिश साम्राज्यवादियों ने निर्यात करने के प्रयास को और तेज बन दिया। एक तरफ ब्रिटिश व्यापारियों को भारत में माल लाने की पूरी रूढ़ भी वहीं दूसरी तरफ इंग्लैंड में भारतीय शोध और मूल्य पर 70 से 80% कटौत का लक्ष्य था। इस प्रकार भारतीय अर्थव्यवस्था को दोनों तरफ से हाथि उठाने पड़े। उपनिवेशवाद की इस भेदभावपूर्ण व्यापार नीति के कारण भारतीय मुँह शायद ही उद्योग करता ही गया। ब्रिटिश औद्योगिक उत्पादन घास कर मुँह उद्योग देशों से विकसित हुआ। यह केवल तकनीकी उन्मुखता का सम्पूर्ण नहीं था। एक तरफ मुँह व्यापार और इंग्लैंड में भारतीय आयात पर राज को साम्राज्यवादी नीति ने भारत के देशी उद्योगों को नष्ट किया और अपने देश में औद्योगिक विकास को शक्ति प्रदान की। यह केवल भारतीय मुँह उद्योग के साथ ही नहीं हुआ, भारत के अन्य उद्योगों के साथ भी गरी हुआ। इसी प्रकार भारतीय मुँह उद्योग को भी नष्ट किया गया।

ब्रिटिश औद्योगिक उत्पादन और विकास के लिए भारतीय कच्चा माल अनिवार्य था। इंग्लैंड में उत्पादित औद्योगिक माल में भारत के बाजार को पाठ से ब्रिटिश राजको के हित में था और भारतीय कच्चा माल और कृषि उत्पादों को इंग्लैंड में बाजार करना भी उन्मुखता का आवश्यकता थी। साम्राज्यवादियों को इस योजनात्मक व्यापारिक नीति ने भारत को पूँजीवादी प्रिटेन भी लिए कच्चा माल देने वाला सहायक बना दिया और साथ ही साथ सामंतवादी शासन के तरीकों को खराब रख कर भारतीय जनता को पाठे हात कर दिया। औपनिवेशिक शासन के अंतर्गत भारत को इंग्लैंड के कच्चा माल और कृषि उत्पाद प्राप्त करने के सोच के रूप में कृतपूर्ण रूपान्तरण ने भारत के अंदर पारंपरिक अन्वेषण पर विनाशकारी प्रभाव डाला। पहले तो यह विभाजन कृषि और राज्य उद्योगों में हुआ। इस प्रक्रिया ने भारतीय दलकारों, कारीगरों को अपने दुर्गो भ्रान्त व्यवसायों से निर्देयतापूर्वक उखाड़ फेंका। इन आपातल लक्षणों के बाद पहले से ही अत्यधिक दबाव डाल रहे तरीकों में जाने के अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प नहीं रहा। परंपरागत भारतीय अर्थव्यवस्था के अगुआ तल से उद्योग से कृषि उत्पाद में सामंजस्य कायम करते थे, समाप्त कर दिए गए। हजारों वर्षों की सम्पत्त को जड़े खोद दी गई और भारतीय सामाजिक व्यवस्था का हाथ धिन्-धिन् तो गया। इस परिपटन ने भारतीय मजदूर वर्ग को कहिनाइयों को और बड़ा दिया। भारत को इंग्लैंड का कच्चा माल और कृषि उत्पाद से फल सहायक बनने की प्रक्रिया बेहद संजगाहानी और बर्तन थी।

भारतीय सामाजिक अर्थव्यवस्था पर बेहद मोड़-पाड़ का संचालक असर पड़ा। उस समय की बंधन की वार आज भी भारतीयों के दिमाग में कौंधती रहती है। इस सब का कारण ब्रिटिश साम्राज्यवादियों द्वारा औपनिवेशिक भारत का शोषण करने की नीति ही थी।

भारतीय आधुनिक उद्योग का विकास, भारतीय मजदूर वर्ग की उत्पत्ति, इसके बाद का विकास और इससे जुड़ी समस्याओं को ऐतिहासिक परिदृश्य में दिखाने और कृषि अर्थव्यवस्था पर अत्यधिक दबाव की परिवर्तन के अंतर को अवश्य समझना चाहिए।

संदर्भ

1. कार्ल मार्क्स, राज कीपरल, चाल्पुस 1, भारत लेखक पब्लिशिंग हाउस, मद्रास, 1954, पृ. 357-58
2. मार्क्स और क्रॉसिक ऐतिहासिक दाय मिथी पुस्तक जल कालोनिज्म में कार्ल मार्क्स का लेख 'द इंग्लैंड इंडिया कंपनी : इन्स हिन्डो एण्ड रिन्डो', भारत लेखक पब्लिशिंग हाउस, मद्रास, पृ. 51
3. कमेंटी ऑन कार्लोसोस का हाता, इन्स इंडिया कंपनी के बॉर्ड ऑफ डायरेक्टर्स का प्रस्ताव, 9 फरवरी, 1813, इन्स इंडिया पब्लिशिंग हाउस, मद्रास, पृ. 28, कैपिटलिज्म इन इंडिया, वॉसिक ट्रेड्स इन इन्स टैक्सप्लेन, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, लेखक एच.ए. लेखक, पृ. 10
4. ए.आई.लीबाचो, कैपिटलिज्म इन इंडिया: वॉसिक ट्रेड्स इन इन्स टैक्सप्लेन, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ. 19



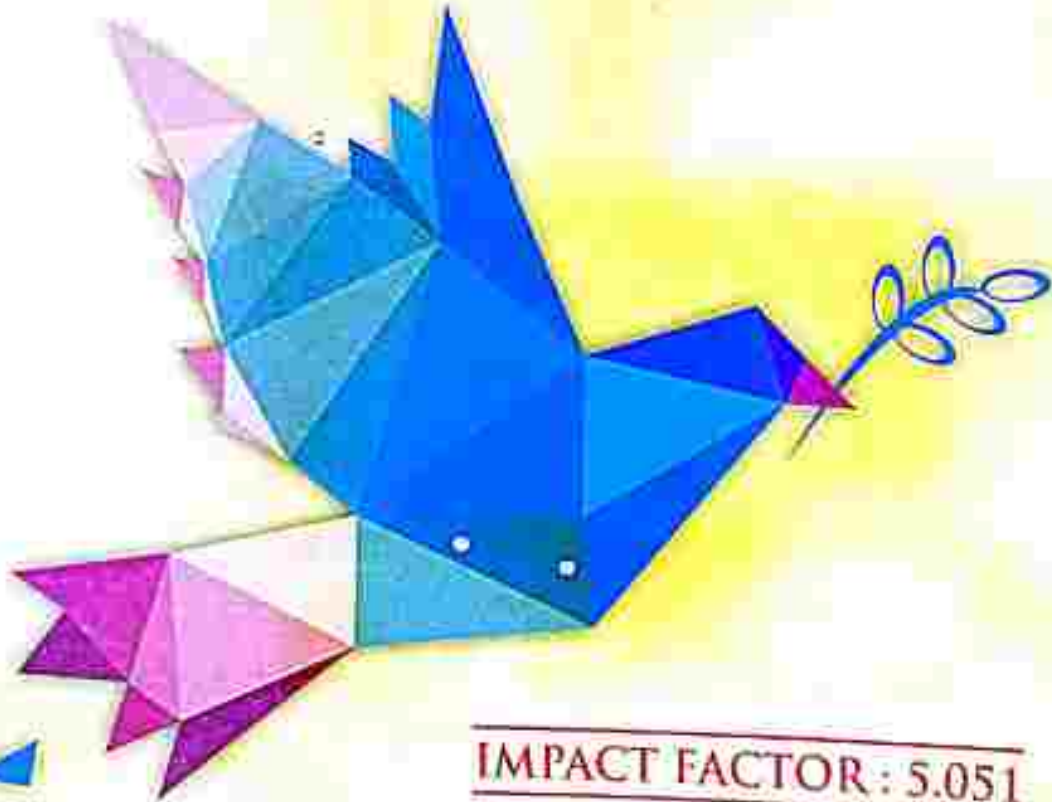
ISSN 0975-119X

UGC-CARE GROUP I LISTED

वर्ष 12 अंक 5 सितंबर-अक्टूबर 2020

# दृष्टिकोण

कला, मानविकी एवं वाणिज्य की  
मानक शोध पत्रिका



IMPACT FACTOR: 5.051

India's Leading Refereed Hindi Language Journal



# भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में श्रम संघ की भूमिका

डॉ० सीमा पटेल

शोध निदेशक, एमोसिएट प्रोजेक्ट, इतिहास विभाग, सरदार वल्लभ भाई पटेल कॉलेज, भद्रुआ, वीर भुषण सिंह विश्वविद्यालय, अरा (बिहार)

नीतू कुमारी

शोधकर्त्री

कोई आंदोलन जो ही नहीं उठा खड़ा होता। लोग जब चाहें तब कोई आंदोलन शुरू नहीं कर सकते। हर आंदोलन अपनी विशेष ऐतिहासिक स्थिति को उपलब्ध होता है। ऐतिहासिक स्थिति या ऐतिहासिक संदर्भ ही जनक आंदोलन को जन्म देता है। इसीलिए मात्र व्यक्तियों या राजनैतिक कुटियों के सार्वभूमिक आंदोलन का अध्ययन करना गलत होगा। यदि हम सही ढंग से किसी आंदोलन का मूल्यांकन करना चाहते हैं तो हमें उस ऐतिहासिक स्थिति को सही स्थिति से समझना करना होगा जिसके तहत वह आंदोलन उत्पन्न और विकसित होता है। साथ ही हमें उन शक्तियों को भी पहचानना होगा जो इनमें हिस्सा लेती हैं।

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान टूट चुकित तथा किसान आंदोलन एवं संगठनों की भूमिका उठनी सीधी-सरल नहीं है। किसानों की कोई ताल बंधन है। वास्तव में, इस विषय में अज्ञान भी कई गलत धारणाएँ प्रभावित है। यह एक आम धारणा हो गई है कि किसानों और मजदूरों का राष्ट्रीय आंदोलन से एकजुट करके देखा जाता है और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को इनकी स्वतंत्रता का अग्रदूत माना जाता है। इसका मूल कारण शायद यह आम प्रकृति है कि इन इनके नेताओं को ही जन-साधारण समझ लेते हैं और जो आंदोलन नेताओं की पहला (या बहुकाली) से शुरू होता है उसे गलती से जन आंदोलन मान लेते हैं। भले ही उसका उद्देश्य कुछ भी क्यों न रहा हो। ऐसे उदाहरणों में सच पूछा जाए तो 'जन' शब्द की धारणा को ही सूक्ष्म विप्लव कर दिया गया है। जो विप्लवियों से बचने के लिए वह बहुत जानती है कि हम भारत के राष्ट्रीय आंदोलन को सही ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में रखकर देखें और इसमें टूट चुकित तथा किसानों की क्या भूमिका रही, इसपर नए सिरे से विचार करें। इस लेख में इस प्रकार की जाँच-पड़ताल की कोशिश की जाएगी।

यहाँ हम टूट चुकितों को लेते हैं। "भारत में श्रमिक आंदोलन की शुरुआत पचास वर्ष पहले हुई, किंतु एक संगठित आंदोलन के रूप में इसका उद्भव इतिहास इन्फ्लेक्शन की समाप्ति के बाद से शुरू होता है। 1850 व 1859 के बीच का दशक 'भारत की औद्योगिक क्रांति के सपने को प्रकट करता है। इस दशक के दौरान भारत में जो तब तक एक कृषि-प्रधान देश था-पहले तो रेल आई, फिर बंगाल तथा बंबई राज्यों में अन्ना सहायका उद्योगों का स्थापना हुआ, जैम कोयला खनन, जूट और सूती कपड़ा। भारत में जो उद्योगीकरण हो रहा था उसकी पीछे औपनिवेशिक शक्ति का यह पहलू था कि वह पहले के संस्थापकों का अधिक-से-अधिक शोषण कर लेती। इसके मूल में मानव-प्रेम या लोकप्रियता की भावना नहीं थी बल्कि कि कुछ लोग सोचते हैं। बिना एक पूँजीवादी देश था और एक पूँजीवादी देश होने के साथ-साथ कि स्वाभाविक हो है, उसे अपनी अतिरिक्त मूल्य-आधारित (Surplus Value Oriented) उत्पादन-प्रक्रिया के लिए सभी बाँचे माल को बरतता था। भारत जैसे देश के संदर्भ में, जो अच्छे माल और तरह-तरह के संसाधनों को दुर्दि में बारी समने था, यह बहुत जरूरी था कि अच्छे माल की अधिकता वाले क्षेत्रों को आग में जोड़ा जाए। इसी तरह से रेलें चलाई गईं और कोयला-खनन उद्योग का विकास किया गया। अतः उद्योगीकरण की पहली लहर के साथ जो उद्योग आएँ उनको स्थापना करने देशवासियों ने नहीं की थी। वास्तव में इस तरह से भारत मूलतः एक ग्राम-आधारित तथा कृषि प्रधान समाज था, अतः अब तक इसका अपना पूँजीपति वर्ग विकसित नहीं हो पाया था। औपनिवेशिक शक्ति के उबाव से प्राचीन परंपरागत ग्राम-आधारित प्रणाली धीरे-धीरे टूट रही थी और नवीन समाजिक प्रणाली (जो आज भी जारी है) अभी अस्तित्व में नहीं आई थी। हमारे यहाँ व्यापार और साहूकार तो थे किंतु पूँजीपति नहीं। इसी प्रकार से भारत में मजदूर वर्ग जैसी कोई चीज नहीं थी (क्योंकि उद्योग नहीं थे), किंतु उद्योगीकरण की दिशा में जो औपनिवेशिक प्रयास हुए उसकी प्रक्रिया में विविध उद्योगों (जिनका हम पहले उल्लेख कर चुके हैं) का उदय हुआ और उनके साथ ही, जैसा कि स्पष्टाधिक है, औद्योगिक श्रमिक शक्ति (Working Force) भी विकसित हुई। लगभग 60 वर्षों तक उद्योगीकरण कुछ प्रमुख क्षेत्रों तक ही सीमित रहा, जैसा रेलवे, कोयला-खनन, जूट, कपड़ा इत्यादि। किंतु इस सीमित क्षेत्र में उद्योगों का जो विकास हुआ वह उल्लेखनीय था। उद्योगों के विकास के साथ-साथ श्रमिक-संख्या में भी तेजी से वृद्धि हुई किंतु भारत की कुल जनसंख्या के सामने इस संख्या का विशेष महत्त्व नहीं था। वास्तव में श्रमिक संख्या के अंतर्गत से पहले तक भारतीय जनता की कोई उल्लेखनीय प्रतिरोध मजदूर वर्ग के अंतर्गत नहीं आ पाया था। बहरहाल, संख्या की दृष्टि से मजदूर वर्ग की इस नगण्यता के बावजूद, उनका उदय ही अपने आप में एक सामाजिक क्रांति थी। पहली बार अनेक व्यक्तियों एक ही छत्र के नीचे इकट्ठे हुए। अनेक छत्र एक ही सतह को चलाने के लिए प्रवृत्त हुए। इसी प्रकार एक बात और हुई जो अब तक अनजान थी और वह यह कि लोग एक ही तरह के अनुभव-संदर्भ में सहभागी हुए। 'मेरी भूमि-मेरा बर्दाश्त' (My land-My tenant) का जमाना अब बीत रहा था। अब एकांतकी किसान का पुत्र बीत रहा था और-उत्तरे



## दुर्घटनाएँ

वस्तुतः संसार को इस तथ्य की भावना मजदूर विध्वंस नहीं था। आरम्भिक वर्षों की मजदूर- "जो स्वायत्तिक प्रतीति होती है जो बाद में एकता की दिशा में लेने में सक्षम हो गई थी। उदाहरण के लिए, 1895 को बम्बई मूट आंदोलन, जिसकी प्रेरणा से मिल लक्षण। यह संघर्ष के लिए एक हो गई थी, और उसी वर्ष आंध्रप्रदेश मिल मालिकों का (Andhra Mill Owners' Association) के खिलाफ आंदोलनकार के 8,000 मजदूरों की हड़ताल से स्पष्ट झगड़ होना है कि मजदूरों की कार्यवाही में एकता तथा कुम्भारों की संस्था का विकास हो रहा था। एच. बुचानन के अनुसार आंध्रों के सामने इस विषय में अत्यंत प्रथम स्थिति में मजदूर 1880 और 1908 के बीच आर्थिक सुविधाओं का अस्तित्व नहीं था, कई लोगों का यह कहना था कि किसी काम के लिए वे मजदूर प्रथा (जिसका को अंतरा में उल्लिखित होना कार्यवाही करने से और एक समूह के रूप में वे एकदम तबतक थे) से विभक्त (जो करने का एक जगत् कार्यवाही के उद्योग विदेश में) को जानें में "मजदूर अपने मालिकों के विरुद्ध काफी सक्रियता से", और "एकता मजदूरों को अपने वे आर्थिक जानकी को रूढ़ सुविधा नहीं थी।" और इस तथ्य से भी ही अतिव्यक्ति विचारों के तब वर्षों के अग्रिम विन्दी फर्मियस ने जो एक वर्ष के तब प्रथा के सभी तथ्यों को धोरे लिखे जाने हैं, "मजदूर स्थिति के अंतरा में, और मिल मालिकों की सुरक्षा की मित्रों उभरना को जानी मजदूरों को थी।"

उपरोक्त तथ्य में यह समझना कि प्रथा का अर्थ कि मजदूरों में बढ़ती लेखों में कार्यवाही का विकास हो रहा था। वास्तव में, मजदूरों की स्थिति का अधिक सही मूल्यांकन यह होगा कि इसकी स्थिति कार्यवाही एक प्रकार की "उत्थित भीड़ जैसी थी किन्तु यह जरूरी नहीं है कि कार्यवाही में एकता के लिए कार्यवाही करने में सक्षम थी। कार्यवाही में एकता का को लिए लोग में एकतावादी होने चाहिए। और करने की आवश्यकता नहीं को कोले में एकता का को: इसमें स्पष्ट नहीं कि स्थिति काको नहीं थी, किन्तु इसे प्रतिक्रिया स्थिति नहीं था या सकता। वास्तव में, मजदूर-विरोधों का स्पष्ट कारण था। अंतर्गत में लिए था कोई सुधार कोले निरन्तर हो नहीं थी क्योंकि उद्योगीकरण में संलग्न किसी संस्था में औद्योगिक जन-शक्ति की बढ़ती ही मजदूरों की स्थिति होती है। वास्तव में इसलिए कि यह अर्थ-शक्ति हड़ताल आदि में और उद्योगीकरण को अक्रिया को उप कर सकती है। इसलिए बुचानन (Buchanan) के अनुसार में एक सूर्य भी नहीं है जिसे स्थिति का बर्हिषा बहतर उल्लिखित का दिया जाए।

### हड़ताओं का अनुक्रम तैयार:-

जब तक मिल हड़ताओं को नहीं को रही है, उनमें उठने अनुक्रमण की प्रकृति नहीं थी। 1905 को पहले तक भारतीय मजदूर में लड़कों का एकल अस्तित्व की प्रकृति दुर्घटनाएँ नहीं होती। 1905-1906 के दौरान स्थिति बलवान गई। राष्ट्रीय आंदोलन लड़कों के मार्ग की ओर आकर्षित होना जा रहा था। आंदोलन ने बंगाल विद्रोह जैसी कार्यवाही से मध्यमवर्गीय संघर्ष जर्मिष का अन्तर्गत विरोधी बना दिया था। उदाहरण कोले नियंत्रण के नेतृत्व में सार्वजनिकता को भारतीयों के हाथ में करने में एक विषय का रहा था। भारतीय मजदूरों में भी इस उत्थित को प्रतिध्वनि हुई। बर्हिषा को कामकाज मिलों में (काम के बडे बढ़ाने के खिलाफ), लिन में, विरोध का में शुरू बंगाल राज्य रेलवे (Eastern Bengal State Railway) में और प्रस्तावकों के सम्बन्धित प्रथम में गंभीर हड़ताएँ हुई। इनका कारण किन्तु का अन्त 1908 में लिन की एक वर्ष की मजदूरों को काम के विरोध में एक दिन की सार्वजनिक जन-हड़ताल हुई। प्रथम विश्वयुद्ध शुरू होने तक लिन, पूर्वी मिलों तथा नूट उद्योगों का दूर-दूर तक विस्तार हो चुका था और उसमें आरंभ में मिलने लोग काम करते थे उसमें कई नूने लोग काम पर लग चुके थे। 1912 में भारत के अन्त 264 कार्यवाही मिलें कार्यवाही थीं जिनमें लगभग 2,60,000 कार्यवाही नियोजित थे। बंगाल में नूट उद्योग का भी विकास हुआ किन्तु 1912 तक वहाँ 60 मिलें थीं जिनमें 2,00,000 मजदूर काम करते थे। 1914 तक रेलवे में लगभग 6,00,000 लोग काम पर लगे हुए थे। एक का लिन एक बर्हिषा (मजदूर) उद्योग 1911 में स्थापित हो गया था, हालाँकि अन्तर्गत वर्षों में उसमें नियोजित मजदूरों की संख्या अधिक नहीं थी। इसलिए प्रथम विश्वयुद्ध तब को उद्योग दुर्घटनाएँ बंगाल के लिए विन्मोहा लडे के थे नूट व कामकाज उद्योग और रेलवे"। अतः प्रथम विश्वयुद्ध के बाद से उद्योग आंदोलन मजदूरों और व्यापक हड़ताल आंदोलन के प्रथम-स्वत चरणे जलें थे।

### प्रथम विश्वयुद्ध का प्रभाव:-

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद भारत में राजनीतिक उन्माद अधिक हलकों में महत्वपूर्ण परिवर्तन आए। राजनीतिक दृष्टि से सार्वजनिकता ने भारतीय दूरीकरण को काय निरन्तरता दिया था। इस दूरीकरण को का राजनीतिक संघर्ष (भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस) सफल में वे लूटे प्राप्त करने में असमर्थ का किन्तु उन्माद दुर्घ को दौरान महाकांड के बर्हिषा करने की प्रथा की थी। और भी उद्योग बात यह थी कि बर्हिषा दूरीकरणों को युद्ध के दौरान अर्थव्यवस्था के विनिर्देशक में कोले-सा हिस्सा देने के का संस्था कि अस्तित्व को उन्माद दूरीकरणों की स्थिति में लीट आई थी। वर्साय (Versailles) में विश्व देशों के इन्माद युद्ध का प्रो उद्योग हुआ था उसमें सुसलमान मुख्य थे। असंतोष को इन विभिन्न धाराओं ने मिलकर काँग्रेस और लीग के दूरीकरण का महत्वपूर्ण स्थिति को तत्काल अन्तर्गत के कार्यवाही पर आधुनिक था।

राजनीतिक क्षेत्र में बर्हिषा अन्तर्गत अपने को उल्लिखित महत्त्व पर रहा था, बर्हिषा अधिक संघों पर युद्ध से मजदूर वर्ग को सबसे ज्यादा आघात पहुँचा। युद्ध के दौरान मजदूरों की बर्हिषा दुर्घटनाएँ हो गईं, किन्तु इस महत्त्व के अनुसार मजदूरों के जीवन में घुट्टि नहीं हुई। इसके विरुद्ध निर्माता (employers) अन्तर्गत-अन्तर्गत मुद्रका बर्हिषा रहे थे। इस महत्त्व को तबत में औद्योगिक अन्तर्गत को सबसे ज्यादा महत्त्व भोगना पड़ा। मध्य वर्ग ने इस अस्तित्व और स्थिति हुए मजदूर वर्ग का बर्हिषा दूरीकरण में अपने राजनीतिक एवं आर्थिक स्वार्थों के लिए उपयोग करने की कोशिश की। इसके परिणामस्वरूप एक भारी हड़ताल आंदोलन अन्तर्गत यह विन्मोहा अपने प्रतिनिधि के दौरान भारतीय अर्थिक आंदोलन की शक्ति ही बढ़त दी। पिछले बर्हिषा देशों से अर्थिक-अन्तर्गत की जो अन्तर्गत उन्माद होती जाती जो रही थी उसे महत्त्व पर नियोजित तथा अन्तर्गत रूप में व्यक्त होने का मौका मिला। दुर्घ सुविधा आंदोलन अब एक विन्मोहा अन्तर्गत प्रथा बना जा रहा था। किन्तु यह स्थिति एक अन्य दृष्टि से भी महत्वपूर्ण थी। इसमें भारतीय दुर्घ सुविधाओं पर मध्य वर्ग के अन्तर्गत प्रभाव के सक्षम युग का सूचना किन्तु, एक ऐसा प्रथा किन्तु अर्थ तक प्रथा नहीं किया जा सका है। यह प्रथा ही अनुसार: भारतीय मजदूर वर्ग की आर्थिक दूरता का प्रतिक या क्योंकि इस महत्वपूर्ण किन्तु का जो लोग उनका नेतृत्व करने आए और उन्माद तक नेतृत्व करते रहे, उनमें से नूट का मजदूर वर्ग में बर्हिषा का प्रतिक

की था जबकि फिर दो पक्ष को अपने राजनीतिक उद्देश्यों को पूर्ति का साधन पर था। "1918 में जो हड़तालें की गयीं शुरू हुईं और लगभग तीन वर्ष तक चलीं तो उनका क्षेत्र बहुत व्यापक था और उसकी सीमाओं को रखाया नहीं जा सकता था। 1918 के अंत में पहली बड़ी हड़ताल हुई जिसमें कानपुर मिलों के एक मुकुट को बंद में पूर्ण-को-पूर्ण उद्योग को प्रभावित किया। जबकी 1919 तक सभी मिलों में लगभग 1,25,000 मजदूर हड़ताल पर थे। 1919 के अंत में पीटि एन्ड कंपनी के सिविल इंजीनियरिंग हड़ताल को प्रतिनिधित्वपूर्ण मजदूरों ने जगह-जगह हड़तालें कीं। तीसरी ही हड़तालें की यह लहर अपने चरम पर पहुंच गई। मंगल पर यद्यपि को अंतर्ध में लगभग 200 हड़तालें हुईं जिसमें लगभग 25 लाख मजदूर शामिल हुए। निम्नलिखित आँकड़ों से इस आंदोलन की शक्ति और सीमा का कुछ अंदाजा लगाया जा सकता है।

"4 जनवरी से 2 दिनों तक, ऊनी कानपुर मिल, कानपुर के 17,000 लोग हड़ताल पर। 17 दिसंबर, 1919 से 9 जनवरी, 1920 तक, नूर मिल, बलरघाट के 35,000 लोग हड़ताल पर; 31 जनवरी को ब्रिटिश इंडियन रीफिनेशन कंपनी के 10,000 लोग हड़ताल पर; 24 फरवरी से 20 अर्ब तक, एम आर एन एल मिल के 40,000 लोग हड़ताल पर; 9 मार्च को पिल ऑयर्स, धरई के 60,000 लोग हड़ताल पर; 20-26 मार्च, मिल मजदूर, मद्रास के 17,000 लोग हड़ताल पर; मिल मजदूर, आंध्रप्रदेश के 25,000 लोग हड़ताल पर।"

संदर्भ सूची

1. R.P. Das, India Today
2. Bulletin of the Department of Industries And Labour, quoted by V.B. Kamik, Indian Trade Unions (A Survey) (1960).
3. R.P. Das, India Today.
4. D.H. Buchanan, The Development of Capitalist Enterprise in India, quoted in Harold Crouch, Trade Unions And Politics in India.
5. दृष्टिकोण में 1920 में पहले बड़ी कानपुर उद्योग में शक्ति को प्रकट किया है। देखिए D. Mitra, Labour Discipline in Trade Unions.
6. Harold Crouch, Trade Unions And Politics in India.
7. R.P. Das, India Today.
8. R.K. Das, The Labour Movement in India, pp. 36-37.
9. Harold Crouch, op. cit.
10. V.B. Kamik, op. cit.

ISSN 0975-119X

UGC-CARE GROUP I LISTED

वर्ष 11 अंक 4 जुलाई-अगस्त 2019

# दृष्टिकोण

कला, मानविकी एवं वाणिज्य की मानक शोध पत्रिका

India's Leading Refereed Hindi Language Journal



IMPACT FACTOR: 5.051

## दृष्टिकोण

उपराशुनिकता और उपभोक्तावाद: मुगदूणा का वास्तविक सुख को उल्लास-डॉ० रमेश कुमार वर्णवाल	125
अर्धशतक कवियित्री गीतिका समाज का संस्कृत साहित्य में योगदान-डॉ० मीना गुप्ता	129
भूमिगत का काव्य साह 'अंधर में सड़क तक': व्यवस्था विरोध का जीवंत दस्तावेज-डॉ० मलकायत सिंह	132
पटना जिला में अनुसूचित जाति को साधारण: एक भौगोलिक मूल्यांकन-डॉ० मनोज कुमार सिन्हा	138
उच्च शिक्षा के जिलाद्वी विद्यार्थियों में सामाजिक कौशल का विकास: एक अध्ययन-श्रीमती रंजना योगी; प्रो० वंदना सोस्वामी; डॉ० सना शर्मा	145
गुरु ग्रन्थ साहब में कबीर (भक्ति आन्दोलन के सन्दर्भ में)-डॉ० कुलदीप कौर पाठवा	150
राष्ट्र साहित्य में डॉ० सिद्धनाथ कुमार का योगदान-रोशन कुमार	153
भारत में राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रम-डॉ० जया भारती	156
बिहार में मुरासिनी और जल जीवन हरिधराली: एक सम्बोधनात्मक अध्ययन-डॉ० तेलानी मीना हार्मी	159
वैदिक संस्कृति व धर्म के दुर्लभता में पुष्प शास्त्रियों का योगदान-डॉ० ईशा शर्मा	163
पारंपरिक और आधुनिक कला का स्वरूप: एक दार्शनिक विश्लेषण-प्रिया कुमारी तिलक	166
दूरस्थ शिक्षा के अत्यांत अध्ययन विद्यार्थियों का एम० एनई के प्रति आगिगत का अध्ययन-प्रियंका रावत	168
भारतीय अनुसंधान विचारकों के अग्रदूत डॉ० रामेंद्रनाथ ठाकुर (पारवात्य घनवादी कला के परिप्रेक्ष्य में)-डॉ० मंडू सिंह	174
उच्च शिक्षा के कुछ मूलभूत इमन-आकांक्षा वर्मा; डॉ० शकुन्तरा मिश्र	177
साहित्य में दलित चिंतन का स्वर-डॉ० मनोषा सिंह	179
संस्कृत में निवसती आत्माओं को 'समावेश' के संसार में बाधाएं: एक सामान्य परिप्रेक्ष्य-शिवानी	183
विश्व भाषा दिवस के विविध कार्यक्रम-डॉ० अनु शर्मा	186
रुजक बाणी सामुदायिक रेडियो का प्रयोग पर प्रभाव-हर्षवर्धन पाण्डे	189
हिंदी के विकास में बुन्देलखंडी साहित्य का योगदान-कृष्णांक शुक्ला	195
डॉ० अनीस कुमार मिश्रा को लघु कथाओं का सौंदर्य-अंजना गुप्ता; किशोर कुमार जयसवाल	198
1818 की अटिवा रंधि व बेंकनर रिफासत-भारती गोपात	205
आधुनिक चित्रकला में कोलाज चित्रण-डॉ० ईशर चन्द गुप्ता	209
प्राचीन विद्या में स्वयं सहायता समूह मॉडर्नाइजेशन: पहिला समाहितकरण की सर्वोच्च विधि-डॉ० गणेश ईशान	213
साहित्य को जन्मदायी धारा और मुक्तिधोच-डॉ० अबुजा एन गलखेडकर	216
आधुनिक धरम में बाल्योदीय मान्यता एवं श्रीराम के आदर्शों को प्रासंगिकता-डॉ० शोधर ठेगड़े	219
एन एस के उगी के काल (1924 से 1939 तक)-डॉ० सीमा पटेल; नीतू कुमारी	225
सोनीली लघु चित्रों में सांस्कृतिक प्रभाव-डॉ० पुनीता शर्मा	226
भारत में उन्नीस-सय सम्बन्ध: एक अध्ययन-डॉ० अकताम आलम	230
सामाजिक विरोध नीति में गुर्जरपेक्षता: एक अवलोकन-प्रो० (डॉ०) पूनम	233
भारत में सामाजिक कल्याण कार्यक्रम: बदलती परिदृश्य, उभरती समस्याएं और लक्षित समूह-अभ्युज मिश्र	238
विद्या के भाव में उगीत चेतना का सामाजिक अध्ययन-डॉ० शशीका शर्मा	241
हिंदी के विकास में पत्र-पत्रिकाओं का योगदान-डॉ० ज्ञानोबा रावरी	244
वैयक्तिकता के दौर में परम्परागत लोक कलाओं का बदलता स्वरूप: एक अध्ययन-डॉ० शशि शर्मा	248
बिहार आदिम नृत्यों का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव-राजेश कुमार	



# श्रम संघ के प्रगति का काल (1924 से 1939 तक)

डॉ० सीमा पटेल

प्रोफेसर, एग्रीगेट प्रॉफेसर, इतिहास विभाग, सरदार वल्लभ भाई पटेल कॉलेज, भयुआ वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)

नीतू कुमारी

प्रोफेसर, इतिहास विभाग, सरदार वल्लभ भाई पटेल कॉलेज, भयुआ वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)

राज्य मजदूर वर्ग के आंदोलन में सन् 1926 से 1929 समय बहुत महत्वपूर्ण है।

सन् 1924 के राष्ट्रीय और अमेरिकी जीवन में एक प्रशासकीय तय्यार-तुय्यार आसन था। भारतीय कम्युनिस्ट आंदोलन को मजदूर नींव रखता और बढ़ती चलाकर बढ़ा था। इसलिए इस दौर के मजदूर आंदोलन पर कम्युनिस्ट विचार का काफी दृढ़ प्रभाव दिखाई पड़ता है। इन वर्षों के दौरान कर्ग-कर्ग आंदोलन को जहाँ सरकार ने इस संघर्ष पर 'कम्युनिस्ट महर्षय' का आरोप लगाने का प्रयास किया लेकिन कम्युनिस्टों के नेतृत्व में हुई बहुत सी हड़तों, मजदूरों को मजदूरों का दमन करने और उनके अंदर सुलाग रहे असंतोष को तीखी अभिव्यक्ति थी। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मजदूरों के आंदोलनों को सन् 1926 के साथ-साथ संघर्ष के दौरान मजदूर वर्ग का वैश्वीय दृष्टिकोण भी विकसित हुआ।

सन् 1929 में सरकार ने 'कम्युनिस्टों से खतरा' का झूठा खड़ा करके मजदूर वर्ग के बहुतांश संघर्षों पर क्रूर दमन कर उनको दबाने के उपाय किए। सरकार ने उनको खिलाफ कानून को बहकाने की भी कार्रवाई अचलवाई। लेकिन से बढ़ रहे मजदूर वर्ग आंदोलन को राज्य को नियंत्रण में रखने के लिए सरकार ने 'इंडियन ट्रेड यूनियन ऐक्ट, 1926 (भारतीय ट्रेड यूनियन अधिनियम 1926) लागू किया तो दूसरी तरफ 'ट्रेड डिस्मूट ऐक्ट' (अंतर्राष्ट्रीय ट्रेड डिस्मूट) और 'एम्प्लॉयमेंट ऐक्ट' (जन सुरक्षा अधिनियम) के जरिए अपने दमनकारी दारों को अंजाम दिया। इन कानूनों के मुन्नीयता अंतर्गत मजदूर वर्ग और उनका के बहुतांश संघर्षों को समाप्त करने के लिए सरकार ने बड़ी सावधानी से कृपण बुद्ध और 'कम्युनिस्ट खतरा' को समाप्त कर, मजदूरों को मुक्त करने के लिए 'सेंट महर्षय कंस' शुरू किया।

## वैश्वीय संघर्ष में नया विश्वास

जिन वर्षों से संघर्ष न करने को जो नीति अपनाई जा रही थी उसके परिणामस्वरूप साम्राज्यवाद विरोधी शक्तियों में विभक्त विचार और जनक नीति अपना हो गई। इसके अतिरिक्त साम्राज्यिक विंसा के अंकुरण से इन शक्तियों का और भी पतन हुआ। साम्राज्यवादियों ने राष्ट्रीय आंदोलन को न केवल सन् 1924 से निरस्त होना ही और बहुत शीघ्र अपनी वैश्वीय और प्रशासनिक नीतियों को पुनर्गठित किया। अपनी दमनकारी नीतियों के अंतर्गत जहाँ से सन् 1924 से शुरू किया।

सन् 1921 का युद्ध विंग (करेंसी विंग) भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए कसब ड्रटका था। हिल्टन यंग करेसी कमीशन 1925-26 ने भारत के अर्थव्यवस्था को विचारित की और एक कथना की बोलना। रिपोर्टिंग 6 पैसे के बराबर निर्धारित की। इंडियन स्टेशन प्रोटेक्शन बिल 1924 के संशोधन के द्वारा 1927 के कानून ने इंडिया स्टेशन के लिए लागूकारी दरें तय कीं। इस प्रकार सरकार की राजकोषीय नीति का इस प्रकार परिष्कार किया गया जो देश के उत्तर के उत्तर में शासक और औद्योगिकता के लिए स्वीकृत शुल्क व्यवस्था को बदल दिया गया और फिर साम्राज्यवाद को प्रथमिकता जताया गया।

सन् 1927 के अर्थव्यवस्था के साम्राज्यिक स्थापित कर नवंबर 1927 में ब्रिटिश मंत्रिमंडल ने संसद में सामान कमीशन को नियुक्त की घोषणा की। इस कमीशन को संसदीय लोकतंत्र के लिए भारतीयों की योग्यता को जाँच और कुछ प्रशासनिक सुधारों को सिफारिश करने की शक्ति प्रदान की। सन् 1927 के नेतृत्व वाले इस कमीशन में कोई भी भारतीय प्रतिनिधि नहीं था।

साम्राज्यवादियों की आशा के विपरीत, इस घोषणा ने राष्ट्रीय आंदोलन को नई प्रति प्रदान कर दी और साम्राज्यवाद विरोधी शक्तियों को पुनः एकजुट करने में मदद की। कुछ समय के लिए भारतीय दृष्टिकोण वर्ग ने साम्राज्यवादियों के साथ किसी भी प्रकार के सहयोग को आशा छोड़ दी और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मजदूरों को साथ में लाने के लिए साध्य हुआ। लेकिन मजदूर वर्ग और जनता में विकसित हुई गई भेदभाव और साम्राज्यवादियों को साथ-साथ बाली

## दुष्टिकोण

सर्वकों के खिलाफ एक स्वतंत्र राजनीतिक संगठन स्थापित करने की तैयारी में भारतीय दूरीप्राप्तियों के लिए किसी कुछ प्रयास कठिन थी। जल्द से जल्द अंग्रेजों और अल्पों के नए धर्म ने इच्छित दूरीप्राप्ति प्रदान में लक्ष्यार प्राप्त कर दी और बाद में राजनीतिक आंदोलन में इस दूरीप्राप्ति ने काफी दूरीप्राप्ति प्रदान की।

कॉमिन्स ने कॉमिन्स (संगठन) को खोजने का दिनांक और इसकी कार्यवाही का प्रतिष्ठापन करने का निर्णय लिया। सन् 1927 के मद्रास अधिवेशन में प्रस्ताव स्वीकार का कॉमिन्स ने मद्रास के पहले भारतीयों की घोषणा का प्रस्ताव करने वाले कॉमिन्स (आन्दोलन) का दिनांक करने से ठीक कर का दिनांक दिनांक को प्रस्तावों का प्रतिनिधि को नहीं था। कॉमिन्स ने इस प्रस्ताव को राष्ट्रीय अंग्रेजों के खिलाफ आंदोलन और मुस्लिम लीग ने भी कॉमिन्स (आन्दोलन) का प्रतिष्ठापन किया।

पूरे देश पर में मद्रास कॉमिन्स के खिलाफ आंदोलन हुए और 3 जनवरी 1928 को जब सादर कॉमिन्स ने मुंबई में भारतीयों का दिनांक, 'संघर्ष का दिनांक' के दिनांक के साथ इसकी प्रस्ताव ने आंदोलन पूर्ण प्रदर्शन किया।

जल्द से जल्द किसी राजनीतिक कार्यक्रम पर आधारित नहीं थी। इसका इसका साधारणतया विरोधी नारे में जनता को एकजुट कर दिया। इस राष्ट्रीय राजनीतिक संगठन को लक्ष्य में था। मद्रास वर्ग को भारतीयों एक साधारणतया विभाजन था। स्वतंत्र राजनीतिक शक्ति के रूप में मद्रास वर्ग के अर्थ में मद्रास के राष्ट्रीय संगठन में एक नई गठितोत्पत्ति का प्रदान किया। अभी तक मद्रास वर्ग राजनीतिक संगठन में नेतृत्वकारी भूमिका में जाने योग्य नहीं था। लेकिन राष्ट्रीय आंदोलन में इनकी साहायिक कार्यवाही, अनेक आर्थिक संगठनों का संघर्ष, और मुद्रास्तर ट्रेड यूनियनों ने मद्रास वर्ग को अपने राष्ट्रीय नेतृत्व विकसित करने का अवसर दिया। मद्रास वर्ग को इस राजनीतिक चरित्रकारी ने लक्ष्यकार को मद्रास वर्ग का दर्शन और उसे भारत की एक राजनीतिक शक्ति के रूप में स्थापित किया।

इन प्रतिकारों और कार्यवाही इच्छितों की प्रस्तावकारी का प्रस्ताव कठिन पर भी था। कॉमिन्स के मद्रास अधिवेशन में जवाहरलाल नेहरू द्वारा प्रस्तावित और सुधारकों के साथ के अल्पों को इस सम्बन्धों की 'राष्ट्रीय आंदोलन का लक्ष्य पूर्ण स्वतंत्रता' का प्रस्ताव अल्पव्यक्ति रूप से निर्दिष्ट स्वीकार हो गया। मद्रास में यह प्रस्ताव राष्ट्रीय की अनुपस्थिति में प्रतिष्ठित हुआ। विचारों पर में इसका खंडन किया और 'जल्दबाजी में स्वीकृत और विचारहीन में प्रतिष्ठित' प्रस्ताव बना। 'इन अधिवेशन को कॉमिन्स ने, भारत ही में स्थापित अल्पव्यक्ति लीग अल्पव्यक्ति (संघर्षकार विरोधी अल्पव्यक्ति लीग) में संघर्ष करने का भी निर्णय लिया। इस अधिवेशन ने जवाहरलाल नेहरू और सुधारकों के साथ दिनांक को कठिन का नकारात्मक प्रदान। यह दिनांक सुधारकों और अल्पों के दिनांक था।

1928 की प्रस्तावों ने इसकी प्रतिष्ठित की कि कॉमिन्स में कार्यवाही की विचार प्रस्ताव से न्याय दिखावटी थी। मद्रास वर्ग द्वारा मुद्रास्तर बढ़ाव में जनता द्वारा विरोध, मद्रास कॉमिन्स के विचार प्रस्ताव के प्रदर्शन, मुंबई और प्रान्तों के मुद्रास्तर आंदोलनों ने कॉमिन्स के मुंबई दिनांकों के अल्पों का दिनांक इच्छित पूर्ण स्थापना की थी। को प्रतिष्ठापन कर कठिन द्वारा सर्वोच्च संगठन और जिनके अल्पव्यक्ति और मुस्लिम लीग को केन्द्रक लक्ष्य में जनता 1928 को हुई इसने सर्वोच्च लक्ष्य के नेतृत्व में एक समिति का प्रदान किया गया। इस समिति को 'एक अल्पव्यक्ति सरकार बनाने के लिए नवीन कार्यवाही दिनांक की निर्देशों की थी।

अनुभवों कॉमिन्स, संघर्षकारों और कार्यवाही के प्रतिकारकारियों से सम्बन्धों के बाद करने पर कार्यवाही, मुंबई की पूर्ण स्थापना की थी। को पूर्णतः नकार नहीं किया। इसलिए बड़ी कार्यवाही से दिनांक में पूर्ण स्थापना को 'संघर्षकार के अल्पों स्वतंत्र राज्य' के रूप में स्थापित किया गया।

इस दिनांक को सर्वोच्च और अल्पव्यक्ति निर्देशों के प्रदान शक्ति ही सर्वोच्च कार्यवाही का सुद ही प्रदान हो गया। सर्वोच्च कार्यवाही की दिनांक पर मद्रास करने के लिए दिनांक 1928 को कोलकाता में हुई बैठक में सिद्ध, मुस्लिम और सिद्ध सर्वोच्च कार्यवाही दिनांकों को बीच खुलकर संघर्ष हुआ। दिनांक के नेतृत्व में मुस्लिम सर्वोच्च कार्यवाही और सिद्ध सर्वोच्च कार्यवाही दिनांकों के बीच का प्रतिष्ठापन किया।

संघर्षकार अल्पव्यक्ति हो गया था। 'संघर्षकार के अल्पों स्वतंत्र राज्य (अल्पव्यक्ति स्टेट्स) की बात पर दिनांक विरोध हुआ। कॉमिन्स के अल्पों के अल्पव्यक्ति ने मद्रास अधिवेशन में स्वीकृत पूर्ण स्वतंत्रता' की नारे को लागू करने पर दृष्टि बनाया। इस अवसर पर यह नारे को राजनीतिक शक्ति में गौरीप्राप्ति कर कठिन को गौरीप्राप्ति और आर्थिक प्रस्ताव से बनाने के लिए प्रस्ताव आया। राजनीति का दिनांक के शब्दों में, 'दूरीप्राप्तियों को मद्रास आंदोलन (सर्वोच्च लीग) इसे सर्वोच्च कार्यवाही की प्रदान थी कर सकते थे। गौरीप्राप्ति पर दिनांक थी। गौरीप्राप्ति अल्पव्यक्ति दिनांकों की दिनांक पर मद्रास ठीक ठीक एक सर्वोच्च कार्यवाही तक से जा सकते थे और दूसरी तरफ प्रदान को अल्पों में बना सकते थे।

गौरीप्राप्ति ने दिनांक 1928 में कठिन के कोलकाता सम्मेलन में कार्यवाही की और उसकी दिनांक को प्रतिष्ठित करवाने के लिए अल्पों की प्रदान किया था। दिनांक अल्पव्यक्ति से इस अवसर को साथ प्रतिष्ठित हुई कि 31 दिनांक 1928 तक सरकार द्वारा यह दिनांक स्वीकार न की गई तो कठिन अपने अल्पव्यक्ति अल्पव्यक्ति अल्पव्यक्ति के दिनांक को लागू करेगी और इस कर प्रदान से कर न अल्प करने का अवसर किया जाएगा।

इस प्रकार दिनांक पूर्ण एक नारे प्रदान कर दिया और निर्णय यह किया जब प्रस्ताव का अल्पव्यक्ति अल्पव्यक्ति पूर्ण प्रदान पर था। एक वर्ष बाद दिनांक 1929 में कठिन को केन्द्रक लक्ष्य में हुई। दिनांक प्रतिष्ठित में जब प्रस्ताव में अल्पव्यक्ति अल्पव्यक्ति प्रदान था। लक्ष्य अधिवेशन में कठिन के अल्पों का रूप में पूर्ण स्थापना की घोषणा की और कठिन कार्यवाही को भारतीयों अल्पव्यक्ति कार्यक्रम को शुरुआत करने और अल्पों शक्ति प्रदान कर न अल्प करने का कार्यक्रम भी लागू करने को प्रदान।

गौरीप्राप्ति ने शक्ति लक्ष्यकार को प्रदान और प्रदान प्रतिष्ठित को आत्मसात किया। इसलिए दिनांक का अल्पव्यक्ति बनने से प्रदान कर दिया और दिनांक सर्वोच्च कार्यवाही पर के लिए जवाहरलाल नेहरू को सर्वोच्च कर दिया।



## दृष्टिकोण

साम्प्रदायिक मजदूर संगठन, पंजीकृत और गैर पंजीकृत ट्रेड यूनियनों के बीच विभेदीकरण और खास तौर पर गैर पंजीकृत यूनियनों को समुदाय गैर कायूटी कला देने के सख्त खिलाफ थे। उनको थापना थी कि भारतीय ट्रेड यूनियन आंदोलन को आर्थिक अंधश्रद्धा में गैर पंजीकृत यूनियनों का होने स्वाभाविक था और इसलिए ऐसी यूनियनों को भी कायूटी सुरक्षा प्रदान करना समझा भी जिम्मेदार है। श्री मजदूर नेताजी (एन.एच.जी) और लाला लालजय राम) ने संवैधानिक अर्थव्यवस्था में इसका प्रचलनापूर्वक समाधान किया।

राज्य कमीशन आन लेबर इन इंडिया 1931 ने भी अपनी रिपोर्ट में सरकार द्वारा ट्रेड यूनियन प्रतिबंधों को 'सही' और 'विकल्प पूर्ण' मान्यता देने के लिए, इस घोषित नीति को सही ठहराया और आगे कहा कि ट्रेड यूनियन आंदोलन के हित में ऐसा ऐक्ट बहुत जरूरी होना चाहिए था।

भारत में जब ट्रेड यूनियनों का गठन प्रारंभ हुआ और देश के विभिन्न भागों में आंदोलन फूट पड़ा तब सरकार और दूरिषण से घिरी सामान्यव्यवस्था में ट्रेड यूनियन आंदोलन को अर्थव्यवस्था की सीमाओं में बाधकर रखने और इसे राजनीतिक स्वतंत्रता प्रदान करने से रोकने के लिए चारों तरफ से पैगु डारने और शिकंशा करने की आवश्यकता अचानक महसूस हुई। आर्थिक सामान्यव्यवस्था इस परिदृश्य में थी कि मजदूर वर्ग राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन में किसी भी प्रकार शामिल न हो। इसी उद्देश्य को पूर्ण के लिए सरकार ने ट्रेड यूनियन ऐक्ट में अनेक प्रतिबंधों को साथ, खास तौर पर यूनियन बोर्ड की राजनीतिक इन्तरेल से रोकने के लिए नियम बनाए इन प्रावधानों के लागू करने से भारतीय ट्रेड यूनियन आंदोलन के स्वतंत्र विकास में सामान्यव्यवस्था का पैगु इस्तेमाल दिखाई दिया।

### संदर्भ सूची:

1. आर.पी. दत्त, इंडिया टुडे, पृ. 283
2. एच. लेबर कमीशन, फरवरी 1922, पृ. 40-44
3. रिपोर्ट ऑफ रि (1922) कमीशन आन लेबर इन इंडिया, 1931, पृ. 158
4. गहरी, पृ. 303
5. आर.के. मुन्शी, द इंडियन लैबरिंग क्लेस, पृ. 144-45

ISSN 0972-1894

VOLUME-78

NUMBER-85

Oct-Dece., 2018

*The* **Hindustan Review**



*An International Research Journal of BCARDS*

*A Quarterly Refereed Research Journal of Buddhist  
Centre for Action Research and Development Studies*

# CONTENTS

Sl. No.	ARTICLES FROM THE EDITOR	AUTHORS	PAGE No.
17.	बंगाल से बिहार विभाजन का कारण	डॉ० विरेन्द्र प्रसाद सिंह अनु कुमारी	97-99
18.	द्वितीय विश्वयुद्ध और भारतीय राष्ट्रियता का विकास	डॉ० हरि कृष्ण सिंह छोटन कुमार	100-105
19.	1857 के स्वाधीनता संग्राम में झलकारी बाई का योगदान	डॉ० विरेन्द्र प्रसाद सिंह दुर्गेश कुमार सिंह	106-109
20.	सधुयुगीन हिन्दु समाज में नारी की सामाजिक स्थिति	डॉ० ब्रज किशोर सिंह किरण कुमारी	110-113
21.	भारत छोड़ो आन्दोलन में बिहार के युवाओं की भूमिका	डॉ० सीमा पटेल ✓ लव कुमार	114-116
22.	दलित समस्या और महात्मा फुले	डॉ० विजय कुमार सिंह नीतू	117-120
23.	भारत में ब्रिटिश शिक्षा का विकास	डॉ० राजीव कुमार प्रीति गुणन	121-126
24.	बिहार की राजनीति में अनुसूचित जाति की महिलाओं की भूमिका	डॉ० रामलखन सिंह सुमन कुमारी पाण्डेय	129-133
25.	भारतीय पुनर्जागरण और नारी मुक्ति संघर्ष	डॉ० टीरा प्रसाद सिंह स्वास्ति कुमारी	134-140
26.	भारतीय मुसलमानों में राष्ट्रीय जागरण	डॉ० विरेन्द्र प्रसाद सिंह विनोद कुमार	141-146
27.	रेवास का जीवन वृत्त और उनकी शिक्षा	डॉ० सुशीला सिंह महेश कुमार	147-152
28.	भारत में पुलिस प्रशासन का इतिहास	डॉ० उमेश कुमार धर्मराज मिश्रा	153-157
29.	Origins of Gurushishya Parampasra In Ancient India	Hira Singh	158-161
30.	حاجتگاه شاه اردانی: ایک تحارف	محمد نسیم البدرین و نسیم حسینی	162-168



## भारत छोड़ो आन्दोलन में बिहार के युवाओं की भूमिका

डॉ० सीमा पटेल

एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग  
एम०वी०भी०पी० कॉलेज, भभुआ  
वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

लव कुमार

शोध छात्र  
इतिहास विभाग,  
वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

भारत के स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान महान क्रांति के दिनों में बिहार ने दृढ़ संकल्प व अदम्य उत्साह के साथ-साथ अपने शौर्य का परिचय दिया। गोंधीजी द्वारा सत्याग्रह का चंधारण में सफल प्रयोग के बाद सभी आंदोलनों में बिहार के युवाओं ने समुचित योगदान दिया। किन्तु जिस आंदोलन में बिहार के युवाओं ने अपना सर्वस्व न्योछाकर कर दिया वह था अगस्त 1942 का आन्दोलन।

द्वितीय विश्वयुद्ध की प्रगति और उससे उत्पन्न गंभीर परिस्थिति के मद्देनजर मार्च 1942 में ब्रिटिश प्रधानमंत्री चर्चिल ने बुद्धोपरांत भारत को औपनिवेशिक स्वराज्य प्रदान करने की घोषणा की। इस व्यवस्था की रूपरेखा प्रस्तुत करने हेतु 22 मार्च, 1942 को स्टेटफोर्ड क्लिफ भारत आये। परन्तु उनके प्रस्ताव राष्ट्रवादियों के लिए अपर्याप्त एवं असंतोषजनक थे। अतः अगस्त 1942 में कांग्रेस ने 'भारत छोड़ो आंदोलन' का आह्वान किया।

9 अगस्त 1942 को कांग्रेस के सभी महत्वपूर्ण नेता गिरफ्तार कर लिए गये। कांग्रेस को अवैध घोषित कर दिया गया। इसी दिन राजेन्द्र प्रसाद, फूलन प्रसाद वर्मा, मधुरा प्रसाद को गिरफ्तार कर लिया गया। 10 अगस्त को श्रीकृष्ण सिंह 11 अगस्त को जनुग्रह सिंह गिरफ्तार किये गये। इन नेताओं की गिरफ्तारी के साथ ही आंदोलन अनियंत्रित हो गया तथा इसने संपूर्ण बिहार को अपने आगोश में ले लिया।

11 अगस्त को पटना में एक लोमहर्षक घटना घटी। इस दिन छात्रों के एक जुलूस ने सचिवालय भवन के सामने विधायिका की इमारत पर राष्ट्रीय झण्डा लहराने की कोशिश के क्रम में पुलिसिया बर्बरता के शिकार बने और शहादत दी। ये शहीद थे-उमाकांत सिंह, रामानंद सिंह, सतीश प्रसाद झा, देवीपद चौधरी, राजेन्द्र सिंह, रामगोविन्द सिंह और जगपति कुमार। 12 अगस्त को इस गोलीकांड के विरोध में पटना में भूयं हड़ताल रही। उसी दिन शाम में कांग्रेस मैदान में आयोजित सभा में जगतनारायण लाल की अध्यक्षता में एक प्रस्ताव पारित हुआ कि संधार सुविधाओं को ठप्प कर दिया जाए। फलतः पूरे बिहार में रेल पटरियों उखाड़ी गई, तार व टेलीफोन की लाइनें फाट दी गईं, डाकघर-रेलवे स्टेशनों, धानों अन्य

सरकारी इमारतों को जलाया गया और पुलिस घर भी आक्रमण किये गये। आन्दोलन का व्यापक प्रसार बिहार के अन्य भागों में भी हुआ।

सीवान घाने पर राष्ट्रीय झण्डा लहराने की कोशिश में फूलेंग प्रसाद श्रीवास्तव पुलिस की गोली के शिकार बने। सारण में जगलाल चौधरी ने पुलिस घाने को जला दिया। सिधाराम सिंह के नेतृत्व में उत्तरी भागलपुर में राष्ट्रीय सरकार की स्थापना की गई। गया के कुर्या घाने पर झण्डा लहराने के क्रम में ध्रुव कुमार ने शहादत दी। झुमरौंघ में ऐसे ही प्रयास में कपिल मुनि ने शहादत दी। दरभंगा में कुलानंद वैदिक और दीघवारा में कर्पूरी ठाकुर ने संचार व्यवस्था को ठप्प करने का कार्य किया।

सारण जिला के रघुनाथपुर, सीवान, परसा, मांझी, एकमा, दीघवारा, दरोली, तैकुठपुर आदि में ब्रिटिश प्रशासन घराशाही हो गई एवं वहाँ स्थानीय लोगों ने स्वतंत्र मण्डल नाम से अपनी प्रशासनिक व्यवस्था लागू कर दी। हाजीपुर, मुजफ्फरपुर, सीतामढ़ी और दरभंगा के क्षेत्रों में ऐसे कई स्थानों पर क्रांतिकारी सरकारें संगठित कर ली गईं। गाँवों में पंचायतों व रक्षा दलों की स्थापना की जाने लगी और राष्ट्रवादियों ने वस्तुतः सरकार की स्थापना कर ली।

आन्दोलन में तीव्रता आने के उद्देश्य से जयप्रकाश नारायण ने नेपाल में 'आजाद दस्ता' का गठन किया। वे 9 नवम्बर 1942 को हजारीबाग जेल से रामानंद मिश्र, योगेन्द्र शुक्ल, सुरज नारायण सिंह, शालिग्राम सिंह के साथ भागकर नेपाल चले गये। वही से 'आजाद दस्ता' द्वारा युवकों को तोड़-फोड़ की कार्यवाही के लिए प्रशिक्षण देने का कार्य उन्होंने किया। आजाद दस्ता से प्रभावित होकर बिहार में भागलपुर एवं पूर्णिया में भी इसी तरह का संगठन बनाया गया। पहाड़ पर रेडियो स्टेशन बनाने का निर्णय हुआ एवं राममनोहर लोहिया को रेडियो एवं प्रचार विभाग का अध्यक्ष बनाया गया। एक बिहार प्रान्तीय आजाद परिषद् का गठन किया गया जिसका संयोजक सुरज नारायण सिंह को बनाया गया। कोसी नदी के किनारे 'बकरो का टापू' नामक स्थान से आजाद दस्ता का संचालन किया जाता था। 1943 के अंत तक आजाद दस्ता सक्रिय रहा। परन्तु भारत सरकार के दबाव में नेपाल सरकार द्वारा मई 1943ई० जय प्रकाश नारायण एवं राम मनोहर लोहिया समेत कई प्रमुख नेताओं की गिरफ्तारी के कारण यह प्रवास शनै-शनै शिथिल पड़ गया।

भारत छोड़ो आन्दोलन के दरम्यान बिहार की कई वीरगन्याओं ने अपनी जान हथेली पर रखकर संपूर्ण महिला समाज को सक्रिय भागीदारी हेतु उत्प्रेरित किया। 9 अगस्त को महिलाओं का विराट जुलूस पटना से निकाला गया, जिसका नेतृत्व डॉ० राजेन्द्र प्रसाद की बहन श्रीमती भगवती देवी कर रही थीं। गोविन्दपुर के श्री नरसिंह गोप की पत्नी जिरियाबती देवी ने अंग्रेज सिपाही को गोली मार दी। छपरा में शांति देवी ने एक विशाल जनसभा की अध्यक्षता की। दिघवारा प्रखण्ड पर तिरंगा फहराने के जुर्म में दो



सभी बहनों शरदा एवं सरस्वती को 14 एवं 11 वर्ष की सजा दी गई। गया जिले की प्यारी देवी को कैम्प जेल भेज दिया गया जहाँ उनकी मौत हो गई। वैशाली में सुनीति देवी एवं राचिका देवी ने पुरुष वेश में माईकिल यात्रा द्वारा जन जागरण पैदा किया। सितम्बर 1942 में चौधम घाने के सहियार गाँव में पुलिस की गोली से कई महिलाएँ मारी गईं।

आन्दोलन के दौरान पुलिस क्लब में भी प्रतिक्रिया हुई। श्री रामानंद तिवारी के नेतृत्व में पुलिस संघ के सत्याग्रह में 500 पुलिसकर्मियों ने गिरफ्तारी की तथा पुलिसिया जुल्म के विरोध में उपवास रखा। छात्रों के संगठित प्रयास द्वारा कुछ रेलगाड़ियों पर कब्जा कर लिया गया और इसे एक स्थान से दूसरे स्थान पर चलाकर आंदोलन का प्रचार किया गया। इस ट्रेन को 'स्वराज ट्रेन' नाम दिया गया।

भारत छोड़ो आन्दोलन में बिहार के युवाओं का महत्ती योगदान रहा। यह इस तथ्य से प्रमाणित होता है कि बिहार में 15 हजार से अधिक लोग बंदी बनाये गये। 8783 व्यक्ति को सजा हुई और 134 व्यक्ति मारे गये। इस प्रकार स्वतंत्रता से पूर्व भारतीय राजनीति में युवाओं की भागीदारी उच्च स्तर पर पहुँच चुकी थी। स्वातंत्र्योत्तर भारत में भी यह प्रवृत्ति जारी रही। 1950 के दशक तथा उसके पश्चात् भी युवाओं ने महत्त्वपूर्ण मुद्दों से जुड़कर राजनीति में सक्रिय भागीदारी निभाई।

#### संदर्भ ग्रंथ-सूची :-

1. के०के० दत्त: बिहार में स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास, पटना।
2. बलदेव नारायण: अगस्त क्रांति, पटना।
3. इम्तिआज अहमद: बिहार का परिचय, पटना, 2008।
4. विवेकानंद गुप्त: द नाइनटीम फोर्टी टू दि रिलेक्विन विद स्पेशल रेफरेंस टू सिरहुत, पी०एच०डी० वीसिस, पटना विश्वविद्यालय।
5. कुमार अमरेन्द्र: स्वतंत्रता आंदोलन में बिहार की महिलाओं का योगदान, पटना, 1958।
6. शिवपूजन सहाय: बिहार की महिलाएँ, पटना।



ISSN 0972-1894

Jan-Mar, 2018

VOLUME-75

NUMBER-83

The

# Hindustan Review



**An International Research Journal of BCARDS**

*A Quarterly Referred Research Journal of Buddhist  
Centre for Action Research and Development Studies*

UGC Approved Journal No - 62908; Social Science : Arts and Humanities, Serial No- 278

## CONTENTS

Sl. No.	ARTICLES FROM THE EDITOR	AUTHORS	PAGE No.
29.	आरक्षण और सामाजिक न्याय	डॉ० बेचू प्रसाद अंजय कुमार रेड्डी	184-188
30.	सामाजिक न्याय, मानवाधिकार और पुलिस	डॉ० उमेश कुमार परमराज मिश्रा	189-198
31.	भारत छोड़ो आन्दोलन में युवाओं की भूमिका: बिहार के विशेष संदर्भ में	डॉ० सीमा पटेल लय कुमार	197-200
32.	ट्रेड यूनियन के अन्तर्गत भारतीय शिक्षा	डॉ० राजीव कुमार प्रीति सुगन	201-206
33.	बिहार की अनुसूचित जाति की महिलाओं की राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति का अध्ययन	डॉ० रामलखन सिंह सुगन कुमारी पाण्डेय	207-211
34.	आरक्षण और सामाजिक न्याय	डॉ० विरेन्द्र प्रसाद सिंह निगोद कुमार	212-218



## भारत छोड़ो आन्दोलन में युवाओं की भूमिका: बिहार के विशेष संदर्भ में

डॉ० सीमा पटेल

एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग,

एम०वी०भी०पी० कॉलेज, भभुआ

वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

लय कुमार

इतिहास विभाग,

वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

भारत छोड़ो आन्दोलन जिसे अगस्त क्रांति भी कहा जाता है भारतीय जनता की धीरता और देशप्रेम की अद्वितीय मिसाल है। 1942 के क्रिडा मिशन की विफलता एवं ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत के इच्छा के विरुद्ध उसे विश्व युद्ध में साझेदारी बरकरार रखने एवं किसी सामानजनक संगठनों के लिए तैयार न होने से यह आन्दोलन अद्य संभावनी हो गया। इसके साथ-साथ बढ़ती कीमतों एवं जरूरी वस्तुओं के अभाव ने भी जन साधारण के मन में असंतोष भर दिया।

कांग्रेस के कुछ लोग विश्व युद्ध की एक मौका मान रहे थे जो यह चाहते थे कि जिस तरह से प्रथम विश्व युद्ध में भारत द्वारा ब्रिटेन का समर्थन किया गया था, किन्तु उसके बाद भारतीयों को कुछ फायदा नहीं हुआ था। अतः इस मौके में एक बड़ा आन्दोलन छड़ा कर अंग्रेजों को सम्झौते करने पर मजबूर किया जाए। लेकिन नेहरू एवं गांधीजी जैसे लोग भी फासिस्ट विरोधी युद्ध को कमजोर नहीं करना चाहते थे। किन्तु बाद में इस निष्कर्ष पर पहुँच गया कि अधिक चुप रहने से यह स्वीकार कर लेना होगा कि अंग्रेजों को भारतीयों का भाग्य तय करने का अधिकार है। अतः 8 अगस्त को संबई में हुई बैठक में कांग्रेस ने भारत छोड़ो को प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया एवं गांधीजी के नेतृत्व में अहिंसक जनसंघर्ष चलाने का फैसला लिया गया। वहीं पर जनप्रतिनिधियों को संबोधित करते हुए गांधीजी ने "करो या मरो" का नारा दिया। 9 अगस्त की सुबह 'आपरेशन जीरो आवर' के तहत कांग्रेस के सभी महत्वपूर्ण नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया।

भारत छोड़ो आंदोलन को तीन चरण में बांटा जा सकता है। पहला चरण जो भारी और हिंसक था जिसे शीघ्र ही कूचल दिया गया था। इसमें हड़तालें एवं अधिकांश शहरों में सेना और पुलिस के साथ अड़भे सम्भलित थीं। दूसरे चरण में ग्रामीण इलाकों में एवं जुझारू विचारियों का योगदान महत्वपूर्ण रहा। इस चरण में देश के कई स्थानों पर राष्ट्रीय सरकारों की स्थापना हुई, जिनमें तामलुक, सतारा एवं

तलचर की राष्ट्रीय सरकारें प्रमुख थीं। अगले चरण में यह आंदोलन अमानवीय धमन से कमजोर पड़ा इस चरण में आंदोलन कम उग्र एवं लंबा रहा। 1943 तक हजारों लोगों को गिरफ्तार किया गया था, जिसमें बिहार में 16 हजार से अधिक लोगों की गिरफ्तारियाँ उल्लेखनीय रही।

बिहार का इस आंदोलन में भी निर्णायक योगदान रहा। 31 जुलाई को ही राजेन्द्र प्रसाद ने बिहार कांग्रेस कमिटी की एक विशेष बैठक बुलाकर कांग्रेसी कार्यकर्ताओं को भावी संघर्ष के लिए संगठित होने का आदेश दिया। उसी दिन अजुमन इस्लामिया हॉल में आयोजित सभा में छात्रों और युवकों ने कांग्रेस के कार्यक्रम को समर्थन देने की योजना बनाई। आंदोलन शुरू होते ही बिहार प्रांतीय कांग्रेस कमिटी को गैर-कानूनी घोषित कर दिया गया। पुलिस ने सदाकत आग्रम जिला कांग्रेस कार्यालय को भी जवा कर लिया गया।

सरकार के दमनात्मक नीति के विरोध में जनता में विद्रोह की लहर व्याप्त हो गयी। लगभग प्रदेश के सभी जगहों पर राष्ट्रीय झण्डा फहराया जाने लगा। उन दिनों विद्यार्थियों के एक जुलूस ने सचिवालय भवन के सामने विधायिका की इमारत पर राष्ट्रीय झण्डा फहराने की कोशिश की। किन्तु घटना के जिलाधी W.G. आर्चर के आदेश पर उन पर गोली चलाई गई जिसमें सात छात्र मारे गये जिनमें उमाकांत प्रसाद सिन्हा, रामानंद सिंह, सतीश प्रसाद झा, देवीपद चौधरी, राजेन्द्र सिंह, रामगोविन्द सिंह एवं जगपति कुमार थे।

भारत छोड़ो आंदोलन को सरकार द्वारा बलपूर्वक दबाने से क्रान्तिकारियों को गुप्त रूप से वाप्य होना पड़ा। गुप्त गतिविधियों में 'आजाद दस्ता' का महत्वपूर्ण स्थान है। आंदोलन के शुरू में ही जयप्रकाश नारायण को गिरफ्तार कर जेल भेज दिया गया, जहाँ से वे दिपावली की रात 9 नवम्बर 1942 को रामानंद मिश्र, योगेन्द्र शुक्ल, सुरज नारायण सिंह, गुलाब चन्द्र गुप्त और जालिग्राम के साथ हजारीबाग जेल से फरार हो गये एवं नेपाल के जंगल में भूमिगत हो गये। वहीं पर जयप्रकाश नारायण ने अपने सहयोगियों के साथ आजाद दस्ता का गठन किया। इस दस्ते में कई युवा लोग शामिल हुए। 1943 में आजाद दस्ता के पहले प्रशिक्षण शिविर में बिहार के 25 युवकों को सरदार नित्यानंद सिंह के निर्देशन में प्रशिक्षण दिया गया। किन्तु बाद में बड़े नेताओं के गिरफ्तारी से आजाद दस्ते का कार्य शिथिल हो गया।

इस आंदोलन की एक विशेष घटना यह थी कि कुछ युवा छात्रों ने कुछ रेलगाड़ियों पर कब्जा कर लिया और इन ट्रेन को अपने नियंत्रण में एक स्थान से दूसरे स्थान पर चलाकर आंदोलन का

प्रचार-प्रसार किया। इस ट्रेन का नाम 'स्वराज ट्रेन' रखा गया। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में पढ़ने वाले बिहारी छात्रों ने इस आंदोलन के प्रसार के लिए गांव-गांव का दौरा किया।

1942 में राजेन्द्र प्रसाद के गिरफ्तारी की सूचना मिलते ही वी.एन. कॉलेज के युवा छात्रों ने हड़ताल निकाला तथा इंजीनियरिंग कॉलेज पटना ट्रेनिंग कॉलेज, साइंस कॉलेज आदि संस्थानों के भवनों एवं छात्रावासों पर झण्डे फहराये गये। इसके साथ-साथ छात्राओं ने बिहार केंद्रीय छात्र परिषद नामक एक नए संगठन भी बनाया था।

गांवों में पंचायतों और रखा दलों की भी स्थापना की जाने लगी। इस आंदोलन के क्रम में हिंसा और पुलिस दमन के कई उदाहरण सामने आये। सीवान घाने में झण्डा फहराने की कोशिश में फुलेना प्रसाद श्रीवास्तव मारे गये। वहीं मारण में जगलाल चौधरी, दरभंगा में कृत्तानंद वैदिक और सिधधारा में संपूर्ण ठाकुर ने संघर्ष व्यवस्था को ठप्प कर दिया।

सौम्यता और विस्तार दोनों दृष्टि में बिहार अग्रणी था। इस आंदोलन में आदिवासियों की पर्याप्त भागीदारी रही थी क्योंकि एक कांग्रेसी सूत्र के अनुसार मारे जाने वालों में सबसे अधिक लोग हनारीवाग जिले के ही थे। ताना भागत आंदोलनकारियों ने भी अपने क्षेत्र में ब्रिटिश सत्ता को चुनौती दी थी। जमशेदपुर के टिस्को के मजदूरों ने भी हड़ताल कर दी थी।

जनता द्वारा पुलिस थानों पर चाबा बोलने की सबसे अधिक घटना बिहार में ही घटी थी। 15 अगस्त को लिनलिथगो ने पटना के आसपास संचार साधनों का अस्त-व्यस्त कर रही भीड़ पर आसमान से मशीनगनों द्वारा गोलियों बरसाने का आदेश दिया था। इसके साथ-साथ भागलपुर एवं मुंगेर में आंदोलन दबाने के लिए वायुयानों का प्रयोग किया गया था। दरभंगा के राजा ने न केवल सरकार को अपने सशस्त्र सैनिकों देने से मना कर दिया बल्कि गिरफ्तार लोगों की मदद भी की।

बिहार में इस आंदोलन को जिसने प्रचण्ड बनाया, उनमें किसानों का भारी विद्रोह एवं महिलाओं के योगदान की महत्वपूर्ण भूमिका थी। पटना में जहाँ इस आंदोलन का नेतृत्व श्रीमती भगवती देवी ने की तो हजारीवाग में श्रीमती सरस्वती देवी ने वहीं भागलपुर में श्रीमती माया देवी ने इस आंदोलन को आगे बढ़ाया।

अन्तरराष्ट्रीय दबाव एवं गांधीजी के उपवास के बावजूद सरकार ने इस आंदोलन को कुचलने के लिए सबकुछ किया उसके दमन की कोई सीमा नहीं रही। 1857 के बाद से भारत में इतना निरमम दमन के लिए सबकुछ किया उसके दमन की कोई सीमा नहीं रही।

कभी नहीं देखने को मिला था। आंदोलन की एक विशेषता तो यह रही थी कि निजी सम्पत्तियों पर आक्रमण नहीं किया गया था। इसके साथ इस आन्दोलन के अन्य विशेषता आजादी की मांग राष्ट्रीय आन्दोलन को पहली मांग बन गई। सरकार अन्ततः आंदोलन को कुचलने में सफल रही। 1942 का यह आंदोलन यद्यपि काफी सक्षिप्त रहा, किन्तु इसका महत्व इतना वात से था कि इसने दिखाया कि देश में राष्ट्रीय भावनाएँ किस गहराई तक अपनी जड़े जमा चुकी थी और जनता संघर्ष और बलिदान की कितनी बड़ी क्षमता प्राप्त कर चुकी थी। यह स्पष्ट हो गया था कि जनता की इच्छा को विरुद्ध भारत पर शासन कर सकना अब अंग्रेजों के कठिन हो गया था। भारत के आजादी प्राप्ति में निःसंदेह यह आंदोलन एक मील का पत्थर साबित हुआ।

#### संदर्भ ग्रंथ-सूची :-

1. चन्द विष्णिः भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय, निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, 1999
2. सरकार सुमितः आधुनिक भारत, राजकमल प्रकाशन, पटना-2002
3. राजत सुरेन्द्रः विहार समग्र, कुमार बुक सेन्टर, दिल्ली-2009
4. ग्रोवर बी. एल. एवं गशपालः आधुनिक भारत का इतिहास, एम चन्द एंड कंपनी लिमिटेड, नई दिल्ली-2002
5. शुक्ला रामलक्ष्मणः हिन्दी माध्यम कार्यान्वय, निदेशालय दिल्ली, विश्वविद्यालय, 2003
6. पाठक लक्ष्मीः भारत में अंग्रेजी राज, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली- 2003
7. सिंह अयोध्याः भारत का मुक्ति संग्राम, मैकमिलन कंपनी ऑफ इंडिया, नई दिल्ली, 1977



Approved by UGC  
Journal No. : 63580  
Regd. No. 21747

Indexed : IJIF, IZOR & SJIF  
IJ Impact Factor : 2.471  
ISSN 2277-2014

# Research Discourse

*An International refereed research Journal*

Year-VIII

No. 4

Supplement 2018

Editor in Chief

**Anish Kumar Verma**

Associate Editors

**Rakesh Kumar Sharma**

**Parasottam Lal Vyas**

**Ramesh Mishra**



International  
Innovative Journal  
Impact Factor (IJIF)



Scientific Journal Impact Factor



•	ओजोन क्षरण : संकल्पनात्मक पृष्ठभूमि डॉ० लतीफ इब्न तियागी	154-155
•	चन्दौली जनपद के प्राथमिक स्तर के सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के सेवादाता शिक्षकों में शिक्षण दायित्व बोध का तुलनात्मक अध्ययन अमृता भीमास्वार व डॉ० विशाखा शुक्ला	156-156
•	भारतीय संस्कृति की समन्वयशील परम्परा : एक ऐतिहासिक विश्लेषण डॉ० नैला कुमारी	159-161
•	धार्मिक सामाजिक स्तर एवं सामाजिक समायोजन डॉ० छाया कुमारी	162-163
•	दृष्टिबाधित बालक व दृष्टिबाधित बालिकाओं के सम्प्रत्यय प्राप्ति का तुलनात्मक अध्ययन बीरल कुमार भारती व प्रो० आशा पाण्डेय	164-167
•	ज्ञान का परम्परागत दृष्टिकोण तथा अंग्रेजी शिक्षा नरेंद्र कुमार व डॉ० सीमा पटेल	168-170
•	महर्षि अरविन्द घोष के शैक्षिक विचार एवं समकालीन संदर्भ जयन्ती	171-173
•	प्रेमचन्द की कथात्मक भाषा सुजय कुमार	174-175
•	राष्ट्रीय आंदोलन की यात्रा में अनुग्रह नारायण सिंह की भूमिका राजीव रंजन	176-178
•	शिक्षा : प्लेटो के विशेष सन्दर्भ में अनुराधा कुमारी	179-180
•	भारत में परिवार कल्याण कार्यक्रम प्रीति द्विवेदी	181-182
•	जाति प्रथा ग्रामीण सामाजिक स्तरीकरण का प्रमुख आधार डॉ० मनीराम	183-184
•	सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के गद्य साहित्य में सामाजिक स्वरूप डॉ० पंकज कुमार राय	185-186
•	मानसून का पूर्वानुमान : भारत के सन्दर्भ में नवीन विश्लेषण मुकेश कुमार शर्मा	187-189
•	विश्वनामित्र : मिथक के आड़ में आधुनिक विसंगतियों से संवाद साधना गादव	190-192
•	नाटक : अध्ययन और अनुशीलन डॉ० सन्तोष कुमार	193-194
•	गहिरा सशक्तिकरण लता कुमारी	195-197
•	कर्मचारीतंत्र : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन स्निग्धा सिंह	198-200

## ज्ञान का परम्परागत दृष्टिकोण तथा अंग्रेजी शिक्षा

नरेन्द्र कुमार\* व डॉ० सीमा पटेल\*\*

\*शोधार्थी, वीर कृष्ण मिश्र विश्वविद्यालय, अरा, बिहार

\*\*शोध विद्वान, एस्को पीए, साधारण कालम आई पटेल कॉलेज, मधुवा, बिहार

**सारांश :** प्रस्तुत शोध पत्र ज्ञान का परम्परागत दृष्टिकोण तथा अंग्रेजी शिक्षा को प्रकाश में लाने का प्रयास करता है। भारत ने सामूहिक रूप से शक्तिशाली उच्चतर वर्ग के रत्नात्त हो जाने से नया मध्यम वर्ग सामने आया। आरम्भिक युग में इस वर्ग के लोग अपने को स्वाभाविक रूप से ब्रिटिश शासन के द्वारा उपयुक्त मानते थे। व्यापारियों का धन, जमींदार वर्ग की लगन से तथा दूसरे पक्षों के देन आदि ऐसे स्रोतों से प्राप्त होते थे, जो मुख्यतः अंग्रेजी शिक्षा ने पैदा किए थे, इसलिये ये वर्ग अपने हितों-पिछों के प्रति कृतज्ञ थे। पर ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, त्यों-त्यों धीरे-धीरे लोगों की भाँति दूर होने लगी। प्रस्तुत शोध पत्र पूर्व के अध्ययनों से प्रत्यक्ष है तथा अध्ययन विषय एवं समाज के लिए महत्वपूर्ण है।

**मुख्य शब्द :** नया मध्यम वर्ग, उच्चतर शासक वर्ग, परम्परागत बुद्धिजीवी वर्ग, परम्परागत जीविका, सांस्कृतिक घटकों आदि।

एक तरफ ब्रिटिश विजय का सामाजिक परिणाम यह रहा कि उच्चतर शासक वर्ग का अंत हो गया और दूसरी तरफ इस्लाम परिणाम यह हुआ कि ब्राह्मण का परम्परागत बुद्धिजीवी वर्ग कमजोर पड़ गया। इसका आंशिक कारण यह था कि संरक्षकता के सारे हथकण्ड यानी राजदरवाजे, सूबेदारों, सरदारों और जमींदारों के दरबार भुंग हो गए थे। इसके अलावा आंशिक रूप से दूसरा कारण यह था कि कम्पनी ने पहले से चलती आई, धार्मिक व्यक्तियों और विद्वानों को वीं हुई लगानमुक्त जमीनों को फिर से ले लिया। इस प्रकार अपनी परम्परागत जीविका से वंचित होने के बाद वे जहाँ भी हो सका, नौकरी और राजगार ढूँढने के लिये बाध्य हुए। एसाब कैंड के शब्दों में "प्राचीन विद्या और संस्कृति की जड़ों पर कुठाराघात हुआ, अतः जिस प्रभाव से हिन्दू संस्कृति में उदासता तबों का उदभव हुआ था, वह जाता रहा, पर जिस प्रभाव के कारण इसमें कृसनकार और हास्यास्पद तत्त्वों का प्रवेश हुआ, वह बढ़ गया।"

भारतीय मन पर जिन सामाजिक घटकों ने बहुत अधिक प्रभाव डाला और जीवन की नैतिक, सौन्दर्य-परक, सामाजिक, नैतिक और धार्मिक संभराओं के सम्बन्ध में नए ढाँचों का विकास किया, उनमें पाश्चात्य ज्ञान का विस्तार जो सबसे महत्वपूर्ण स्थान देना चाहिये।

इतना तो स्मरण दिया जा सकता है कि आधुनिक पाश्चात्य ज्ञान आवश्यक रूप से वैज्ञानिक, वस्तुपरक, आलोचनात्मक, भास वाच्य प्रमाणों से दूर तथा मौखिक और गुञ्जासंगत प्रक्रियाओं से प्राप्त किया गया है।

परम्परागत ज्ञान एक सुसम्बद्ध समग्र ज्ञान माना जाता था। इसके अध्ययन की कठिनाई इस कारण से नष्ट जाती थी कि संस्कृत भाषा का ज्ञान आसम्बद्ध था और समृद्ध शब्द कोष और खटित व्याकरण से युक्त संस्कृत भाषा का अध्ययन बहुत परिश्रम साध्य था। इस प्रकार से ज्ञान प्राप्त करने की परिस्थितियों के कारण ही यह चीज के मैटरी-नी की तरह अनिवार्यतः इसके भक्तों का एक छोटा-सा और युवा हुआ दल रह गया। उनके लिए जीविका कमाना जरूरी नहीं था क्योंकि उनका पालन करना सरकार या समाज का कर्तव्य था। यद्यपि वे लोक संग्रह की दृष्टि से गरीब थे, फिर भी आध्यात्मिक रूप से धनी थे और समाज में उनका बड़ा आदर था। उनमें से राव तो नहीं, पर अधिकतर ब्राह्मण थे और कुछ लोग हिन्दुओं की अन्य जातियों के लोग थे।

हिन्दू और मुस्लिम विद्वानों के दायरे अक्सर अपनी ही तक सीमित थे, इसलिये उन्होंने, कुछ अपवादों को छोड़कर अपने ज्ञान का आदान-प्रदान नहीं किया। मतीजा यह हुआ कि उन्होंने एक दूसरे के मन को भी समृद्ध नहीं बनाया। इसके अलावा अठारहवीं शताब्दी राजनैतिक मझबूठी और वीदिक द्वारा का युग था। उभय-पुस्तक के काल में जबकि युद्ध और हिंसा का सर्वत्र नोलबला था, विज्ञान का मनपना संभव नहीं था। पर जब ब्रिटिश विजय से शान्ति स्थापित हुई, तो ज्ञान वृद्धि की प्राथमिक शर्तें पूरी हो गईं। विज्ञान अपने साथ एक नए प्रकार का ज्ञान ले आए थे जिसके बीज उर्वर भूमि पर गिरे और फले-फूले।

**शिक्षा के क्षेत्र में ईसाई मिशन :** प्तारी के युद्ध के पहले के समय में बौद्धिक परिवर्तन को दो मुख्य अभिकरण थे। भारतीयों के तरह से धुलीपीय सौदागरों के प्रभाव में आए, एक तो व्यापारी संस्थाओं में और दूसरे प्रशासन कार्य में।

जो ईसाई मिशनरी भारत में ईसाई धर्म का प्रचार करना चाहते थे, वे भारतीयों में जाकर साईबल का प्रचार करते थे और ईसाई मातृवरण में भारतीय बच्चों की शिक्षा के लिए स्कूल खोलते थे।

प्रारम्भिक सोपानों में, ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने ईसाई धर्म को प्रचार में कोई दिलचस्पी नहीं ली, यद्यपि 1698 के अधिकार पत्र में कारखानों के पाठरियों से यह कहा गया था कि वे "देरी भाभाई सीखें ताकि वे उन निवासियों को जो कम्पनी के नौकर या गुलाम होंगे उनको कम्पनी के एजेंटों एवं प्रोटेस्टेंट धर्म की शिक्षा अधिक अच्छी तरह से दे सकें।" पर कम्पनी मुनाफा कमाने में इतनी धरती थी कि यह हिदायत धरी रह गई।

प्तारी के बाद बंगाल में प्रोटेस्टेंट मिशनरियों के कार्य ने जोर पकड़ा। 1758 में वेनिस मिशन के कीरमाण्डेर कलकत्ता पहुँचे और कसाइय ने उन्हें अपना मिशन शुरू करने की अनुमति दी। पर उनका कार्य अधिकोश अंग्रेजों और पुर्तगाली कहलाने वाले



के सभी संप्रदाय साहित्य की उन्नति में बाधक थे, मानो उनका सृजन प्रगति को रोकने के लिए हुआ था न कि मान्य बुद्धि को ज्वा बढ़ाने के लिए।”

उनको आशा थी कि “अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करने के बाद भारतीय लोग ब्रिटिश शासन के भक्त हो जाएंगे। उसी प्रकार शिक्षित होकर, उन्हीं लक्ष्यों से प्रेरित होकर, हमारे साथ उन्हीं उद्देश्यों में संलग्न होकर न हिन्दू से बल्कि ज्यादा अंग्रेज हो जाएंगे, जैसे कि रोमन साम्राज्य के अधीन गाल या इटालियन लोग रोमन ज्यादा हो गए थे।”

यद्यपि इस भविष्यवाणी का पहला अंश कुछ हद तक पूरा हुआ है पर इसका दूसरा भाग ट्रेवेलियन की आशाओं से कुछ विपरीत उतरा। फिर भी कुल मिलाकर गैकले और ट्रेवेलियन की भविष्यवाणियों आश्चर्यजनक रूप से सही प्रमाणित हुईं। पर यह बहुत अत्युक्ति होगी कि भारतीय लोग रंग और बगड़े के अतिरिक्त सभी विषयों में अंग्रेजी की नकल बन गए हैं या ब्रिटिश शासन के प्रति शिक्षित भारतीयों के वाफादारी अंग्रेजी शिक्षा के कारण बढ़ी हुई है। बल्कि परिणाम इसके विपरीत ही हुआ है।

**भारतीय भाषाओं की अवहेलना :** यह कहा गया कि भारतीय भाषाओं के जरिए ही माध्यमिक विद्यालयों की शिक्षा संभव है और भारतीय साहित्य के विकास पर उसका अच्छा असर होगा। प्रमाण में बम्बई का उदाहरण दिया गया, जहाँ अधिकोश माध्यमिक विद्यालयों में भारतीय भाषाएँ शिक्षा के माध्यम के रूप में चल रही थीं।

यह मानते हुए कि भारतीय शिक्षकों की नियुक्ति की दृष्टि से भारतीय भाषाओं के जरिए, शिक्षा अधिक सरती और सुविधाजनक हो सकती है, आकलैंड ने इस कारण इस सुझाव को मानने से इंकार कर दिया कि “देशी नवयुवक हमारे विद्यालयों में देशी भाषा की रचना सीखने नहीं आएंगे।”

1837 में बम्बई में शिक्षा के माध्यम के प्रश्न पर उच्च न्यायालय के न्यायाधीश, शिक्षा मण्डल के अध्यक्ष और आंग्लवादी सर एरस्कीन पेरी ने तथा कर्नल जार्विस, जगन्नाथ शंकर सेठ और मण्डल के दूसरे भारतीय सदस्यों में द्वंद्व चला। जगन्नाथ शंकर सेठ ने 1847 की पहली मई को बोर्ड को सामने अपने मन्तव्य में कहा—“यदि हमारा उद्देश्य भारतीयों में ज्ञान का प्रचार तथा मानसिक उन्नयन है, तो मेरा यह मत है कि यह ज्ञान उन्हें उनकी अपनी भाषा में दिया जाए। भला और किस उपाय से हम यह आशा कर सकते हैं कि हम कभी स्त्रियों में शिक्षा का व्यापक प्रसार करेंगे? मैं फिर कहता हूँ कि मैं अंग्रेजी की शिक्षा को किसी भी प्रकार निरुत्साहित नहीं करना चाहता, पर मैं विश्वास करता हूँ कि यह आग जनता की पहुँच के बाहर है।” 1833 के बाद बम्बई और मद्रास की प्रेसिडेंसियों पर गवर्नर जनरल का नियंत्रण बढ़ गया। इसका उपयोग बम्बई की सद्गति को बंगाल की पटरी पर लाने में किया गया। इस प्रकार बोलचाल की भाषाओं का पक्ष कमजोर पड़ गया और अंग्रेजी, उच्चतर शिक्षा के माध्यम के रूप में स्वीकृत हुई। यह कहा गया है कि अंग्रेजी ने विभिन्न भाषाएँ बोलने वाले भारतीयों को एक सामान्य भाषा दी, और इस प्रकार भारत के सारे भागों में, परस्पर विचार विनिमय का एक साधन प्राप्त हो गया।

#### सन्दर्भ :

1. एस०के० दे, “हिस्ट्री ऑफ बंगाली लिटरेचर इन द नार्थ-वेस्टीय सेप्टरी” कलकत्ता विश्वविद्यालय, 1919, पृ. 31
2. जे० रिक्टर, “ए हिस्ट्री ऑफ मिशन इन इंडिया,” एस० एच० मूर द्वारा अनूदित, 1908, पृ. 129
3. निदेशक मण्डल की समिति का उत्तर 18 अगस्त, 1824, देखिए : ए० हावेल, पृ. 15-16
4. निदेशक मण्डल की समिति का उत्तर 18 अगस्त, 1824, देखिए : ए० हावेल, पृ. 17-18
5. “दि इंग्लिश बक्स ऑफ राजा राममोहन राय”, जे०सी० चोप द्वारा सम्पादित, जिल्ड 2, कलकत्ता, 1903, पृ. 324
6. कोर्ट ऑफ गवर्नर्स का पत्र बंगाल के परिषद् गवर्नर जनरल के नाम, 5 सितम्बर, 1827
7. सिलेक्शन्स फ्रॉम एजुकेशनल रेकॉर्ड्स, भाग-1, 1781 से 1839, कलकत्ता, पृ.50
8. सिलेक्शन्स फ्रॉम एजुकेशनल रेकॉर्ड्स, भाग-1, 1781 से 1839, कलकत्ता, पृ.50



Approved by UGC  
Journal No. 48923  
IJI Impact Factor : 2.695

ISSN : 2348-4624  
Year : V, No. : XVII, Issue-I  
January-March, 2018

# Śodha Mīmāṃsā

An International Refereed  
Research Journal

Editor in chief

**Dr. Rakesh Kumar Maurya**

Associate Editor

Dr. Anish Kumar Verma & Dr. Devi Prabha

Published by :

**Kusum Jankalyan Samiti**

Deoria, U.P. (INDIA)

विद्यालयीय पाठ्यक्रम का विद्यार्थियों की उपस्थिति, शैक्षिक निष्पत्ति तथा समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन  
सम्बन्धित साहित्य के पुनर्निरीक्षण 64-66

पूजा कुमारी

नागार्जुन के उपन्यासों में प्रगतिशील चिन्तन : आर्थिक तथा राजनीतिक संदर्भ में 67-69

श्रीती सिंह

उच्च शैक्षिक संस्थाओं में विद्यार्थियों की उपस्थिति की समस्या एवं समाधान 70-71

अनुराधा कुमारी

तनाव प्रबंधन में श्रीमद्भगवद्गीता की उपदेयता 72-75

श्री नारायण मिश्र

भारत के कृषि क्षेत्र में विद्यमान समस्याओं का आलोचनात्मक मूल्यांकन 76-78

मुकेश कुमार शर्मा

पश्चिमी ज्ञान विज्ञान से सम्पर्क एवं प्रभाव 79-81

नरेश कुमार व डॉ० सीमा पटेल

परिणत समय में छात्रों की शैक्षिक सफलता में शिक्षक नेतृत्व की प्रसंगिकता : एक अध्ययन 82-86

उदुल

भारत में संसदीय शासन प्रणाली (ऐतिहासिक पृष्ठभूमि) 86-89

डॉ० ज्ञान गुप्ता

नाट्य मंचन में अभिनय की भूमिका 89-90

डॉ० सतीश कुमार

नैतिक अवमूल्यन और बौद्ध दर्शन 91-93

डॉ० सुनील कुमार खंडा

स्त्री मनोविज्ञान : कृष्णा सोनती एक नज़र 94-96

सुधिया सिंह

मानव संसाधन विकास केंद्रों द्वारा संचालित कार्यक्रमों के प्रति शिक्षकों की अभिवृत्ति का अध्ययन 97-99

सन्मित सिंह

लोक जीवन की मानवीय व्याख्या 99-101

सुगता जायसवाल व प्रो० मंजु किशोर सिंघाटी

परम्परा एवं आधुनिकता : एक अध्ययन 102-104

सोहा सिंह

विद्युत्संयोजकशास्त्र में वर्णित वनस्पतियों का परिचय एवं उपयोग 105-108

डॉ० विश्वन्तोष दत्त द्विवेदी

नागार्जुन की प्रगतिशील शैली अथवा धर्म और लक्षण का शिल्प विज्ञान 109-110

डॉ० किरण कुमारी मिश्रा

अनुसूचित जाति की महिलाओं में शातनदी का प्रभाव : एक अध्ययन 111-114

स्वीता कुमारी

सर्व शिक्षा योजना : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन 115-117

छोटे शास्त्र

संस्कृत साहित्य में काव्यमयी तब गद्य परिचय 118-119

डॉ० जय शोषण शंकर

धर्मशास्त्रसाहित्यविद्ययासुच विवेचनम् 120-122

डॉ० शिवका मन्द पाशवान

जवाहर न्याय नेहरू और सुभाषी जी के शास्त्रों का विस्तारणात्मक अध्ययन 123-125

जितेंद्र प्रसाद

साम्प्रदायिकता की ज्ञान-संगतता 126-128

दीपनारायण शारदेय व डॉ० किन्सा कुमारी

सामाजिक विज्ञान एवं जागरूकता कार्यक्रमों के प्रति ग्रामीण महिलाओं की जागरूकता : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन 129-131

शबली नौर

## पश्चिमी ज्ञान विज्ञान से सम्पर्क एवं प्रभाव

नरेन्द्र कुमार\* व डॉ० सीमा पटेल\*\*

\*शोधार्थी, गैर फुल टाइम शिक्षा विद्यापीठ, जयपुर, विहार

\*\*शोध निर्देशक, एच० पी०, सरदार चंदावर चौक, पटेल कानून, नगुभा, विहार

उपयोक्तान्तावदी विचारों से प्रभावित एवं तर्कबुद्धि (हेतु) मान्यता और मानव अधिकारों में गहन आस्था रखने वाले ईस्ट इण्डियन कम्पनी के अधिकारियों के साथ यूरोपीय पुनर्जागरण तथा औद्योगिक क्रांति से उत्पन्न नवीन चेतना का भारत में प्रवेश हुआ। इंग्लैंड जैसे विकसित राष्ट्रों से तथा अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम से प्रविष्ट पश्चात्त सम्प्रदाय ने हमारी शिक्षा, सामाजिक विचारों, स्थापत्य कला, आर्थिक जीवन, प्रविष्टता, संचार, परिवहन, उद्योग, प्रविधि, स्वास्थ्य सेवाएँ, खान-पान सम्बन्धी वृत्तियों और सन्धान-रहन-सहन सभी को प्रभावित किया। भारतीय जनजीवन के विभिन्न पक्षों में उत्प्रेरक, आकर्षक एवं व्यापक परिवर्तन हुए जिनके फलस्वरूप यह युग (19वीं शताब्दी), अन्य समस्त युगों की तुलना में, अत्यन्त भिन्न तथा विशिष्ट बन गया। आधार-विचार तथा व्यक्तित्व में आधुनिक भारत का निवासी अपने पूर्वजों से भिन्न दिखने लगा।

पश्चिमी सभ्यता के तीन तत्वों का इसमें विशेष योगदान रहा है—ईसाई आचारशास्त्र, विधि का शासन और प्रकृति पर विज्ञान की विजय।

पश्चिमीकरण का रूप जनता के विभिन्न भागों में एकरूप नहीं था। कुछ ने वेशभूषा, खान-पान, रहन-सहन, तौर-तरीकों को अपनाया तो कुछ ने ज्ञान-विज्ञान, साहित्य आदि को, किन्तु इस अन्तर को रूढ़ नहीं माना जा सकता। पश्चिमीकरण ने प्राविधिकी, संस्थाओं, ज्ञान-विज्ञान, विचारों, विचारों तथा मूल्यों को भी प्रभावित किया। समाचार-पत्रों, ईसाई मिशनरी, बुनाई को भी पश्चिमी सभ्यता के प्रभावों के अन्तर्गत गिना जाता है। इन नई संस्थाओं के प्रवेश के साथ ही प्राचीन (पारम्परिक) संस्थाओं में भी आचारात्मा परिवर्तन हुए। मूल्यों में भी परिवर्तन आये— ब्रह्महत्या के लिए मानवतावाद को अपनाया जाने लगा जिसमें सभ्यता तथा अनिर्णयता दोनों जब समावेश है यद्यपि भारतीय संस्कृति इनसे विहीन नहीं थी।

साहित्य के क्षेत्र में उपन्यास, आधुनिक काव्य छन्दों आदि को विभिन्न भारतीय भाषाओं में पश्चिम के संचार के फलस्वरूप अपनाया गया। कला, स्थापत्य, नृत्य एवं संगीत भी पश्चिम से व्यापक रूप से प्रभावित हुए। पश्चिमी सभ्यता के प्रभावस्वरूप आर्थिक क्षेत्र में उद्योगों की स्थापना एवं संपृद्धि हुई, नये नगरीय केंद्रों का विकास हुआ तथा पश्चिमी प्राविधिकी भी अपनाई गई। विज्ञान, वैज्ञानिक सोच, धिकित्सा, गणित आदि भी पश्चिम से प्रभावित हुए। भारतीय सभ्यता-संस्कृति में नवीन तत्वों के प्रवेश ने अंग्रेजी शिक्षा की प्रमुख भूमिका थी जिसने, भारतीयों को पश्चिमी दर्शन, विज्ञान, साहित्य, इतिहास, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र आदि के अध्ययन का अवसर प्रदान कर, उन्हें पश्चिमी सभ्यता-संस्कृति के विभिन्न पहलुओं से परिचित बनाया। विभिन्न विषयों तथा क्षेत्रों से सम्बन्धित नवीन विचार भारतीयों को उद्घेष्टित

करने लगे। विचार एवं कर्म की नवीन प्रवृत्तियों ने पारम्परगत भारतीय संस्कृति में हलचल उत्पन्न कर दी।

पश्चिमी शिक्षा ने नव-शिक्षाप्रदान जनों के दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन को जन्म दिया। ज्ञान-साहित्य इतिहास और राजनीतिक संस्थाओं के अध्ययन के फलस्वरूप मानवतावादी दृष्टिकोण विकसित हुआ और वे जाति, धर्म आदि का भेदभाव नित्ये बिना, मानवता के हित से सक्रिय रूप से जुट गये जिससे समाजापरक एवं धर्म-निरपेक्ष (लीकिक) प्रवृत्तियाँ पनपी। इसके साथ ही, नई शिक्षा ने हेतुवादी और आलोचनात्मक दृष्टिकोण के विकास को भी प्रोत्साहित किया, जबकि पारम्परिक शिक्षा-प्रणाली में अज्ञान को ही प्रायः और मूढ़ कर स्वीकार कर लिया जाता था। भारत पर पश्चात्त संस्कृति के संचार का सर्वाधिक महत्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि, प्रचलित परम्पराओं, विधायी और रीति-रिवाजों में अन्वित्वात्त के स्थान पर हेतुवाद की एक ऐसी भावना का जन्म हुआ जो किसी भी चीज को और मूढ़ कर स्वीकार करने के बजाय जिज्ञासा (जोय पढ़ताल) और तर्क पर जोर देती थी।

पश्चिम के साथ सम्पर्क के फलस्वरूप भारतीय सभ्यता के नये युग के सूत्रगत के सन्दर्भ में डी.एस. शर्मा ने लिखा है कि हमारे स्कूल-कॉलेजों में—युवा विद्यार्थियों की प्रभाकृत दृष्टि के समस्त विचारों का एक नया जगत प्रकट हुआ। अंतर्दृष्टिपूर्ण पौराणिक भूगोल, दर्शन-व्याख्यात्मक इतिहास और विद्या-विज्ञान के स्थान पर पृथ्वी के अकार, राष्ट्रों के उत्थान एवं पतन तथा प्रकृति के अपरिवर्तनीय नियमों (विधानों) से सम्बन्धित संयत एवं सही विचार आये।

ब्रिटिश शासन के अधीन जन्म लेने वाली नई राजनीतिक, आर्थिक, शैक्षणिक तथा सामाजिक स्थितियों ने जाति-प्रथा पर भी प्रहार किया। ग्राम-समुदाय की आत्मदृष्टि का अन्त हुआ, भूमि में निजी स्वामित्व की प्रणाली की शुरुआत हुई, विदेशी नियन्त्रण के अर्थात् फिट-मुट रूप से उद्योगों का जन्म एवं विकास हुआ, नये व्यक्तियों तथा नगरों और साक्षरता-परिवहन के नये साधनों (रेल्वे आदि) का विकास हुआ जिसके फलस्वरूप न तो व्यवसाय जातियों से बंधे रह गये, न विभिन्न जातियों का परस्पर दुराव ही पूर्वात्त बने रहना सम्भव रहा। ब्रिटिश शासन के अधीन व्यक्ति की परिस्थिति अन्त परम्परा पर आधारित न रहकर, शिक्षा, व्यवसाय, आर्थिक स्थिति आदि पर आधारित हो गयी।

पश्चिम के अनेक वैज्ञानिक आविष्कारों का भारत में प्रवेश हुआ—मुद्रशालाएँ, वायुचालित यान, रेलवे इंजन, तार, टेलीफोन, वायुयान आदि जिन्होंने यातायात परिवहन एवं संचार-सम्पर्क के क्षेत्र में भारतीयों को परस्पर तथा शेष विश्व के निकट लाने में उत्प्रेरक भूमिका निभाई।

मानवतावादी दृष्टिकोण ने समाज एवं धर्म सुधार आन्दोलन को और गिरे स्वातन्त्र्य समाज की प्रेरणा प्रदान की। बाल गिबर्ट, बल्लभ वैद्य (किन्ना दिवाड निरंघ), पदाप्रथा, स्त्री-शिक्षा का विरोध, अस्पृश्यता, अन्तर्जातीय धाम-धाम आदि कुप्रथाओं के उन्धान एवं उन्मूलन के लिए अनिवार्य मान्य जाने लगा।

समाज एवं धर्मसुधार आन्दोलनों (वस्त्रसमाज, प्रार्थनासमाज, आर्यसमाज, रामकृष्ण मिशन, शिरोसंज्ञिकल सोसाइटी आदि) ने समाज में व्याप्त दुराइयों को दूर करने और परिशोधन लाने में काफी रीति तक सफलता प्राप्त की। नवजागरण (या पुनर्जागरण-रेनैसांस) ने भारतीयों को इहलौकिक जीवन की ओर ध्यान देने और जनसामान्य के भौतिक-नैतिक उत्थान के निमित्त कार्य करने की ओर मार्गदर्शक एवं निरुत्साह से मुक्ति पाने की प्रेरणा प्रदान की।

समाज सुधार आन्दोलनों के फलस्वरूप दलितों में भी नवीन चेतना जागृत हुई। ईसाई मिशनरियों, रामकृष्ण मिशन, शिरोसंज्ञिकल सोसाइटी, चलिच वर्ग मिशन (बन्द्य) तथा गणेशजी के हरिजन उद्धार (या अछूतोंद्धार) आन्दोलन और सरकार के द्वारा उठाये गये कुछ कदमों ने दलितों के उत्थान में सहायता पहुँचाई।

स्त्रियों के उद्धार एवं शिक्षा के क्षेत्र में भी पश्चिमी संचाल की उल्लेखनीय भूमिका थी। डॉ. मेरी के अनुसार स्त्रियों को स्वाधीनता की प्राप्ति, अपेक्षाकृत सुरास्कृत वर्गों में पदाप्रथा के त्याग आदि से प्रकट होने वाला (अपेक्षाकृत) सामाजिक-स्वातन्त्र्य, सार्वजनिक जीवन तथा विभिन्न व्यवसायों में उनका प्रवेश, स्त्रियों से सम्बन्धित आन्दोलनों का विकास, 1937 में ब्रिटिश भारतीय सरकार द्वारा पारित स्त्रियों के सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकारों का अधिनियम, 1933 में मैसूर व्यवस्थापिका द्वारा पारित हिन्दू विधि, स्त्री अधिकार सम्बन्धी विभिन्न, जिनसे स्त्रियों की वैधानिक परिस्थिति में सुधार हुआ, आदि महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हैं, जिनका जन्म स्त्रियों की स्थिति से सम्बन्धित विधायकों को नई दिशा दिये जाने से हुआ।

पुरातनपंथी भी अंग्रेजी शिक्षा के समर्थक, किन्तु अंग्रेजी विचारों के विरुद्ध थे। बंगाल में इनमें प्रमुख थे- राधाकान्त देव (1784-1867), गौर मोहन विद्यालंकार और भवानी चरण मुखर्जी आदि। तीसरा दृष्टिकोण वर्गों के बीच समन्वय (सामन्वय) के पक्ष में था, यह न तो पश्चिम को पूर्णतया स्वीकार करने का समर्थक था न पूर्णतया अस्वीकार करने का। यह देश की प्रगति के लिए परिवर्तन के पक्ष में था। राजा राममोहन राय, प्रार्थना समाज और विवेकानन्द इसी दृष्टिकोण के पक्षधर थे। वे पूर्वी दर्शन और आन्त विचारों के सामन्वय को अनिवार्य मानते थे।

रामकृष्णन के अनुसार, पश्चिमी शिक्षा तथा आदर्शों के प्रसार ने हिन्दू धर्म के अन्तर्गत ऐसे आन्दोलनों को उत्प्रेरित किया जो, इसके सामाजिक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों को परिशोधित करने के साथ ही, उन उपद्रवियों को उन्मूलित करने के निमित्त थे जो न केवल किन्तु धर्म की चेतना (भावना-सिधिरिट) के ही बल्कि पश्चिमी संस्कृति द्वारा प्रसारित आदर्शों के भी विरुद्ध थे।

हमारे पुनर्जागरण पर पश्चिम की उल्लेखनीय प्रभाव का निरूपण करते हुए डॉ. विश्वनाथ प्रसाद वर्मा ने लिखा है कि, यह साध है कि पश्चिमी शिक्षा तथा ज्ञान के प्रचार-प्रसार से देश में

बौद्धिक-अनुराग की नयी भावना उत्पन्न हुई जिसका प्रयोग धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक समस्याओं के समाधान के लिए किया गया।" ए. आर. देसाई ने लिखा है कि, आधुनिक शिक्षा और उच्चतर पाश्चात्य संस्कृति के सम्पर्क की भारतीय पुनर्जागरण में अत्यन्त प्रगतिशील भूमिका थी और इसका सबसे बड़ा प्रमाण यही है कि आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक प्रगतिशील आन्दोलनों के लगभग सभी नेता अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त बुद्धिवादी वर्ग के थे। निरन्तर बर्द्धमान और गहरे ढंगे हुए राष्ट्रीय आन्दोलन के नेताओं में से अधिकांश आधुनिक पद्धती से शिक्षित हुए थे।

19वीं शताब्दी के अंत तक, विशेषतया शिक्षित भारतीयों में, पाश्चात्य सभ्यता का अत्यन्त अप्रतिरोधनीय आकर्षण रहा है। 19वीं शताब्दी की प्रारम्भिक दशकियों में पाश्चात्य विज्ञान तथा उदात्तवाद की अतिशय प्रधानता थी। विज्ञान के व्यावहारिक उपयोग से संचार और यातायात की नयी पद्धतियों द्वारा, आर्थिक संगठन की नई विधियों और नई राजनीतिक संस्थाओं द्वारा भारत का रूप-परिवर्तन हो रहा था। विज्ञान एक महान मुक्तिदाता के रूप में प्रकट हुआ था और अनन्त सम्भावनाओं से परिपूर्ण मानववादी प्रयास का अग्रदूत प्रतीत होता था।

किन्तु वास्तव में, आधुनिक भारतीय नवजागरण अथवा पुनर्जागरण का काल, जिसका आरंभ राजा राममोहन राय के साथ हुआ और जो पिछली शताब्दी के अन्तिम दशक में विवेकानन्द के साथ चरमोत्कर्ष को प्राप्त हुआ, ब्रिटेन की भौतिक, नैतिक, बौद्धिक, सांस्कृतिक श्रेष्ठता के विरुद्ध हिन्दू भारत का विद्रोह था। इस रेनासांस ने, पश्चिम की श्रेष्ठता के मिथक के विरुद्ध भारत के प्राचीन गौरव को स्थापित कर, आंग्लीकरण (पश्चिमीकरण) की ओर तीव्र प्रवाह को रोकने का प्रयास किया।

सुरेन्द्रनाथ बनर्जी के पितामह अत्यन्त पुरातनपंथी और नैतिक कर्मों के पालन के प्रति अतिनिष्ठ कुलीन ब्राह्मण थे किन्तु उन्होंने अपने ज्येष्ठ पुत्र (सुरेन्द्रनाथ के पिता) को हिन्दू कालेज में शिक्षा दिलायी। अंग्रेजी शिक्षा ने सुरेन्द्रनाथ के पिता के मतिष्क से, पारिवारिक परम्परा तथा वातावरण द्वारा पोषित, पुरातनपंथी विचारों को मिटा दिया। वे उस पीढ़ी के सदस्य थे जिसके कुछ सदस्य केरोजियों के घरों में बैठे थे और, किसी नये पंथ में नये-नये दीक्षित होने वालों के समान, अपने पूर्वजों से उनका विद्वेष पूर्ण एवं उग्र व्यवहार भी था।

इस सन्दर्भ में डॉ. राधाकृष्णन ने लिखा है कि "ब्रिटिश सत्ता के उत्थान के साथ प्राचीन व्यवस्था निर्बल पड़ती गयी और अपनी संस्कृति के प्रति भारतीयों का विश्वास क्षीण होता गया। अनेकों व्यक्ति पश्चिमी सभ्यता से चकाचौंध हो गये जो इहलौकिक सत्ता की प्राप्ति के अधिक अनुकूल प्रतीत होती थी। कुछ व्यक्ति इससे इतने मोहग्रस्त हो गये कि नववीक्षितों जैसे उत्साह के साथ उन्होंने पश्चिमी संस्कृति को अपना लिया तथा अपना पूर्ण पश्चिमीकरण करने को सचेष्ट हो गले, कुछ ने ईसाई धर्म को भी अपना लिया। भारत की सामाजिक-धार्मिक संस्थाओं की निरर्थकता और अनुपयोगिता घोषित कर वे नयी नींव पर राष्ट्रीय जीवन के ढाँचे के पुनर्निर्माण की आकांक्षा करने लगे परन्तु इसके पक्ष में विशाल बहुमत नहीं था। अंग्रेजी शिक्षाप्राप्त वर्गों ने नियत न तो जीवन के परम्परागत मार्ग का, न मतिष्क की वृत्तियों का ही त्याग किया बल्कि पश्चिमी विद्या का उपयोग वे अपनी संस्कृति



के सुधार और सशान्ति तथा उनके परिवर्तन के सत्यार्थों से उत्पन्न प्राचीन धर्मों के अनुसूचित धर्मों के सिरे चलने लगे। अतएव, धारमः व अथर्व वेदुमादी विधानों के संघात में हमारे समाज एवं धर्म में प्रथमिय मुर्तयों को जन्म दिया, मरनु में ज्यार की एक कीर्ती तार के समात अस्मादी वी और शीघ्र ही वीण पर गये और अपने वीण उर्वर मिट्टी के डेर छोड गये (ब्रिटिश वैसनाउट्टसी एवड इण्डियन रेनासा में र. घ. मजुमदार द्वारा उद्धृत)। कलत ईश में तीव्रगामी धरणा में मरनु सौमिक एवं धार्मिक रसेर का जन्म हुआ। अपने धीमर के अन्तकाल तक पहुँचो-पहुँचो कवीन्ध रवीन्ध भी पश्चिमी राष्ट्रों की सल्लनिध्या में अपने पूर्णतार्थी विरधारा को प्रागः पूर्णरूपेण गैर धुके थे। पश्चिम के 'कलना प्रधान परिदृश्य' से उडर कर अपने निबन्ध "सम्पता का संकट" में टैगोर ने पश्चिम के प्रति अपने मोहनग को व्यक्त किया।

ईसाइयत का भी कुल भिलाकर, भारत पर विशेष प्रभाव नहीं पडा। के. एम. पणिकर के अनुसार, ईसाई मिशनरों को सहन किया जाता था, उन्हें सम्पूर्ण प्राप्त नहीं था जिस कारण भारतीय जीवन पर विशेष प्रभाव डालने में वे विफल रहे।<sup>1</sup> बलित वर्गों को छोड अन्य हिन्दुओं ने ईसाई धर्म के प्रचार-प्रसार का तीव्र विरोध किया। भारतीयों को ईसाइयत के गुणों (विशेषतःओं) के प्रति आश्चर्य करके ईसाई धर्म का सिधार्थन करने के रजाय मिशनरियों ने उनके निर्भरता का लाभ उडा कर, उनके धर्म-परिदार्शन का प्रयास कर, और इस प्रकार ईसाई धर्म ग्रहण करने वालों की संख्या को अपनी सफलता का मापदण्ड मानकर इसकी प्रगति की गति को अवलम्ब ही किया। भारतीय जीवन एवं विचारों पर कुछ मिशनरियों के विवेक शून्य आक्रमणों ने वेवाधवाद की ओर वापसी को उत्प्रेरित किया। ये प्रसार इतने नृत्तन (अभयार्थित) थे कि उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक में उस समय के सत्कातीय ग.ज. जार्ड मिण्टों ने इस आधार पर ईसाई प्रचार पुस्तिकाओं को खन्ना करने का आदेश प्रसारित किया कि ये पुस्तिकाएँ किसी भी प्रकार के तर्क के बिना, नर्क जैसी अग्नि से, बलिक उससे भी प्रचण्डतर अग्नि से, मनुष्यों की एक पूरी जाति के विरुद्ध केवल इसलिए भरी थीं कि ये उस धर्म में विश्वास रखते थे, जो उन्हें उनके माता-पिता ने सिखाया था तथा जिसके प्रति उनके मानस में सदेह उत्पन्न होना असंभव था। इस परिस्थितियों में अद्वैत दर्शन के प्रति आग्रह में वृद्धि हुई जिसके फलस्वरूप मूर्तिपूजा, जाति और अंधविश्वासपूर्ण रीति-रिवाजों के प्रति जोर पकड़ने लगा।

अस्तु पश्चिमी शिक्षा एवं ईसाइयत की प्रागतिशील भूमिका को स्वीकार करते हुए भी, यह समझ लेना गलत होगा कि भारतीय रीतियाँ तथा राष्ट्रवाद इस शिक्षा की व पश्चिमी संघात की ही संवृति थे। वा. काट्रिकेकर वत्ता के अनुसार, भारत का राष्ट्रीय

जागृताजन्म सामाज्यवाद और वस्ती संघर्ष प्रणाली में, कलररररर चलना हुआ। शिक्षा सामर्या चले जो भी राष्ट्रीय भावकीय मुक्तुमाकी आवस्थामाती थीं। अन्तर भारतीय मुक्तुमाकी को संस्कृत में लिखे गये वेदी की ही शिक्षा किल्लो पहाती जो उन्हें वही अपने सत्य के सिधान्त और नारे मिल जाते। ए. आर. देसाई के अनुसार, भारतीय राष्ट्रवाद का जन्म वस्ती नती सामाजिक-भौतिक स्थितियों के फलस्वरूप हुआ, उन नती सामाजिक स्थितियों के कारण हुआ, जो अवेजो की भारत गिल्या के बाद उत्पन्न हुई। यह भिन्न स्वार्थों के वस्तुनिष्ठ स्वार्थ का परिणाम था। भारतीयों की मीय धी-संरक्षणी नीवरियों का भारतीयकरण, भारतीय उद्योगों के लिए सुरक्षा, विधीय स्वायत्तता आदि जो सपनिवेशवाद के दिवों के प्रतिकूल नहीं थीं। वा. विरकान्त प्रसाद वर्मा ने भी पश्चिमी विचारों व विचारकों के आधुनिक भारतीय राष्ट्रवादी तथा स्वातन्त्र्य आन्दोलन पर प्रभाव का दृश रूप में निर्वचन करना सर्वथा अतिशयोक्तिपूर्ण नसाया है कि वह पूर्णतः पश्चिमी आवर्षों तथा पद्धतियों के सीते में उल्ला था। डा. शंकर घोष लिखते हैं कि कहा जाता है कि पश्चिमी संघात ने भारत को आधुनिक राजनीतिक आदर्श प्रदान की है, यह दावा कुछ अतिशयोक्तिपूर्ण है। वास्तव में असात वास्त सलियों किन्तु, बड़े अर्थों में, हमारी अपनी दीर्घकालिक आध्यात्मिक परम्परा की अन्तर्भित्त ओजस्वला (प्राणसक्ति) के फलस्वरूप अनेकानेक सुधारक, शिक्षक, संत तथा विद्वज्जनों का उदय हुआ किन्हींने हिन्दू धर्म की परवती अपकृद्धियों का विरस्कार करते हुए, उसके वास्तविक एम अन्वितार्थ तत्त्वों को प्रमक करते हुए, हिन्दू धर्म का परिशोधन किया, अपने निजी अनुभवों से उसके प्राचीन सत्यों की पुष्टि की, तथा इसके संदेश को यूरोप व अमेरिका तक पहुँचाया।

#### सन्दर्भ :

1. श्रीनिवास : आधुनिक भारत ने सामाजिक परिवर्तन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृ. 48
2. गर्ग टी.एस. : हिन्दूधर्म- श्रु. व एजेज, भारतीय विद्या भवन, 1989, पृ. 69
3. मजुमदार आर.सी. : ब्रिटिश वैसनाउट्टसी, राजस्थानी प्रथम, 1965, पृ. 83-84
4. काव्यती विदुस एण्ड पाण्डेय राजेव : आधुनिक भारतीय राजनीतिक सिन्धान, रोज पब्लिकेशन इन इण्डिया, आषा, पृ. 4
5. देसाई ए.आर. : भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक वृधभूमि, सेज पब्लिकेशन, 2010, पृ. 138
6. जमली एस. एन. : ए नैफल इति गैरिण, रुष पब्लिकेशन, 2010, पृ. 1-2
7. पणिकर के.एम. : एशिया एण्ड वेस्टर्न सोसियल्स, सांघेय पब्लिकेशन, 1993, पृ. 422

*Shodh*

# HASTAKSHEP

Multilingual and Multidisciplinary  
International Research Journal

Vol. : 2

No. : 4

( July - December 2014 )



*Editor*

Dr. Satya Pal Sharma

*Associate Editors*

- Pankaj Kumar Gautam
- Neeraj Dhankhar

*Assistant Editors*

- Dr. I.S. Chauhan
- Vijay Kumar Ranjan

**JOURNAL OF THE SOCIETY FOR EDUCATIONAL EMPOWERMENT  
VARANASI, U.P., INDIA**



# वीक्षा

मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान की अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका

प्रधान संपादक

सदानन्द शाही

संपादक

बृजराज सिंह

कमल कुमार



लीकायत प्रकाशन

	हिन्दी कहानियों में लीला इन्द्र के चित्रित रूप	१५५-१५६
	राम राम	
	सिद्धु अन्वयन की लीला	१५६-१५७
	आर्यभट्ट की लीला	
	सिद्धु अन्वयन की लीला के साथ लीला	१५७-१५८
	कालकवीर की	
	समय और लीला 'अमृतो ब्रह्मण्यो अमी' के विशेष संदर्भ में	१५८-१५९
	सोनील कुमार मिश्र	
	बालाभट्ट की लीलाकाल : हिन्दी लीला का उदात्त मानकवाद	१५९-१६०
	डॉ. अशोक मिश्र	
	'उत्तराखण्ड में प्रसिद्धिपूर्वक नव-विचारों एवं उनके पर-सद्व्यवहार का प्रश्न'	१६०-१६१
	सुरवीण कुमार शर्मा	
	सिद्धु अन्वयन की लीला का उदात्त मानकवाद	१६१-१६२
	सिद्धु अन्वयन	
	लीला 'लीला' की उदात्तमानकवाद में लीला का	
	डॉ. सूरवीण कुमार/सुरवीण शर्मा	
	सिद्धु अन्वयन	
	आर्यभट्ट की लीला	१६२-१६३
	सोनील कुमार मिश्र	
	सिद्धु अन्वयन के अन्वयन में सूरवीण शर्मा के उदात्तमानकवाद का विश्लेषण	१६३-१६४
	सोनील कुमार मिश्र	
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का सूरवीण शर्मा	१६५-१६६
	सोनील कुमार मिश्र	
	सूरवीण शर्मा और सूरवीण शर्मा	
	सूरवीण शर्मा	१६६-१६७
	सिद्धु अन्वयन का सूरवीण शर्मा	
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	१६७-१६८
	सोनील कुमार मिश्र	
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१६८-१६९
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१६९-१७०
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१७०-१७१
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१७१-१७२
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१७२-१७३
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१७३-१७४
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१७४-१७५
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१७५-१७६
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१७६-१७७
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१७७-१७८
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१७८-१७९
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१७९-१८०
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१८०-१८१
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१८१-१८२
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१८२-१८३
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१८३-१८४
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१८४-१८५
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१८५-१८६
	सूरवीण शर्मा की लीलाकाल का	
	सूरवीण शर्मा	१८६-१८७

## शिवमूर्ति के गाँव का बदलता यथार्थ

प्रियका मिश्रा

भारतीय संस्कृति के पधार्थ का आधार ही ग्रामीण जीवन रहा है। जिसने भारतीय पधार्थ में साध, भारत मोरन और स्वार्थ रहित। जनसाधन में बनने वाला प्रम है जो बदलने समय का पधार्थ और कष्ट को राजनीति भी है।

वेदक युग के आदर्श में धर्मधर्म के बट, राजनीति, समाज और राज्य व्यवस्था तबसे बदलता आया। सन् ६० के बाद प्रामाणिक संस्कृति में कई बदलाव आये, बाजार, सामाजिकता और औपनिवेशिकता के लक्ष्य का तब भी पधार्थ है। ग्रामीण जीवन का पधार्थ संतुलित हुआ। आकादी के बाद का भारत भी भी ग्रामीण भारत अपनी तथ्याय विद्वपताओं और

धर्मिकता दुआ है जो का कथाकार है 'शिवमूर्ति'। सन् ६० के बाद का बाद प्रमनद और गुरु का जीवन है अपने बदलते समय के साथ वह शिवमूर्ति का गाँव भी है। जैसे जो कहा गया है कि— 'अस्तित्व जिस वर्ग या वर्ग में पैदा होता है। उसी को जीवन, आदर्श व आकादीओं को अयोग्य कर लेता है और समाज में जो उसे मान-सम्मान, विरक्तता-पूजा, प्यार, हिंसा व पथ जो मिलता है, वही उसके अयोग्यता का हिंसा बन जाता है।'

शिवमूर्ति इसी बदलते समय के प्रामाणिक जीवन को जीने वाला है अतः इनके आचरण में भी बदलते समय के कष्ट पधार्थ को इनकी रचनाओं (कथा साहित्य) में देखा जा सकता है। आकादी के बाद के गाँव का रूप अलग है। इसी चिन्ता को उभरने अपनी रचनाओं— 'कसाईबाड़ा', तिरिया—चरित्त, भारतवर्षम् सिरी उमर जोर, अफालन्द, कंकर—कम्प्यू आदि में संकलित किया है। इनके कथा उपन्यासों में अर्थ का प्रामाणिक संस्कृति का संका अलग मिलता है। प्रमनद के बाद आने वाला गुरु, राजनीति, राजद लोगो और शिवमूर्ति आदि ने कथाकारों के भारत गाँव को बहुविध रचिना का कथाकार रखा है। उभयन पधार्थ को केवल खेतिहर किसान का पधार्थ समझने के अर्थ, प्रामाणिक अर्थव्यवस्था में शामिल कई पधार्थ जैसे रबी-जीवन, जातिवाद, राजनीति अर्थव्यवस्था और आपसी ईर्ष्या आदि को कथाकारों का आधार बनाया।

शिवमूर्ति को एक अति प्रसिद्ध कहानी 'तिरिया—चरित्त' है। जिसमें गाँव के जीवन का पधार्थ हर तरफ से दिखता है। एक लाधार स्त्री की शुरुवा पीड़ा को उम कदासी में व्यक्त किया गया है। जैसाकि लोकगीत सबसे बड़ी प्रभावी रचा रही है, परन्तु वही लोकगीत देश को सबसे कमजोर वर्ग के लिए रचा कर पा रही है। 'तिरिया—चरित्त' को नयिका मिलती अपने पैरे पर खड़ा होना जो जानती है, परन्तु पुरुष वर्ग के यक्यूह को भेदना नहीं जानती है। परिवारिक संस्कार से बंधी रहती है, पितृसत्ता उसके सफल व्यक्तित्व के बनने में बाधक बनती है। एक स्त्री को आत्मनिर्भर बनने में रोकती है और जब इस सफलता को पाने के लिए घर से बाहर जाती है तो स्त्रियों के लिए भयानक, असुरक्षित, वास्तविक व चरित्त पर दाग पैदा करने वाला संसार के रूप में चिहित होती है।

'कसाईबाड़ा' और तिरिया—चरित्त से लेकर 'आखिरी छत्ता' (उपन्यास) तक जो परिदृश्य है, वह समकालीन भारत का पधार्थ रूप है। परिवार, धान, कोर्ट, जाति—जाति, किसान, दलित धर्म, साम्प्रदायिकता, खेती—नौकरों, पारिवारिक विषय का जो एक सपट चित्र चिहित होता है जो असुंदर और दण्डार है। अर्थव्यवस्था का हस्तगत प्रारम्भिक व्यवस्था से लेकर शिवा के गाँव में भी फैलता गया है, जिसे 'भारतवर्षम्' कहानी में प्रस्तुत किया गया है। पधार्थ को गठ तो दूसरों से अपेक्षित होते हैं, परन्तु बदलते समय में एक संयुक्त चरित्त का

शोधकर्ता (हिन्दी विभाग),  
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,  
वाराणसी

# वीक्षा

मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान की अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका

प्रधान संपादक

सदानन्द शाही

संपादक

बृजराज सिंह

कमल कुमार



लीकायत प्रकाशन





## शिवमूर्ति के गाँव का बदलता यथार्थ

प्रियका मिश्रा

भारतीय संस्कृति के पधार्थ का आधार ही ग्रामीण जीवन रहा है। जिसने भारतीय पधार्थ में साध, भारत मोरन और स्वार्थ रहित। जनसाधारण में बनने वाला प्रम है जो बदलने समय का पधार्थ और कष्ट को राजनीति भी है।

वेदक युग के आदर्श में धर्मधर्म के बट, राजनीति, समाज और राज्य व्यवस्था तबसे बदलता आया। सन् ६० के बाद प्रामाणिक संस्कृति में कई बदलाव आये, बाजार, सामाजिकता और औपनिवेशिकता के लक्ष्य का तब भी पधार्थ है। ग्रामीण जीवन का पधार्थ संतुलित हुआ। आकादी के बाद का भारत भी भी ग्रामीण भारत अपनी तथ्याय विद्वपताओं और

धर्मिकता दुआ है जो का कथाकार है 'शिवमूर्ति'। सन् ६० के बाद का बाद प्रमनद और गुरु का जीवन है अपने बदलते समय के साथ वह शिवमूर्ति का गाँव भी है। जैसे जो कहा गया है कि— 'अस्तित्व जिस वर्ग या वर्ग में पैदा होता है। उसी को जीवन, आदर्श व आकादीओं को अयोग्य कर लेता है और समाज में जो उसे मान-सम्मान, विरक्तता-पूजा, प्यार, हिंसा व पथ जो मिलता है, वही उसके अयोग्यता का हिंसा बन जाता है।'

शिवमूर्ति इसी बदलते समय के प्रामाणिक जीवन को जीने वाली है अतः इनके आचरण में भी बदलते समय के कष्ट पधार्थ को इनकी रचनाओं (कथा साहित्य) में देखा जा सकता है। आकादी के बाद के गाँव का रूप अलग है। इसी चिन्ता को उभरने अपनी रचनाओं— 'कसाईबाड़ा', तिरिया—चरितर, भारतवर्षम् सिरी उमर जोर, अफालन्द, कंकर—कम्प्यू आदि में संकलित किया है। इनके कथा उपन्यासों में अर्थ का प्रामाणिक संस्कृति का संका अलग मिलता है। प्रमनद के बाद आने वाला गुरु, राजनीति, राजर लोगी और शिवमूर्ति आदि ने कथाकारों के भारत गाँव को बहुविध रचिना का बचावर रखा है। उभयन पधार्थ को केवल खेतिर किसान का पधार्थ समझने के अर्थ, प्रामाणिक अर्थव्यवस्था में शामिल कई पधार्थ जैसे रवी—जीवन, जातिवाद, राजनीति अर्थव्यवस्था और आपसी ईर्ष्या आदि को कथाकारों का आधार बनाया।

शिवमूर्ति को एक अति प्रसिद्ध कहानी 'तिरिया—चरितर' है। जिसमें गाँव के जीवन का पधार्थ हर तरफ से दिखता है। एक लाधार स्त्री की शुरुवा पीड़ा को उम कदासी में व्यक्त किया गया है। जैसाकि लोकगीत सबसे बड़ी प्रभावी रगा रही है, परन्तु वही लोकगीत देश को सबसे कमजोर वर्ग के लिए रचा कर पा रही है। 'तिरिया—चरितर' को नयिका मिलती अपने पैरों पर खड़ा होना जो जानती है, परन्तु पुरुष वर्ग के यक्यूह को भेदना नहीं जानती है। परिवारिक संस्कार से बंधी रहती है, पितृसत्ता उसके सफल व्यक्तित्व के बनने में बाधक बनती है। एक स्त्री को आत्मनिर्भर बनने में रोकती है और जब इस सफलता को पाने के लिए घर से बाहर जाती है तो स्त्रियों के लिए भयानक, असुरक्षित, वास्तविक व चरित पर दाग पैदा करने वाला संसार के रूप में चिहित होती है।

'कसाईबाड़ा' और तिरिया—चरितर से लेकर 'आखिरी छत्तक' (उपन्यास) तक जो परिदृश्य है, वह समकालीन भारत का पधार्थ रूप है। परिवार, धान, कोर्ट, जाति—जाति, किसान, दलित धर्म, साम्प्रदायिकता, खेती—नौकरों पारिवारिक विघटन का जो एक सपट चित्र चिहित होता है जो असुंदर और दागदार है। अर्थव्यवस्था का हस्तगत प्रारम्भिक व्यवस्था से लेकर शिवा के गाँव में भी फैलता गया है, जिसे 'भारतवर्षम्' कहानी में प्रस्तुत किया गया है। पधार्थ को गठ तो दूसरों से अपेक्षित होते हैं, परन्तु बदलते समय में एक संयुक्त चरितर का

शोधकर्ता (हिन्दी विभाग),  
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,  
वाराणसी

Letter No. : NSI/ISSN/INF/2014/461

ISSN 2348-4624

# Śodha Mīmāṃsā

Vol. I

No. I

January-March 2014

Editor in chief  
Dr. Rakesh Kumar Maurya

Associate Editors  
Dr. S.K. Ojha      Dr. D.C. Pandey

Published by :  
Dr. Rakesh Kumar Maurya  
Varanasi, U.P. (INDIA)

शोध गीर्वासा के प्रथम अंक के प्रकाशन में संस्थापक-  
प्रो० मोहम्मद सलीम (पूर्व अध्यक्ष समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू  
विश्वविद्यालय, वाराणसी) का मार्गदर्शन रहा जिन्होंने मेरे हृदय से आभार  
प्रकट करता हूँ।

शोध गीर्वासा के प्रथम अंक को प्रकाशित कराने में डॉ० अनीश  
कुमार वर्मा का सराहनीय सहयोग रहा है, उनको मैं धन्यवाद देता हूँ।

शोध गीर्वासा के प्रथम प्रकाशन में सहायक सम्पादक  
डॉ० डी०सी० पाण्डेय, डॉ० सुशील कुमार ओझा के सहयोग के लिए  
हृदय से आभार प्रकट करता हूँ तथा प्रकाशन मण्डल के अन्य सभी सदस्यों  
के सहयोग के लिए हृदय से आभार प्रकट करता हूँ।

शोध गीर्वासा के प्रकाशन में अशुद्धियों को शुद्ध करने में  
डॉ० शाहीद अली, डॉ० डी०सी० पाण्डेय, डॉ० सुशील कुमार ओझा,  
श्री राज मौर्य एवं श्री अभिषेक मौर्य के प्रति हृदय से आभार प्रकट  
करता हूँ।

अन्त में सभी सम्मानित लेखकों, पाठकों एवं अन्य विद्वत्त्वजनों के  
प्रति हृदय से आभार प्रकट करते हुए प्रथम प्रकाशन के अवसर पर उनसे  
सुझाव, सहयोग एवं आशीष की कामना करते हैं।

नगरराज

मार्च 2014

  
सम्पादक

## अनुक्रमणिका

- |    |                                                                                                                                               |       |
|----|-----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|-------|
| 1. | लोक और शास्त्र का द्वन्द्व-काशी की<br>साहित्यिक परम्परा<br>डॉ० मनीष अरोरा                                                                     | 1-5   |
| 2. | "गीर्वासा" महिला सशक्तिकरण का<br>रक्षक या म्हाक<br>रीषिका यादव                                                                                | 6-9   |
| 3. | वैदिक युग में नारी<br>तृप्ति श्रीवास्तव                                                                                                       | 10-12 |
| 4. | संगीत शिक्षा का महत्व एवं उद्देश्य<br>आरती याही                                                                                               | 13-18 |
| 5. | संगीत शिक्षण प्रणाली-प्राचीन से आधुनिक<br>निधि श्रीवास्तव                                                                                     | 19-25 |
| 6. | रागावण में उल्लेखित स्त्री आभूषण<br>तृप्ति श्रीवास्तव                                                                                         | 26-29 |
| 7. | प्राचीन भारतीय मुद्रा प्रणाली में विदेशी तत्वों<br>का समावेश : हिन्द-यवन मुद्राओं<br>के सन्दर्भ में<br>अरविन्द कुमार दूबे एवं राजेश कन्नोजिया | 30-34 |
| 8. | सन् 60 की कहानियों में विदोही स्वर<br>प्रियका कुमारी मिश्रा                                                                                   | 35-38 |

## सन् 60 की कहानियों में विद्रोही स्वर

श्रियंका कुमारी मिश्रा

शोध छात्र, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी

किसी भी युग के परिदृश्य में अनेक स्थितियों का अग्रलोकन होता है, युग का इतिहास उसके समाज, साहित्य और राजनीति स्तर में जुड़ा रहता है। उसके सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों को जानने के लिए उस समय की साहित्यिक विद्या का अत्यधिक महत्वपूर्ण बिन्दु के रूप में देखा जाना चाहे। इन साहित्यिक विद्याओं में कहानी प्रारम्भिक साहित्यिक विद्या के साथ-साथ समाकालीन साहित्य की प्रतिष्ठित विद्या के रूप में इसलिए प्रतिष्ठित हुई कि अपने समय की जटिलता और जीवन की विविध परिस्थितियों को समझने से परखने और जीवन की संवेदनात्मक स्थिति को यथार्थपूर्ण ढंग पर अभिव्यक्त कर सके और जिसे रचनाकार अपनी अनुभव की सीमा में प्रमाणिकता से समेट ले।

सन् 60 की कहानियों में मानव समाज और मानव संबंधों का जो स्वरूप उभरकर आया है, वो अपने आप में बदलाव की दिशा में लौ के समान था। इससे पहले के कथासाहित्यों में नास्तिक विगाहन, धार्मिक अंधलों का परिदृश्य, समाज में आदर्शवादी स्वरूपों की बात कही भी गई और प्रकाशित भी हुई।

प्रेमबंद या प्रेमचन्दयुगीन हिन्दी कथा साहित्य में जो आदर्शवाद हमें दिखाई देता है वही उसका सामाजिक आधार है। 'पंच ब्रह्मेश्वर', 'नमक का दोगा या 'बुढ़ी कान्ही' से लेकर 'सया सैर मेहूँ', 'पूस की रात या कफन कहानी में प्रतिरोध का स्वर नहीं दिखता जबकि आजादी के स्वर्ण का हो दशक बीतने जा रहा होता है, ऐसा क्यों? सन् 60 के दौर की कहानियाँ 'अवहानी प्रवृत्तियों से छाई हुई हैं जहाँ व्यक्ति केतना प्रभाव होती गयी। यह दौर आगे-आगे कहानी का स्वर बदला। रवीन्द्र कालिया ने लिखा है कि—

“वास्तव में सन् 60 के बाद की कहानी ने स्वीकृत कथा तत्वों चालू नुरखी और कर्मल की संघाम अग्रवेलना करके आगे अनुभव की प्रमाणिकता पर अधिक बल दिया है। पठन बीते हुए काल की कहानी है न सम्भावना के काल की इसलिए इतने सुवृहत् भी नहीं है, जो सुन्दरे जीवन का काल्पनिक

ISSN 2249-605X

*15 Days*

Vol. 66

An International Research Journal Related  
to Higher Education for all Subject.

**EDITOR IN CHIEF**

**MUKESH KUMAR MALVIYA**

ASST. PROFESSOR

LAW SCHOOL, BHU, VARANASI (U. P.)

MO. : 91-9094651125

**SPECIAL MEMBER OF  
ADMINISTRATION**

**SHRI SHYAM BABU PATEL** DEPUTY REGISTRAR  
& CAO (S&P) BANARAS HINDU UNIVERSITY VARANASI

**MEMBERS OF EDITORIAL BOARD**

**DR. MONA PURI** HOD, LAW DEPARTMENT,  
BI, BHOPAL.

**DR. ARCHANA BANJA** HOD, SCHOOL OF LAW,  
DAVV, INDORE.

**SHRI P. T. SHENI** HOD, LAW DEPARTMENT,  
DLSVV, GAZI.

**DR. ANRENDRA KUMAR MISHRA** HOD, LAW  
DEPARTMENT, DDU GORAKHPUR.

**DR. SHERNAJ YADAV** HOD, LAW DEPARTMENT,  
MUVV, BAREILLY.

**DR. VANI BHUSHAN** FORMER HOD, PG  
DEPARTMENT OF LAW, UNIVERSITY OF PATNA.

**DR. J. K. JAIN** PRINCIPAL, NDM GOVT. LAW  
COLLEGE, INDORE.

**DR. R. K. MURALI** ASSO. PROFESSOR, LAW  
SCHOOL, BHU, VARANASI.

**DR. AHMED NASEEM**, ASST. PROFESSOR, LAW  
DEPARTMENT, DDU, GORAKHPUR.

**SHRI ROSHAN LAL** ASST. PROFESSOR, LAW  
DEPARTMENT, UNIVERSITY OF ALAHHABAD.

**PATRON**

**PROFESSOR SUKHPAL SINGH**

VICE CHANCELLOR, Hidayatullah NATIONAL  
LAW UNIVERSITY, RAIPUR.

**SPECIAL RESEARCH SCHOLARS EDI.  
BOARD**

**PRIYANKA VAIDYA** ASSISTANT PROFESSOR GOVT.  
P. G. COLLEGE WALAGARIH DISTT. SOLAN (H. P.)

**SHRI RANA NAVNEET ROY** JUNIOR RESEARCH  
FELLOW, LAW SCHOOL, BHU, VARANASI.

**EDITORIAL ADVISORY BOARD**

**DR. SANTOSH KUMAR TIWARI** ASST. PROFESSOR  
LAW FACULTY, NDU UNIVERSITY, ALAHHABAD.

**DR. JADHAV SUNIL GULAB SINGH**, ASST. PROF.,  
YADHWANT COLLEGE, NASED, (MH).

**DR. SAMTA JAIN** ASST. PROFESSOR (ECONOMICS),  
MATA GURJI WOMENS COLLEGE, JALALIYUR.

**DR. AMIT KUMAR PANDEY** HOD, DEPARTMENT,  
BHU VARANASI.

**DR. DEEPAK SHARMA** ASST. PROFESSOR PER JAIN  
COLLEGE OF EDUCATION, AMBALA CITY.

**DR. SHARAD DHAR SHARMA** SENIOR RESEARCH  
ASSOCIATE BHU VARANASI.

**DR. SURENDRA PANDEY**, DEPARTMENT OF HINDU,  
BHU VARANASI.

**SHRI SUNIL KUMAR** LAW SCHOOL, BHU, VARANASI.

**SHRI QILF KUMAR** ASST. PROFESSOR, LAW  
FACULTY, NDU UNIVERSITY, ALAHHABAD.

**KOMAL PRASAD YADAV** ASST. PROFESSOR, LAW  
FACULTY, NDU UNIVERSITY, ALAHHABAD.

**KU. ANIMA SHUKLA** ANISHA COLLEGE OF  
NURSING, JALALIYUR.

## NATIONAL JUDICIAL COMMISSION- NEED OF THE HOUR

\*Suman Tiwari

Assistant Professor, Law, DMS Unnain University, Dehradun India)

Bulboox Hostel, Room Number-1K, Ball Number-217, Kailash Road, Dehradun, (UK) Phone Number-995669118

## Introduction

The National Judicial Commission is related to the judicial appointments in higher courts i.e. Supreme Court and High Court and transfer of judges from one high court to another high court. The judicial appointment commission Bill<sup>1</sup> 2013 sought to replace the present collegium system of appointment to the post (given in Second Judges transfer case in 1993 and elaborated in detail in third judges transfer case in 1998) by judicial appointment commission, through giving it constitutional status and inserting Art 124A and 124B dealing with appointment and function respectively. For the sake of knowledge it is pertinent to mention here that before coming into force the collegium system judicial appointment is dealt under Art 124(2)<sup>2</sup> and 217(1)<sup>3</sup> under which president of India appoint Supreme Court and High Court judges respectively after consulting with the legal luminaries mentioned in the Art concerned. The central issue of democratic accountability has either not address or swept under the carpet that is the reason why the collegium system needs to be scrapped. If we go thoroughly to the provision of the Constitution we will find that the principle of separation of power with check and balance is provided under the constitution unlike US Constitution. But only establishment of the commission will not serve the purpose as after taking due account to these kind of institutions prevalent in various countries the suited one should be considered because unless and until the concerns of composition is properly dealt with, the objective of fair appointment to these post cannot be achieved. The composition of the commission should be as in which neither the executive nor the judiciary ought to be in a position to dominate the decision though the member from both branch should be added along with other legal luminaries of outside i.e. member of bar, law professor and even laymen.

## CONSTITUTIONAL MANDATE-

Art 124(2) and 124(3) deals with appointment and qualification of Supreme Court judges whereas Art 217 deals with appointment and qualification of High Court judges. However the general practice was to appoint the senior most judge to be the chief justice because this process was free from any bias but this practice was not followed in the appointment of justice A.N Roy and justice Begs appointment. Justice Roy was appointed superseding justice Shelke, Hodge and Crouer. Again justice Beg was appointed superseding justice Khanna. However after retirement of justice Beg senior most judge justice Chandrabud was appointed as Chief Justice of India<sup>4</sup>. Since then again the rule of seniority has been followed in the matter of appointment of CJ of India. Pertinent that in over six decades of history of the apex court, single chunk of its judges has come from the category i.e. CJ or senior most judges of HC only five noted distinguished jurist have got the distinction of being directly appointed as SC judges, the last being justice a. Santosh Hishoda in 1999.<sup>5</sup>

## COMING OF COLLEGIUM SYSTEM-

After seeing the failure of the executive to give proper reasons for appointment of justice A.N Roy and justice Beg superseding senior judges, for the first time in *Shamsher Singh v State of Punjab*<sup>6</sup> the SC stated that appointment to the SC or HC must have approval of the CJ of India. The Emergency and the post emergency era witnessed attempts by the executive to muzzle the judiciary, it was to check this erosion of the independence of the judiciary that the collegium system was evolved, by which the senior most judge of the SC and HC select judges with the executive merely being consulted<sup>7</sup>. So the interpretation of the term consultation used in art 124 and 217 came for consideration firstly in *Sankuchald Shetti*<sup>8</sup> case in which it was specifically held that the term consultation does not means concurrence, as the president is having right to differ from their views and may take contrary views. Once again the same issue

13. सुप्रीम कोर्ट के जजने में विवाद की प्रतिक्रिया

50-51

\*स्नेहा सुमर यादव

14. सर्वोच्च और उच्च न्यायालय में नयी नई बदलावी सुविधा

52-53

\*प्रदीप कुमार शर्मा

15. भारतीय संसिद में नयी विधायक और नयी प्रक्रिया

54-56

\*प्रियंका सुमारी शिवा

\*\*\*\*\*

ISSN. 2349-1205

# वैचारिकी

बहुआयामी शोध पत्रिका

अर्द्धवार्षिक

अंक-20

जुलाई 2019

विशेषांक

“स्वतंत्रता सेनानियों की परिकल्पना और वर्तमान भारत”



रामजी प्रसाद सिंह ग्रामीण विकास सामाजिक एवं आर्थिक  
शोध संस्थान, आरा के तत्वावधान में प्रकाशित ।

## अनुक्रमणिका

सम्पादनकार्य		पृ.
1. भारत छोड़ो आन्दोलन: आजादी की निर्णायक लड़ाई	: डॉ० शशि कुमार सिंह	1
2. भारत का स्वधीनता-संग्राम और स्वतंत्रता सेनानियों के सपने: एक सर्वेक्षण	: डॉ० जकील उज्जामा अंसारी	4
3. गांधी का सपना: गाँव एवं ग्रामस्वराज्य आज के संदर्भ में	: प्रो० पारस नाथ सिंह	8
4. नारी स्वतंत्रता और महात्मा गांधी	: डॉ० अंजू सिंह	11
5. भारतीय लोकतंत्र के प्रणेता: पीड़ित जनवाहक चाल नेहरू	: डॉ० ज्योति सिंह	17
6. भारत का औद्योगिकरण: एक सार्थक पहल	: डॉ० पूर्णिमा राय	20
7. स्वतंत्रता सेनानियों का सपना: इन्दिरा गांधी का दृष्टिकोण	: डॉ० उमा शंकर सिंह	23
8. राजीव गांधी और स्वतंत्रता सेनानों सम्मान	: डॉ० अजय उपाध्याय	27
9. स्वराज्य की चुनियार - नयी तालीम	: प्रो० इन्द्या नन्द सिंह	29
10. आज हम गांधीजी को कितना मानते हैं?	: प्रो० (डॉ०) बलराम सिंह	39
11. आज गांधी कितने प्रासंगिक	: डॉ० सरला	43
12. भारत छोड़ो आन्दोलन: ऐतिहासिक विश्लेषण	: डॉ० सुप्रिया लक्ष्मी मिश्रा	45
13. 15 अगस्त	: बजरंग चलो सिंह	47
14. Role of X-Ray and U.S.G. in Neonatal Intussusception	: Dr. Balajee Shrivatava	49
15. Components of Integrated Child Development Services (ICDS) Programme: An Evaluation	: Dharmendra Kumar Pandey	50



- |                                                                                   |                                             |    |
|-----------------------------------------------------------------------------------|---------------------------------------------|----|
| 16. Social Security: Needs of Informal Workers                                    | Sunil Kumar                                 |    |
| 17. ब्रिटिश शासनकाल में कृषि                                                      | दिनु चर्मा प्रसाद<br>डॉ० विमल कुमार सिंह    | 3  |
| 18. बिहार में पंचायती राज का विकास और महिलाओं                                     | ज्योति कुमारी गुप्ता<br>डॉ० विमल कुमार सिंह | 4  |
| 19. ब्रिटिश मू-राजस्व व्यवस्था का भारतीय ग्रामीण जीवन पर प्रभाव                   | दिनु चर्मा प्रसाद<br>डॉ० विमल कुमार सिंह    | 5  |
| 20. स्वामी विवेकानन्द: यात्रा, और शिकागो भाषण                                     | सोनी कुमारी<br>डॉ० दिग्विजय सिंह            | 6  |
| 21. भारतीय राजनीति में बाबू जगजीवन राम का योगदान                                  | ✓ मानु प्रताप सिंह<br>डॉ० सीमा पटेल         | 7  |
| 22. संस्कृति, शिक्षा एवं धर्म के संदर्भ में स्वामी विवेकानन्द का दर्शन: एक विवेचन | सोनी कुमारी<br>डॉ० दिग्विजय सिंह            | 8  |
| 23. भारतीय लोकतंत्र में चुनावी प्रक्रिया: एक विश्लेषण                             | डॉ० अशोक कुमार सिंह (मोन्ड)                 | 9  |
| 24. भारतीय चुनाव प्रणाली और विकास: एक समीक्षा                                     | सुनील कुमार                                 | 10 |

## भारतीय राजनीति में बाबू जगजीवन राम का योगदान

भानु प्रताप सिंह\*

डॉ० सीमा पटेल\*\*

भारतीय राजनीति में बाबू जगजीवन राम का महान योगदान रहा है। उनका सम्पूर्ण जीवन इतिहास, सम्मानपूर्वक समाज की स्थापना, पॉइंट-कॉन्ट्रिपॉइंट गरीब लोगों के कल्याण व देश के सार्वभौमिक विकास में लगा रहा। वे जातिवाद, सामाजिक बहिष्कार, पैरधराचरी, नाईसाफी व गरीबों के खिलाफ अतन्त्र लड़ते रहे। उन्हें भारतीय राजनीति का शिल्पी व चापकूत कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। बाबू जगजीवन राम इन महान राजनीतिज्ञों की कड़ी हैं जिसमें डॉ० भोमराव आंधेकर, डॉ० राममनोहर लोहिया, डॉ० राजेन्द्र प्रसाद, मौलाना अब्दुल कलाम आजाद व स्वर्णर पटेल शामिल थे। अपने जीवन काल में बाबू जगजीवन राम ने जो महान उपलब्धियाँ हासिल कीं उनकी इन महान उपलब्धियों को भाँकी पाँटों हमेशा श्रद्धा के साथ देखेंगे। बाबू जगजीवन राम का सम्बन्ध केवल इतिहास-पिछड़ा से नहीं था बल्कि सम्पूर्ण सर्वोच्च समाज से था। उन्होंने हमेशा भूखे, बेरोजगार-लाचार, कमजोर, दुःखी व अल्पसंख्यकों को आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक न्याय व ईसाई दिलाने के लिए उन्होंने लगातार अभियान चलाया। वह भारत को अखण्ड, मजबूत, समृद्ध व सुन्दर बनाने के लिए कृतसंकल्पित थे। कृषि, छात्र, श्रम, सहकारिता, रेलवे, संघार, परिवहन और रक्षा मंत्रालयों को यागद्वारा उनमें उस समय सीपी गयी जब ये विभाग भँवकर समस्याओं से ग्रस्त थे। उन्होंने इन विभागों का कार्याकल्प पूरी ईमानदारी, निष्ठा व कर्मठता के साथ किया जिसे इतिहास कभी भुला नहीं सकता।

बाबू जगजीवन राम का जन्म 5 अप्रैल 1908 को बिहार के साहाबुद सम्राटि भोजपुर जिलान्तर्गत आरा के चंदवा नामक ग्राम में हुआ था। उनके पिता का नाम शंभू राम व माता का नाम श्रीमती चरन्ती देवी था। उन्होंने 1914 में आरा के प्राथमिक स्कूल से प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त की। 1920 में जगजीवन बाबू ने आरा के आरावल मध्य विद्यालय में दाखिला लिया। 1922 में आरा टाउन हाई स्कूल में प्रवेश किया। पढ़ाई के दौरान उन्हें सुआइज़न व जातिवाद का कटु अनुभव हुआ। हिन्दू छात्रों द्वारा उनके घड़े से पानी पीने का जोरदार विरोध किया गया। विरोध के मद्देनजर प्रधानाध्यापक ने उनके लिए अलग घड़े की व्यवस्था की। बाबू जगजीवन राम की भावना को काफी ठेस लगी और उन्होंने अलग घड़े से पानी पीने से इनकार कर दिया। उन्होंने विरोध स्वरूप हिन्दू छात्रों के लिए अलग से रखे गये घड़े को फोड़ दिया। उनका एकसदर समाज से जातिवाद व सामाजिक बहिष्कार को समाप्त कर समतापूर्ण समाज का निर्माण करना था। अनाथ: उन्हें हिन्दू घड़े से पानी पीने में विवक्ष्य प्राप्त हुई। सन् 1925 में आरा छात्र सम्मेलन में उनके द्वारा संस्कृत में दिने गये ओजस्यो भावार्थ ने चं० सदन मोहन गालवोय को काफी प्रभावित किया और उच्च शिक्षा हेतु उनमें काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में आर्म्भित किया गया। सन् 1925 में उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा गणित एवं संस्कृत में शत-प्रतिशत अंक प्राप्त कर उत्तीर्ण की।

\*सोध एवं इतिहास विभाग, डॉ० कुंजर सिंह विश्वविद्यालय, आरा।

\*\*सोध, निर्देशिका, एमएचसीट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, एम.के.पी. कॉलेज, भुवनेश्वर।

बाबू जगजीवन राम ने कुर्छट 1926 में भारतीय हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रवेश किया। उन्हें दो वर्षों का अध्ययन करने का मौका मिला। लेकिन महात्मा गांधी के आन्दोलन में सक्रिय होने से उन्होंने कुर्छट से बाई ले जाने के लिए 1928 के दौरान ही अध्ययन समाप्त कर दिया। प्रवेश के अनेक वर्षों बाद ही उन्होंने 1923 में भारतीय हिन्दू विश्वविद्यालय से आई.एस्.सी. परीक्षा उत्तीर्ण की और उसी वर्ष अलाहाबाद में मुस्लिम विश्वविद्यालय में अधिष्ठाता लिये। सन् 1931 में जो.एल्.सी. की परीक्षा कलकत्ता विश्वविद्यालय से उत्तीर्ण की।

बाबू जगजीवन राम का राजनीति में प्रवेश 1 दिसम्बर 1928 को कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में हुआ। इस अधिवेशन में उनका राजनीतिक सम्पर्क सुभाषचन्द्र बोस, ए.ए.एम. राम, चन्द्रशेखर आजाद, मन्मथ नाथ गुप्त व डॉ॰ विद्यालाल राय जैसे देश के सफल साम्यवादी, प्रतिकारी व कांग्रेस नेताओं से स्थापित हुआ। सन् 1929 में अखिल भारतीय कांग्रेस समिति के लार्ड अधिवेशन में भाग लिया। लार्ड कांग्रेस के अध्यक्ष डॉ॰ जवाहरलाल नेहरू के साथ सबसे उनका सम्पर्क स्थापित हुआ। 1932 में गांधीजी द्वारा दलितों के पुस्तक प्रतिनिधित्व के खिलाफ आभारण अनशन का बौद्धिक विरोध किया और उन्हें बहुत विरोध पत्र लिखा। 1932 में ही पटना में आयोजित विहार प्रांतीय सम्पूर्ण विरोधी सम्मेलन में डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद के साथ भाग लिया और अपने उद्योगों से उन्हें बचाव प्रभावित किया। सन् 1933 में व विहार प्रदेश हरिजन मजदूर संघ के संजी बने। उसी वर्ष बिहार में अहमद खानाकारों के भूकम्प पीड़ितों को सहायता देने के लिए प्रसिद्धि के सन् 1934 में गांधीजी के साथ किया। सन् 1934 में ही उन्होंने अखिल भारतीय दलित वर्ग संघ व विहार मजदूर संघ को नीचे डालते। उन्होंने इसी वर्ष पूरे के जगन्नाथ मंदिर, काशी विश्वनाथ मंदिर, बनारस में अशुभों के प्रवेश-आंदोलन का भी सुभास्य किया। सन् 1935 में वे कानपुर में आयोजित राष्ट्रीय दलित वर्ग एकता आन्दोलन के सचिव निर्वाचित हुए। 19 अक्टूबर 1935 को राँची में ईगण्ड कमीशन के सहाय दलितों के महाधिकाय व उनके शिक्षा के अधिकार को मांगे की।

बाबू जगजीवन राम 1936 में विहार विधान परिषद के सदस्य निर्वाचित हुए। 1937 में वे विहार विधान सभा में चुने, मध्य राँहाबाद ग्रामीण क्षेत्र से निर्वाचित किया गया। गांधीजी ने उनसे प्रभावित होकर उन्हें अमूल्य रत्न की संज्ञा से विवृणित किया। 1937-38 में वे विहार कांग्रेस मंत्रिमंडल में संसदीय सचिव नियुक्त हुए और विकास, सार्वजनिक और उद्योग विभाग के प्रभारों बनीये गए। सन् 1938 में उन्होंने अंडमान के कैदियों और दलितों के विरोध के सवाल पर विहार मंत्रिमंडल से त्यागपत्र दे दिया। सन् 1940 में बाबू जगजीवन राम विहार प्रदेशीय कांग्रेस समिति के संजी निर्वाचित हुए। सन् 1942 में मेरठ में आयोजित अखिल भारतीय दलित वर्ग संघ के आठम वार्षिक अधिवेशन का सभापतित्व किया। भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान 19 अगस्त, 1942 को गिरफ्तार किये गये और 5 अक्टूबर, 1943 को वे जेल से रिहा किये गए। 2 सितम्बर, 1946 को वे जवाहर लाल नेहरू की अन्तर्गत सरकार में सभ्य मंत्री बनीये गये और इस पर वे 13 मई, 1952 तक बने रहे। वे 1947 में नई दिल्ली में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय क्षम संगठन के एसाभावी देशों के क्षेत्रीय अध्यक्ष चुने गए। सन् 1950 में वे कांग्रेस के केंद्रीय संसदीय मंडल के सदस्य बने। सन् 1952 में प्रथम लोकसभा चुनाव विहार के सासाराम संसदीय क्षेत्र से निर्वाचित हुए। वे 13 मई 1952 से लेकर 7 दिसम्बर 1956 तक भारत सरकार के संचार मंत्री रहे। संचार मंत्री के रूप में वे सरकारी हवाई यातायात का राष्ट्रीयकरण किया और डाक-तार व दूरभाष सेवाओं का सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों में विस्तार किया। वे 7 दिसम्बर 1956 से 17 अप्रैल तक परिवहन व रेल मंत्री रहे। सन् 1957 में उन्होंने द्वितीय बार सासाराम संसदीय क्षेत्र का प्रतिनिधित्व किया। बाबू जगजीवन राम 17 अप्रैल 1957 से 10 अप्रैल 1962 तक भारत सरकार के रेल मंत्री पद पर रहे। उन्होंने रेलमंत्रियों के रूप में रेलवे का जापूनीकरण के साथ इसका विस्तार देश के विभिन्न भागों में किया। सन् 1962 में तृतीय बार सासाराम लोकसभा संसदीय क्षेत्र का प्रतिनिधित्व किया। 10 अप्रैल 1962 से 31 अगस्त 1963 तक भारत सरकार के परिवहन व संचार मंत्री पद पर बने रहे। उन्होंने काँग्रेस संगठन को सुदृढ़ करने के मकसद से कामगज प्लान के अन्तर्गत सरकार से त्यागपत्र दे दिया। 24 जनवरी 1966 से 13 मार्च 1967 तक वे भारत सरकार के श्रम, संज्या और पुनर्वास विभाग के मंत्री रहे। उन्होंने 1967 में सासाराम संसदीय क्षेत्र का चौथी बार प्रतिनिधित्व किया। वे 13 मार्च, 1967 से 27 जून 1970

एक भारत सरकार के खाद्य, कृषि, सामुदायिक विकास व सवर्वांगी विभाग के मंत्री रहे। उन्होंने 1969 से 1971 तक भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष पद को सुशोभित किया। सन् 1971 में साम्प्रदायिक संघर्ष क्षेत्र से संसदीय क्षेत्र निर्वाचित हुए। 27 जून 1970 से 10 अक्टूबर 1974 तक वे भारत सरकार के प्रतिरक्षा मंत्री रहे। सन् 1972 में उन्हें कानपुर विश्वविद्यालय द्वारा "डॉ० ऑफ सटन्स" की मानद उपाधि से सम्मानित किया गया। 10 अक्टूबर, 1974 को वे भारत सरकार के खाद्य मंत्री बनावे गये। 19 जनवरी 1977 को उन्होंने कांग्रेस एवं प्रोग्रेसिव फ्रंट में त्यागपत्र दे दिया और 5 फरवरी 1977 को प्रजासत्तव कांग्रेस का गठन किया। 25 मार्च, 1977 से पुनः साम्प्रदायिक संघर्ष क्षेत्र से छाती चार निर्वाचित हुए। 1 मई, 1977 को उन्होंने प्रजासत्तव कांग्रेस का जनता पार्टी में विलय कर दिया। 28 मार्च 1977 से 24 जनवरी 1979 तक वे पुनः देश के रक्षा मंत्री रहे। सन् 1979 में उन्हें भारत सरकार का उपाध्यक्षमंत्रि बनना पड़ा। सन् 1980 में साम्प्रदायिक संघर्ष क्षेत्र का खाती चार प्रतिनिधित्व किया। इसी वर्ष उनका जनता पार्टी से मोड़भंग हो गया और पहली बार विपक्ष में बैठे। 5 अगस्त 1981 को उन्होंने कांग्रेस जे० का गठन किया एवं उनके अध्यक्ष चनाये गये। दिसम्बर 1984 में वे पुनः साम्प्रदायिक संघर्ष क्षेत्र से अठवीं बार कांग्रेस जे० को टिकट पर समाज चुने गये। 6 जुलाई 1986 को उनका नई दिल्ली के डॉ० राममोहन लीला आश्रम में देहावसान हो गया।

इस प्रकार 1936 को विश्व विद्यालय परिसर व 1946 को संविधान सभा से लेकर मृत्यु पर्यन्त 1986 तक साम्प्रदायिक संघर्ष क्षेत्र का 40 साल तक लगातार संसद का प्रतिनिधित्व कर विभिन्न प्रतिष्ठान बनना। इस दौरान भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों को सुशोभित किया। उन्होंने रेलमंत्री, धर्म-योजना मंत्री के रूप में लाखों योजनाओं का मूकन कर बंटोलाओं को योजना उपलब्ध कराया। शिक्षण, स्वास्थ्य, परिवहन, डाक-संचार क्षेत्रों में नये युग व ऊर्ध्व की शुरुआत की। भारत को साक्षर संकट से मुक्त कराया और अन्धव्य अन्धता निर्मूलता को समाप्त किया। रक्षा मंत्री के रूप में बंगला देश मुक्ति आंदोलन को नयी राशि प्रदान की और बंगला देश को अन्धपुष्ट में अनुसूचित योजना दिया एवं भारत को विकसित राष्ट्र बनाया। भारत-पाक युद्ध को निर्णायक रूप में पहिचान और पाकिस्तान पर ऐतिहासिक विजय प्राप्त करायी। स्वतंत्रता आंदोलन में सुभाषचंद्र बोस तथा कांग्रेस को एक नयी दिशा और ऊर्ध्व प्रदान की। साम्प्रदायिक जड़ता को समाप्त करने और समाज मूलक समाज के निर्माण में अनुसूचित योजना दिया। राष्ट्र व समाज तथा देश की राजनीतिक, साम्प्रदायिक आर्थिक व शक्ति तथा धार्मिक सम्भावना को क्षेत्र में किये गये महान योजनाओं को लिए राष्ट्रीयकरी व भारत सर्वत्र उनको चार रसोया।

#### संदर्भ:

1. युक्ति के अन्तर्गत - १. लक्ष्मण प्रसाद
2. सन् 1970-71 का संसदीय - 18 दिसम्बर 1983, 1972 काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, 1968.
3. अधिपतिपत्रिका दिल्ली।
4. संसदीय कार्य-विभाग - 1952, 1967, 1971, 1977, 1984.
5. आज - अक्टूबर 1981
6. भारतीय - जनवरी 1979.

ISSN 0975-119X

UGC-CARE GROUP I LISTED

वर्ष 12 अंक 5 सितंबर-अक्टूबर 2020

# दृष्टिकोण

कला, मानविकी एवं वाणिज्य की  
मानक शोध पत्रिका



IMPACT FACTOR : 5.051

India's Leading Refereed Hindi Language Journal

उत्सवकार्ड के राष्ट्रीय स्तरों से जारी तीर्थों में हो रहे फलान में महिलाओं के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर प्रभाव का एक अध्ययन -डॉ. इंदिरा मिश्र शर्मा	896
राष्ट्रीय प्रवास एवं होली का त्यौहार-डॉ. संजय कुमार मिश्र	904
संस्कृत एवं भौतिक: वर्तमान समय निर्माण के महत्वपूर्ण समय- संस्कृत साहित्य के अंतराल में-डॉ. देव प्रकाश	907
महिला अधिकार : जीवित एवं सांस्कृतिक-रजनी	911
भारतीय अर्थशास्त्र में शेयर बाजार का योगदान-कचुंडा शंकर	914
सामाजिक विमर्श के कथ-साहित्य में आर्थिक चेतना-डॉ. विठ्ठल शर्मा	917
महात्मा गांधी के उत्सव का राष्ट्रीय स्तर-स्वातंत्र्य-डॉ. निधि रायदास; संजय प्रसाद	921
संस्कृत-संस्कृत शोध का अर्थ-डॉ. कृष्ण प्रसाद मिश्र	924
कृष्ण संस्कृत के अर्थ-डॉ. 'चन्द्र' में चन्द्र के जीवन संसार की नार्मिक अभिव्यक्ति-डॉ. गौरीकांत प्रसाद जायसवाल; रजनी मिश्र	927
साहित्य एवं परम्परा का अर्थ-डॉ. अशोक कुमार शर्मा	931
अध्यात्म एवं सूचना संसार एवं सूचना संसार प्रौद्योगिकी: सिलचरपुर जिले के छात्राध्यक्षों के संदर्भ में एक अध्ययन -विद्याभूषण शर्मा; डॉ. संजीव कुमार शर्मा	934
जिला सिलचरपुर के सामाजिक विद्यालयों के समान्य एवं अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों की आकांक्षा धार का अध्ययन-डॉ. विद्या मिश्र	938
अंतर्राष्ट्रीय-अनुसंधान (अंतर्राष्ट्रीय) : विद्यार्थ्यात्मक अध्ययन-डॉ. इन्द्रजीत शर्मा	942
श्रीमती शर्मा के साहित्य में आत्मा की कृषि व्याख्या-डॉ. जयम कुमार मिश्र	947
श्रीमती शर्मा की साहित्य में आकाशमय इमेजिनरी तथा चेतना-डॉ. अरवि	950
साहित्यिक इतिहास के धार्मिक वैचारिक प्रति चिन्तन-डॉ. मीनाक्षी शर्मा; मीनाक्षी	955
संस्कृत में स्त्री चिन्तन चिन्तन का रूप-डॉ. सुधीर कुमार	959
इंग्लैंड की साहित्यिक के अर्थ-डॉ. मधुसूदन-डॉ. सिन्धु शर्मा	961
संस्कृत-संस्कृत साहित्य की रचना-डॉ. दिनेश कुमार	965
विद्या में जीवित-संस्कृत संस्कृत-डॉ. सीमा शर्मा; मनीष कुमार शर्मा	968
सूचना का अधिका अधिका 2005 का अर्थ-डॉ. सुधीर-डॉ. विक्रम मिश्र	972
साहित्यिक संस्कृत का अर्थ-डॉ. एक अध्ययन-सुधीर शर्मा; डॉ. सीमा शर्मा	978
परम्परागत स्तर के राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय विद्यार्थियों के सामाजिक परिपक्वता का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति पर प्रभाव का अध्ययन -डॉ. प्रमोद शर्मा; विद्याशंकर शर्मा	979
अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की महिलाओं की शैक्षिक संस्कारों का तुलनात्मक अध्ययन-डॉ. रजनी मिश्र	983
संस्कृत साहित्य के संस्कृत में संस्कृत शोध का महत्व एवं अर्थ-डॉ. रमेश कुमार	986
राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं के सामाजिक जीवन में सांस्कृतिक संस्कृतों का योगदान-डॉ. सुधीर शर्मा	990
सांस्कृतिक स्तर पर अध्ययन एवं विद्यालय स्तर पर विद्यार्थियों के सामाजिक जीवन का तुलनात्मक अध्ययन-रजनी शर्मा	993
भारतीय संस्कृति एवं संस्कृति के अर्थ-डॉ. मधुसूदन शर्मा; डॉ. सुधीर शर्मा	997
सिलचरपुर की सुधीर शर्मा शोध में होने वाले शोधों के अर्थ-डॉ. मधुसूदन शर्मा; डॉ. सुधीर शर्मा	1002
अध्यात्म की विद्यार्थियों एवं अधिका की चेतना का अर्थ-डॉ. रमेश शर्मा	1005
साहित्य में परम्परा एवं 'साहित्य' की भूमिका-डॉ. सुधीर शर्मा	1008
श्रीमती शर्मा साहित्य की अर्थ-डॉ. सुधीर शर्मा शर्मा	1011
अधिका विद्यार्थियों की जीवित-संस्कृत का एक अध्ययन-डॉ. मधुसूदन शर्मा	1014









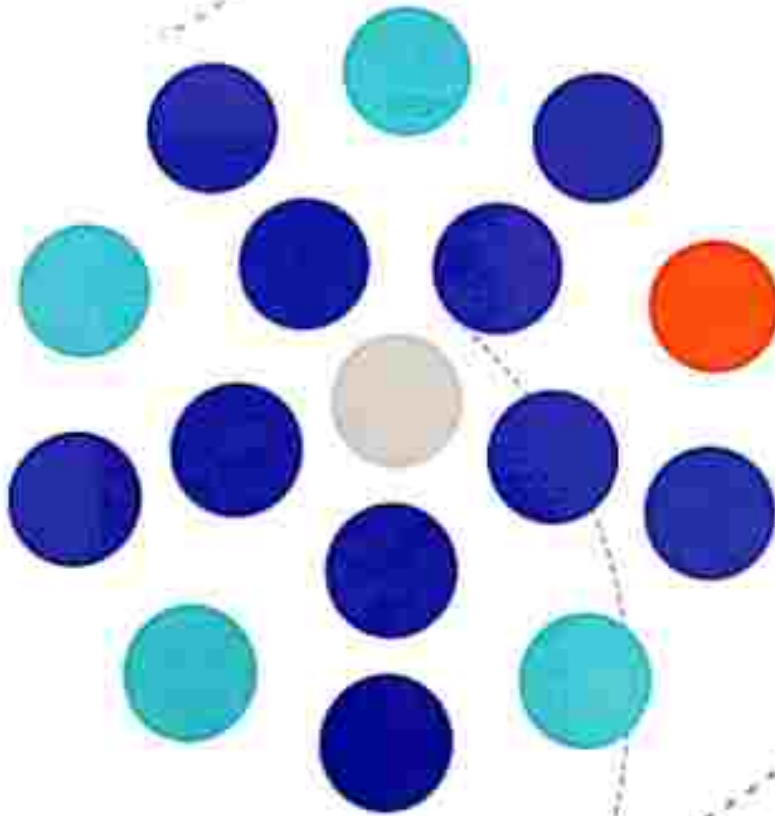
ISSN 0975-119X

UGC-CARE GROUP I LISTED

वर्ष 11 अंक 5 सितंबर-अक्टूबर 2019

# दृष्टिकोण

कला, मानविकी एवं वाणिज्य की  
मानक शोध पत्रिका



India's Leading Refereed Hindi Language Journal

कहानी की कहानियों में गणित मध्यमार्थी जीवन मूल्य-संप्रदाय सिंह; डॉ० प्रमोद कुमार सिंह	927
लगातार मानस में प्रख्यात और उत्साह का वैशिष्ट्य-विशाल मिश्र	932
हिन्दी उपन्यास; समाज में नवी की जगह-हरिचन्द्र; डॉ० प्रमोद कुमार सिंह	935
दुर्गा प्रेमचंद के कथा-साहित्य में किसानों की राजनीतिक स्थिति-कमल यादव; डॉ० प्रमोद कुमार सिंह	938
समकालीन कहानी साहित्य : एक अवलोकन-डॉ० प्रेमचंद चन्दाल	942
सांस्कृतिक स्वास्थ्य में संगीत चिकित्सा की भूमिका-डॉ० रंजित काजपुरी	946
संगीत साहित्य की रक्षा और दिशा-डॉ० अनिल कुमार सिंह	949
जलवा और अजमेर जिले की अर्थव्यवस्था में पर्यटन उद्योग की भूमिका-डॉ० अशु कला; सुशील कुमार मीणा	953
डॉ० सोमदेव अम्बेडकर का सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक दर्शन; एक विस्तारण-डॉ० अरुण कान्त गौतम	956
कृष्ण संकायों की कहानियों में मूल्यसोध-डॉ० रेणु गुप्ता	959
इतिहासिक स्तर पर हिंदी मुलेखन कोषाल के प्रोत्साहन की आवश्यकता एवं महत्व-अश्विनी कुमार पांडेय	963
धार्मिक पाठकों के संदर्भ में भारतीय मनोविज्ञान की भूमिका-डॉ० रंजित कुमार पाण्डेय	968
जनजागर, सूचीकरण और सामान्यवाद की पहचान करती कहानियाँ-डॉ० कृष्ण प्रताप सिंह	971
मिडिले विलासपुर के माध्यमिक विद्यालयों के सामान्य एवं अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों की आकांक्षा स्तर एवं शैक्षिक उपलब्धि के संबंध में तुलनात्मक अध्ययन-डॉ० विमल मिश्र	974
सोनीजी नवी की पत्रकारिता का हिन्दी भाषा विकास में योगदान-प्र० अशोक गुलाबीभा घोरगडे	978
संसाधनमय राजनीतिक पुनर्गठन के संदर्भ में नरेश पेंतल का काव्य-डॉ० संदीप शिवलाल	982
भारत में पर्यटन स्थल का बेजगदर व जीहोपी पर प्रभाव-किरण कुमारी	987
गांधी जी के अहिंसा का दर्शन एवं सत्यवादी की परिभाषना-प्रमिला यादव	991
ज्ञान और जनजागर-डॉ० दिनेश कुमार	995
विद्यार्थी में किसानों की स्थिति एवं समाचार-डॉ० सीमा पटेल; मनीष कुमार यादव	1000
हिंदी के काल में परम्परागत अर्थव्यवस्था का पतन-रघुल पाण्डेय; डॉ० सीमा पटेल	1001
जीनस-वाच में प्रचलित परम्परागत ज्ञान की न्याय व्यवस्था का ऐतिहासिक अध्ययन-धीरकल सिंह; सत्येंद्र शर्मण	1006
अर्थव्यवस्था की अग्रगण्यता और 'मिडिले अंगल' का रूपगठन-अपीतम कुमार अम्बेडकर	1014
एन० दीनदयाल टपाभावा का शिक्षा दर्शन-डॉ० को०डी० विद्यार्थी	1019
प्रेम और शिक्षा-डॉ० वृजंगा कुमार पाण्डेय	1022
एक जनजातीय स्वशासन परम्परा एवं सामाजिक संरचना के विशिष्ट आयाम-डॉ० नरेश सिंह	1025
सांस्कृतिक स्तर पर अध्ययन एवं विद्यालय स्थान विद्यार्थियों के अभिभावक सम्बन्ध का तुलनात्मक अध्ययन-राजेश कुमार	1030
स्त्री उत्तमता की अवधि काव्य-डॉ० सुमित्रा घटगील	1037
स्त्रियों के जीवन प्राचीन भारतीय समाज में स्थिति-डॉ० प्रभात कुमार; जनीता देवी	1049
भारत में चुनाव सुधार-रक्षा और दिशा-डॉ० अर्चना गुला	1044
नेपाल में लोकतंत्र की प्रमुख चुनौतियाँ; राजतंत्र के विरोध संदर्भ में-डॉ० सशैल कुमार	1047
हिन्दी कथा साहित्य की विकास में साहित्यिक परिवर्तनों का योगदान-महेंद्र कुमार बस्नानी; डॉ० जयशंकर कुमार अम्बेडकर	1050
हिन्दी कहानी में नारी-विमर्श; नारी संरक्षण के संदर्भ में-डॉ० मिथु सुग्ग	1055



# दृष्टिकोण

से अधिक लोगों का जीवनमान होता है। यदि जनसंख्या बढ़ जाती है तो पुराने समुदाय को तो तरह जिस जमीन पर कब्जा न हो उनपर एक नए समुदाय को स्थापित कर दी जाती है। यह संपूर्ण प्रक्रिया व्यवस्थित रूप से इन समुदायों के भ्रमविभाजन को उद्घोषित करती है लेकिन उद्योगों से होने वाले लाभों में वैसा अप-विभाजन होता है, वैसा यहाँ असंभव है, क्योंकि सुन्दर, लोहार या बर्तन आदि को एक अपरिवर्तनीय बाजार मिलता है और अन्ततः इनकी कीमतों के स्वरूप पर निर्भीकता है। समुदाय में भ्रमविभाजन का निरन्तर प्राकृतिक न्याय को अपरिवर्तनीय अधिकार से निर्वाह होता है। इसके साथ ही यह प्राथमिक शिल्पकार, लोहार, बर्तन आदि सभी अपनी उर्ध्वगति में अपनी जातियों को सभी कार्य स्वतंत्रतापूर्वक, परंपरागत रूप में संपन्न करते हैं। इनके उच्च कोटि की अधिकारी नियंत्रण नहीं करता। इन समुदायों के आत्मबोध उत्पादन की सामाजिक दायें की सरलता यह है कि यह उसी रूप में निर्यात करने की पुनर्स्थापित करता है और जब कभी दुर्घटनावर्ती बन्धन हो जाता है तो उसी स्थान पर उसी नाम से पुनः प्रस्थापित हो जाता है। सभी व्यवस्थितताएँ समाज को अपरिवर्तनीयता के सम्बन्ध में बंधी है। ऐसी अपरिवर्तनीयता को अनाधाराण विरोधाभास के साथ एंटीवाइ उद्यम के कर्मों की प्रत्यक्ष वृद्धि वाले रविवार के परिवर्तन के साथ विभटन और पुनर्स्थापन में मौजूद है। इस समाज के आर्थिक दायें के ताल, राजनीतिक बदलावों की तुलना राज के बीच भी अनुपम धरे रहते हैं। भासों द्वारा को गई यह विवेकता बहुत सुंदर ढंग से प्राचीन भारतीय अर्थव्यवस्था और समाज का सार प्रस्तुत करता है।

ब्रिटिश साम्राज्यवादियों के औपनिवेशिक शासन और शोषण ने भारत की परंपरागत उत्पादन व्यवस्था और स्वावलंबी समाज व्यवस्था को विनाश कर दिया। 1757 ई. में प्लासी का युद्ध जीतने के बाद ब्रिटिश सेना भारत के विभिन्न इलाकों पर कब्जा करती गई। ब्रिटिश सेना द्वारा अधिभूत इलाकों में पूर्ण आर्थिक व्यवस्था और सामाजिक भ्रमविभाजन को भी चरमनाश कर दिया गया। इसके पर-कब्जा करने के साथ ही उच्च इलाकों का अतिरिक्त उपहार व साम्राज्यवादियों को प्राप्त हो गया। साम्राज्यवादियों ने भारतीय संघ को खुलकर लूट और शोषण किया। लुटेरों गई भारतीय संघ को भी इंग्लैंड सेने जाने लगे। ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत के अंदर व्यापार करने पर धारी कर लगा दिया। कंपनी ने खुद कर देने और सूदखोरी का काम शुरू कर दिया। इस प्रकार ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारतीय जनता से अनाद धन निचोड़ लिया। इस प्रकार लूट को मार्क्स ने जनता। संपूर्ण 18वीं सदी में प्रथम लूट के वरिष्ठ भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी को भेजी गई वह व्यापार द्वारा जीवित को गई विनाश संघर्ष में कई गुना अधिक थी। ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत से इंग्लैंड तक भारत को बली शोही को तरह भूमिका निर्मा। भारतीय जनता के खून-पसीने की कमाई कंपनियों में बदल गई और यही धन ब्रिटेन की शुरुआत हुई कर करने का मुख्य स्रोत था। ब्रिटिश उपनिवेशकों ने 1757 ई. से 1812 ई. तक 55 वर्षों में भारत से सीधे आमदनी के रूप में दस करोड़ पाउंड से करी अनेक धन एकत्र किया। हादसकाली तरीके से सैनिक विजय और विजित क्षेत्रों में संघर्ष लूटने का मिलसिला कई देशों तक जाते रहा। धीरे-धीरे उपनिवेशों ने अनुभव किया कि ब्रिटिश शासन के स्थायी और संचित कर के लिए शोषण को नियंत्रित करना चाहिए और उसे कठुनी स्वतंत्र देना चाहिए। इसीलिए ब्रिटी औद्योगिक क्रांति के लिए साम्राज्यवादियों ने कुछ प्रशासनिक तयों लागू किए और भूमि व्यवस्था में भी कुछ परिवर्तन किए। कायमसार लार्ड क्लाइव के शासनकाल में 1783 ई. में ब्रिटिश उपनिवेशकों ने भूमि के स्वामी बंदीवस्त अधिनियम को पारित कर निर्धारित रूप से ईस्ट इंडिया कंपनी के उपनिवेशों में कर वसूलने की व्यवस्था बनाई। 1793 ई. के अधिनियम और अन्य अधिनियमों के जरिए निश्चित कर दिया गया कि जमीन पर जमींदार का ही अधिकार होगा और किसानों का नहीं। साम्राज्यवादियों के उक्तधिकार संबंधी अधिनियम और छोटे-मू-मालिकों के अधिकांशों की मान्यता समाप्त कर दी गई। इन कानून के तहत बंगाल प्रेसीडेंसी की जनता को जमीन पर उनके उत्तराधिकारी दायों से संबंधित कर दिया गया और जमींदारों टैक्स संग्रह करने वाले जमींदार को पले पर अधिकार सौंप दिया गया। जमीन पर एक तरह का मालिकाना हक होने के बावजूद जमींदार को औपनिवेशिक ब्रिटिश शासनना को धन लूट करनी गुना लगाने देना पड़ता था। ऐसा न कर पाने पर राज्यसत्ता, जमीन किस्मों दूसरे व्यक्ति को दे देती, जो यह धन हाथ चुका देता था। इसीलिए औपनिवेशिक शासनको को संतुष्टि के लिए और अपनी जनता के लिए जमींदार किसानों का और अधिक शोषण करते थे। धीरे-धीरे यह शोषण अमानवीय सीमा तक हो जाता था। जमींदारों द्वारा ब्रिटिश शासन को निश्चित कर देना था। लेकिन वे किसानों पर किसी भी तरह तक कर वसूल सकते थे। पुरानी भारतीय सामंती व्यवस्था की अस्थिरता समाप्त हो गई और इस प्रक्रिया के जरिए जमींदारों का एक नया तबका सामने आया जिसमें सूदखोर, व्यवसाय और औपनिवेशिक अधिकारी शामिल थे। उन्हीं करने वाले किसानों और जमींदारों में बीच में अनेक तबकीकी विघ्नोत्पत्ति पैदा हो गए। इनमें हर कोई किसान को बीच सेना चाहता था। इन प्रकार किसानों का शोषण हर प्रकार की योजना पर कर गया। उपनिवेशकों ने किसानों का शोषण करने के लिए शिक्षण भारत में रैसतवारी व्यवस्था लागू की। किसान जमीन को एक टुकड़े का स्वामी ज्ञातकर बन गया। एक सैकड़ों किसान तमाम जमींदारियों के साथ जमीन से बंध गया। चायव्य में यह मुक्ति पल में जकड़ गया।

इस प्रकार जमींदारों और रैसतवारी, किसानों का शोषण करने के लिए दो मुख्य परिवर्तित सामंती तरीके थे। यह नए सामंती तरीके किसानों को गुलाम करने वाले और उपनिवेशकों के लिए पूर्ण रूप से लाभकारी थे। अधिजी पूंजीपतियों ने, इंग्लैंड की औद्योगिक क्रांति की सहायता देने के लिए भारत में लूट और शोषण का नया इंग्लैंड नईकाने के साथ-साथ भारत में इंग्लैंड के औद्योगिक माल को उत्पादन की आवश्यकता महसूस की। दूसरे शब्दों में, इन दोनों के साथ मुख्य व्यापार बढ़ सकते हैं। 1757 ई. के प्लासी युद्ध के समय से अब तक भारत के साथ एकाधिकारी रूप से ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा लूट संपूर्ण रूप से ब्रिटिश पूंजीपतियों को हित मिली नहीं कर रहा था। एक नए बाजार को खोज से प्रेरित इंग्लैंड की पूंजीपति ने ईस्ट इंडिया कंपनी को मुनाफे को संचालन करने का लक्ष्य अभिमान उठे दिया। सन् 1813 ई. में भारतीय व्यापार में ईस्ट इंडिया कंपनी का एकाधिकार समाप्त कर भारत के साथ मुक्त व्यापार को इन खोल दिए गया। यह वास्तव में भारत के आर्थिक शोषण को नए दौर की शुरुआत थी। ईस्ट इंडिया कंपनी अब तक भारतीय जन, किसान और अन्य भित्तिमाल के सामान्य बंध कर, इंग्लैंड को निर्यात कर मुनाफा कमा रही थी। लेकिन 1813 ई. के बाद भारतीय बाजार को ब्रिटिश औद्योगिक उत्पादों के लिए खुला कर देने से भारत में ब्रिटिश माल केतों से आयात होने लगा।

यह वास्तव सन् 1814 ई. में 160000 पाउंड की तुलना में सन् 1828 में 5800000 पाउंड तक बढ़ गया। यह संपूर्ण ब्रिटिश निर्यात का अठारवां भाग था। सन् 1828 ई. में भारत के साथ व्यापार में अपने ब्रिटिश व्यापारी लक्ष्यों ने करीब 110000 टन माल डोया। सन् 1814 ई. में ब्रिटेन ने भारत को 210000 टन माल-कपड़ा और 800000 टन रंगीले मूल्य कपड़ा भेजा। वर्ष 1826 ई. में यह क्रमशः 160 लाख और 200 लाख टन तक बढ़ गया। भारत में लूट

का तरीके से विकास होने से बंदरगाहों का व्यापारिक क्षेत्रों से सीधे संबंध टूट गया। इसलिए ब्रिटिश साम्राज्यवादियों ने निर्यात करने के प्रयास को और तेज बन दिया। एक तरफ ब्रिटिश व्यापारियों को भारत में माल लाने की पूरी रूढ़ भी वहीं दूसरी तरफ इंग्लैंड में भारतीय शोध और मूल्य पर 70 से 80% कटौत का लक्ष्य था। इस प्रकार भारतीय अर्थव्यवस्था को दोनों तरफ से हाथि उठाने पड़े। उपनिवेशवाद की इस भेदभावपूर्ण व्यापार नीति के कारण भारतीय मुँह शक्तिपूर्ण उद्योग उत्पन्न हो गया। ब्रिटिश औद्योगिक उत्पादन घटस कर मुँह उद्योग तेजी से विकसित हुआ। यह केवल तकनीकी उन्मुखता का सम्पूर्ण नहीं था। एक तरफ मुँह व्यापार और इंग्लैंड में भारतीय आयात पर राज को साम्राज्यवादी नीति ने भारत के देशी उद्योगों को नष्ट किया और अपने देश में औद्योगिक विकास को शक्ति प्रदान की। यह केवल भारतीय मुँह उद्योग के साथ ही नहीं हुआ, भारत के अन्य उद्योगों के साथ भी गरी हुआ। इसी प्रकार भारतीय मुँह उद्योग को भी नष्ट किया गया।

ब्रिटिश औद्योगिक उत्पादन और विकास के लिए भारतीय कच्चा माल अनिवार्य था। इंग्लैंड में उत्पादित औद्योगिक माल में भारत के बाजार को पाठ से ब्रिटिश राजको के हित में था और भारतीय कच्चा माल और कृषि उत्पादों को इंग्लैंड में बाजार करना भी उन्मुखतापूर्ण आवश्यकता थी। साम्राज्यवादियों को इस योजनात्मक व्यापारिक नीति ने भारत को पूँजीवादी प्रिटेन भी लिए कच्चा माल देने वाला सहायक बना दिया और साथ ही साथ सामंतवादी शासन के तरीकों को खारज रख कर भारतीय जनता को पाठे हात कर दिया। औद्योगिकीकरण के अंतर्गत भारत को इंग्लैंड के कच्चा माल और कृषि उत्पाद प्राप्त करने के सोच के रूप में कल्पनात्मक रूपान्तरण ने भारत के अंदर पारंपरिक अन्वेषण पर विनाशकारी प्रभाव डाला। पहले तो यह विभाजन कृषि और राज्य उद्योगों में हुआ। इस प्रक्रिया ने भारतीय दलकारों, कारीगरों को अपने दुर्गो भ्रान्त व्यवसायों से निर्दयतापूर्वक उखाड़ फेंका। इन आपातलक्षणों के बाद पहले से ही अत्यधिक दबाव डाल रहे तरीकों में जाने के अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प नहीं रहा। परंपरागत भारतीय अर्थव्यवस्था के अगुआ तेल से उद्योग से कृषि उत्पाद में सामंजस्य कायम करते थे, समाप्त कर दिए गए। हजारों वर्षों की सभ्यता को जड़े खोद दी गई और भारतीय सामाजिक व्यवस्था का हाथ धिन्-धिन् तो गया। इस परिपटन ने भारतीय मजदूर वर्ग को कहिनाइयों को और बड़ा दिया। भारत को इंग्लैंड का कच्चा माल और कृषि उत्पाद से फल सहायक बनने की प्रक्रिया बेहद संजगाहानी और बर्बर थी।

भारतीय सामाजिक अर्थव्यवस्था पर बेहद मोड़-पाड़ का संचालक असर पड़ा। उस समय की बंधन की वजह से आज भी भारतीयों के दिमाग में कौंधती रहती है। इस सब का कारण ब्रिटिश साम्राज्यवादियों द्वारा औद्योगिकीकरण के अंतर्गत भारत को शोषण करने की नीति ही थी।

भारतीय आधुनिक उद्योग का विकास, भारतीय मजदूर वर्ग की उत्पत्ति, इसके बाद का विकास और इससे जुड़ी समस्याओं को ऐतिहासिक परिदृश्य में दिखाने और कृषि अर्थव्यवस्था पर अत्यधिक दबाव की परिवर्तन के अंतर को अवश्य समझना चाहिए।

संदर्भ

1. कार्ल मार्क्स, राज कीपरल, चालुपु 1, भारत लेखक पब्लिशिंग हाउस, मद्रास, 1954, पृ. 257-58
2. मार्क्स और क्रॉडिक एलिच द्वारा लिखी पुस्तक जल कालोनिज्म में कार्ल मार्क्स का लेख 'द इटल इंडिया कंपनी : इटल हिस्टरी एण्ड रिजल्ट', भारत लेखक पब्लिशिंग हाउस, मद्रास, पृ. 51
3. कमेंटी ऑन कान्टोनमेंट का हांड, इस्ट इंडिया कंपनी के बॉर्ड ऑफ डायरेक्टर्स का प्रस्ताव, 9 फरवरी, 1813, इंडियन पोलिटेकॉनिकल डिपार्ट, चालुपु 25, पृ. 28, कॅम्ब्रिजियम इन इंडिया, वॉरिंक ट्रेड्स इन इटल इंडियन कंपनी, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, लेखक एडवर्ड लेखरबी, पृ. 10
4. ए.आई.लीबरमो, कॅम्ब्रिजियम इन इंडिया: वॉरिंक ट्रेड्स इन इटल इंडियन कंपनी, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ. 19

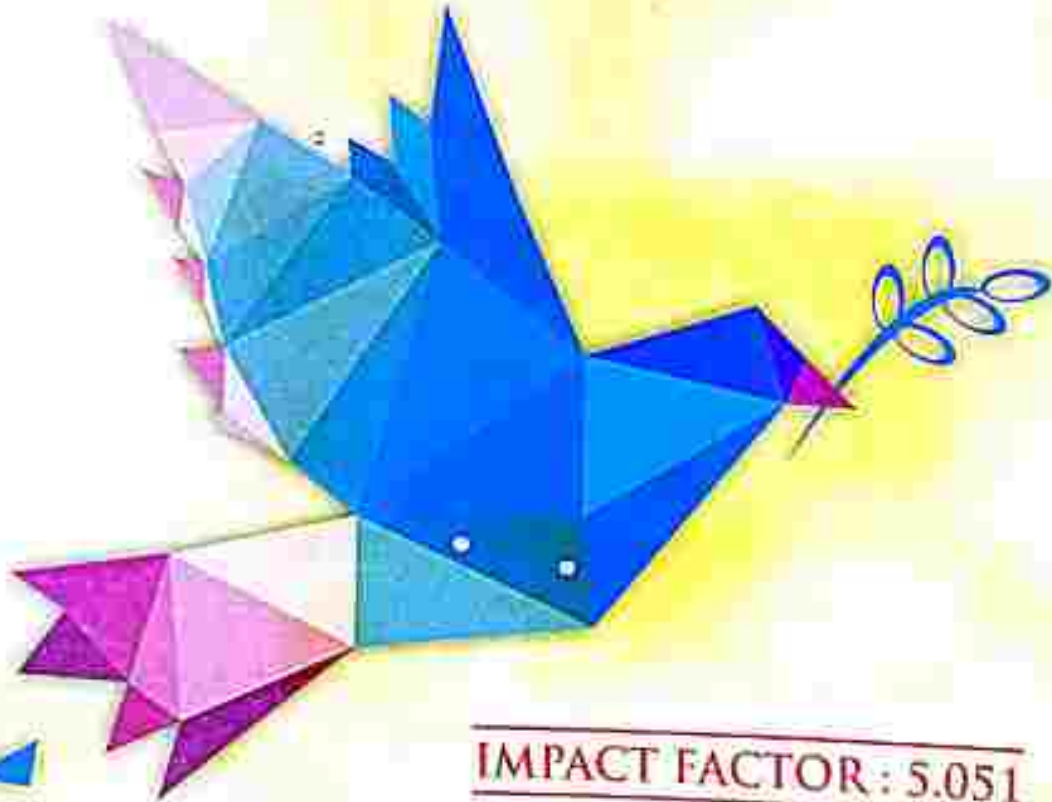
ISSN 0975-119X

UGC-CARE GROUP I LISTED

वर्ष 12 अंक 5 सितंबर-अक्टूबर 2020

# दृष्टिकोण

कला, मानविकी एवं वाणिज्य की  
मानक शोध पत्रिका



IMPACT FACTOR: 5.051

India's Leading Refereed Hindi Language Journal

इसरोकार के सामने क्षेत्रों के सहरी क्षेत्रों में हो रहे प्रयास से महिलाओं के सर्वांगिक एवं सामाजिक जीवन का प्रथम का एक अध्ययन -डॉ० राजेश सिंह नेगी	896
साहित्य काव्य एवं क्रांती का स्वीकार-डॉ० राजेश कुमार सिंह	904
साहित्य एवं क्रांति: क्रांति का स्वीकार-डॉ० राजेश कुमार सिंह	907
सहित्य अधिष्ठाता : क्रांति एवं साहित्यिकता-रजनी	911
साहित्य अध्ययन के क्षेत्र का स्वीकार का योगदान-प्रमोद कुमार	914
सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र-साहित्य में अधिष्ठाता-डॉ० विवेक शर्मा	917
सहित्य क्षेत्र के साहित्य का क्षेत्र का स्वीकार-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	921
सहित्यिक क्षेत्र का स्वीकार-डॉ० कुमार प्रताप सिंह	924
कुशल क्षेत्रों के अध्ययन 'समा' में समा के क्षेत्र का स्वीकार-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार; राजेश सिंह	927
साहित्य एवं सामाजिक का अध्ययन-अधिकांश साहित्यिक क्षेत्रों	931
अध्ययन एवं समा के क्षेत्र का स्वीकार-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	934
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	938
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	942
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	947
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	950
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	955
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	959
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	961
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	965
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	969
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	972
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	976
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	979
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	983
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	986
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	990
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	993
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	997
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	1002
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	1005
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	1008
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	1011
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	1014
साहित्यिक क्षेत्रों के अध्ययन-डॉ० विवेक शर्मा; राजेश कुमार	(xi)



# भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में श्रम संघ की भूमिका

डॉ० सीमा पटेल

शोध निदेशक, एमोसिएट प्रोजेक्ट, इतिहास विभाग, सरदार वल्लभ भाई पटेल कॉलेज, भद्रुआ, वीर भुषण सिंह विश्वविद्यालय, अरा (बिहार)

नीतू कुमारी

शोधकर्त्री

कोई आंदोलन जो ही नहीं उठा खड़ा होता। लोग जब चाहें तब कोई आंदोलन शुरू नहीं कर सकते। हर आंदोलन अपनी विशेष ऐतिहासिक स्थिति को उपलब्ध होता है। ऐतिहासिक स्थिति या ऐतिहासिक संदर्भ ही जनक आंदोलन को जन्म देता है। इसीलिए मात्र व्यक्तियों या राजनैतिक कुटियों के सार्वभूमिक आंदोलन का अध्ययन करना गलत होगा। यदि हम सही ढंग से किसी आंदोलन का मूल्यांकन करना चाहते हैं तो हमें उस ऐतिहासिक स्थिति को सही ढंग से समझना पड़ेगा। यही है जो आंदोलन उत्पन्न और विकसित होता है। साथ ही हमें उन शक्तियों को भी पहचानना होगा जो इनमें हिस्सा लेती हैं।

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान टूट चुकने तथा किसान आंदोलन एवं संगठनों की भूमिका उठनी सीधी-सरल नहीं है। किसानों की कोई तंग बंधन है। वास्तव में, इस विषय में अज्ञान भी कई गलत धारणाएँ प्रभावित है। यह एक आम धारणा हो गई है कि किसानों और मजदूरों का राष्ट्रीय आंदोलन से एकजुट करके देखा जाता है और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को इनकी स्वतंत्रता का अग्रदूत माना जाता है। इसका मूल कारण शायद यह आम प्रवृत्ति है कि इन इनके नेताओं को ही जन-साधारण समझ लेते हैं और जो आंदोलन नेताओं की पहला (या बहुकाली) से शुरू होता है उसे गलती से जन आंदोलन मान लेते हैं। भले ही उसका उद्देश्य कुछ भी क्यों न रहा हो। ऐसे उदाहरणों में सच पूछा जाए तो 'जन' शब्द की धारणा को ही एकदम विफल कर दिया गया है। जो विप्लवियों से बचने के लिए वह बहुत जानती है कि हम भारत के राष्ट्रीय आंदोलन को सही ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में रखकर देखें और इसमें टूट चुकने तथा किसानों की क्या भूमिका रही, इसपर नए सिरे से विचार करें। इस लेख में इस प्रकार की जाँच-पड़ताल की कोशिश की जाएगी।

यहाँ हम टूट चुकने को लेते हैं। "भारत में श्रमिक आंदोलन की शुरुआत पचास वर्ष पहले हुई, किंतु एक संगठित आंदोलन के रूप में इसका उद्भव इतिहास इनम विप्लववाद की समाप्ति के बाद से शुरू होता है। 1850 व 1859 के बीच का दशक 'भारत की औद्योगिक क्रांति के सपने को प्रकट करता है। इस दशक के दौरान भारत में जो तब तक एक कृषि-प्रधान देश था, पहले तो रेल आई, फिर बंगाल तथा बंबई राज्यों में अन्ना सहायका उद्योगों का स्थापना हुआ, जैसे कोयला खनन, जूट और सूती कपड़ा। भारत में जो उद्योगीकरण हो रहा था उसकी पीछे औपनिवेशिक शक्ति का यह पहलू था कि वह पहले के संसाधनों का अधिक-से-अधिक शोषण कर लेती। इसके मूल में मानव-प्रेम या लोकप्रियता की भावना नहीं थी बल्कि कि कुछ लोग सोचते हैं। बिना एक पूँजीवादी देश था और एक पूँजीवादी देश होने के साथ-साथ कि स्वाभाविक हो है, उसे अपनी अतिरिक्त मूल्य-आधारित (Surplus Value Oriented) उत्पादन-प्रक्रिया के लिए सभी बाँचे माल को बचत था। भारत जैसे देश के संदर्भ में, जो अच्छे माल और तरह-तरह के संसाधनों को दुर्घट से बचाव लेता था, यह बहुत जरूरी था कि अच्छे माल की अधिकता वाले क्षेत्रों को व्यापार में जोड़ा जाए। इसी तरह से रेलें चलाई गईं और कोयला-खनन उद्योग का विकास किया गया। अतः उद्योगीकरण की पहली लहर के साथ जो उद्योग आएँ इनकी स्थापना हमारे देशवासियों ने नहीं की थी। वास्तव में इस तरह से भारत मूलतः एक ग्राम-आधारित तथा कृषि प्रधान समाज था, अतः अब तक इसका अपना पूँजीपति वर्ग विकसित नहीं हो पाया था। औपनिवेशिक शक्ति के उबाव से प्राचीन परंपरागत ग्राम-आधारित प्रणाली धीरे-धीरे टूट रही थी और नवीन समाजिक प्रणाली (जो आज भी जारी है) अभी अस्तित्व में नहीं आई थी। हमारे यहाँ व्यापार और साहूकार तो थे किंतु पूँजीपति नहीं। इसी प्रकार से भारत में मजदूर वर्ग जैसी कोई चीज नहीं थी (क्योंकि उद्योग नहीं थे), किंतु उद्योगीकरण की दिशा में जो औपनिवेशिक प्रयास हुए उसकी प्रक्रिया में विविध उद्योगों (जिनका हम पहले उल्लेख कर चुके हैं) का उदय हुआ और इनके साथ ही, जैसा कि स्पष्टाधिक है, औद्योगिक श्रमिक शक्ति (Working Force) भी विकसित हुई। लगभग 60 वर्षों तक उद्योगीकरण कुछ प्रमुख क्षेत्रों तक ही सीमित रहा, जैसे रेलवे, कोयला-खनन, जूट, कपड़ा इत्यादि। किंतु इस सीमित क्षेत्र में उद्योगों का जो विकास हुआ वह उल्लेखनीय था। उद्योगों के विकास के साथ-साथ श्रमिक-संख्या में भी तेजी से वृद्धि हुई किंतु भारत की कुल जनसंख्या के सामने इस संख्या का विशेष महत्त्व नहीं था। वास्तव में श्रमिक संख्या के अभाव में पहले तक भारतीय जनता की कोई उल्लेखनीय प्रतिरोध मजदूर वर्ग के अंतर्गत नहीं आ पाया था। बहरहाल, संख्या की दृष्टि से मजदूर वर्ग का अभाव ही भारतीय जनता के प्रतिरोध के लिए प्रबल हुए। इसी प्रकार एक बात और हुई जो अब तक अनजान थी और वह यह कि लोग एक ही तरह के अनुभव-संग्रह में सहभागी हुए। 'मेरी भूमि-मेरा बर्दाश्त' (My land-My tenant) का जमाना अब बीत रहा था। अब एकांतकी किसान का पुत्र बीत रहा था और उसके



## दुर्घटनाएँ

बहरहाल, संगठन को इस कमी को धारण करने में मदद मिली थी। आर्थिक वर्षों की बढ़त - "जो स्वाभाविक प्रतीत होती है जो बाद में एकमात्र की वृद्धि में लगे से बताया हो रहा है।" उदाहरण के लिए, 1895 की बम्बई मूट मिला की इच्छा, जिसकी वजह से मिला संगठन एक संगठन के लिए कर हो रहा था, और उसी वर्ष आंध्रप्रदेश मिला खोजक मूट (Ahmedabad Mill Owners' Association) के खिलाफ आंदोलनकार के 8,000 मूटवर्कों की इच्छा से एक प्रारंभ होता है कि मूटवर्कों की कार्यवाही से एकमात्र तथा मुंबईवासी संगठन का विकास हो रहा था। एच. बुधनन के अनुसार आंध्रप्रदेश के संगठन इस विषय में एकमात्र प्रथम विचारों के धारण 1890 और 1908 के बीच आर्थिक मुंबईवर्कों का अस्तित्व नहीं था, कई लोगों का यह धारण था कि किसी काम के लिए वे मूटवर्क संगठन को धारण से प्रति होना कार्यवाही करने से और एक संगठन के रूप में से एकदम तब तक थे। मि. विष्णु (जो बाद में एक एक वर्ष इंग्लैंड की उद्योग विदेशक से) को जर्मनी में "मूटवर्क अपने मालिकों के विरुद्ध जातीय अधिकारवादी थे", और "एकमात्र मूटवर्क को करने से भारतीय जातीय कार्यवाही के लिए मुंबई नहीं थी।" और इस कथनों से भी ही अतिवादी विचारों से जो मूटवर्क के अग्रिम विदेशी फर्मिन्स ने जो एक वर्ष से जो उद्योग को सभी कथनों को धारण कर रहे हैं, "मूटवर्क विदेशी के मालिक थे, और मिला मालिकों की सुरक्षा की मित्रों उद्योग को सभी मूटवर्कों को थी।

उद्योग के कथनों में यह संकेत था कि संगठन का प्रति कि मूटवर्कों से बढ़ी तेजी से अस्तित्व का विकास हो रहा था। संगठन में, मूटवर्कों की स्थिति का अधिक बड़ी मुद्दागत था होने कि उनकी स्थिति कार्यवाही एक प्रकार की "उत्थित भीड़ जैसी थी किन्तु यह जरूरी नहीं है कि कार्यवाही से एकमात्र के लिए कार्यवाही करने से होते धारण। कार्यवाही से एकमात्र के लिए संगठन में एकमात्र होने धारण। और करने की आवश्यकता नहीं को कोने से एक एकमात्र को। इसके अर्थ नहीं कि स्थिति काको गंभीर थी, किन्तु इसे प्रतिवादी स्थिति नहीं था कि यह संभव था। बहरहाल, मूटवर्क-विरोध का संगठन कार्यवाही। अंग्रेजों के लिए यह कोई मुद्दागत जोर निरंतर हो नहीं थी क्योंकि उद्योगीकरण में संगठन किसी प्रकार में औद्योगिक जन-शक्ति की बढ़ी ही मूटवर्क स्थिति होती है। मूटवर्क प्रति कि यह जन-शक्ति इच्छा और भी और उद्योगीकरण को अतिवादी को उभार कर सकती है। इसलिए बुकानन (Buchanan) के कथन में एक मूटवर्क को नहीं है किने स्थिति का बर्तना बहरहाल उत्थित का दिया जाए।

### इच्छाओं का ज़रूरत तैयार:-

एक एक मिला इच्छाओं को नहीं को नहीं है, उनमें उद्योगीकरण की प्रकृति नहीं थी। 1905 को पहले तक भारतीय मूटवर्क में उद्योग का संगठन अस्तित्व की प्रकृति दुर्घटनागत नहीं होती। 1905-1906 के दौरान स्थिति बलगत। राष्ट्रीय आंदोलन उद्योगों के मार्ग को और अग्रसर होता जा रहा था। अंग्रेजों ने बंगाल विदेशक जातीय कार्यवाही से मध्यमवर्गीय संगठन वर्तमान को अलग विरोधी बना दिया था। उद्योगी कार्यवाही को नेतृत्व में संगठनकार को भारतीयों के मूटवर्क के रूप में एक मिला जा रहा था। भारतीय मूटवर्कों में भी इस इच्छा को प्रतिध्वनि हुई। बर्मा की कानून मिला में (कानून के बड़े बदलने के खिलाफ), सिने में, मिला संगठन में पूर्वी बंगाल राज्य रेलवे (Eastern Bengal State Railway) में और फलकन के रजिस्ट्रार प्रेम में गंभीर इच्छाओं हुए। इनका काम किन्तु एक अन्य एक 1908 में मिला की एक वर्ष की कार्यवाही को काम को विरोध में एक दिन की राजनीतिक जन-इच्छा हुई। प्रथम विश्वयुद्ध शुरू होने तक मिला, पूर्वी मिला एक मूटवर्क उद्योगों का दूर-दूर तक विस्तार हो चुका था और उद्योगीकरण में मिलने लोग काम करते थे उससे कई गुने लोग काम पर लग चुके थे। 1912 में भारत के और 264 कानून मिला कार्यवाही भी मिला लगभग 2,60,000 कार्यवाही नियोजित थे। बंगाल में मूटवर्क उद्योग का भी विकास हुआ किन्तु 1912 तक वहाँ 60 मिला भी मिला 2,00,000 मूटवर्क काम करते थे। 1914 तक रेलवे में लगभग 6,00,000 लोग काम पर लगे हुए थे। एक का संगठन एक मिला (सम्पूर्ण) उद्योग 1911 में स्थापित हो गया था, इच्छाओं अर्थव्यवस्था वर्षों में उसमें नियोजित मूटवर्कों को संगठन अधिक नहीं थी। इसलिए प्रथम विश्वयुद्ध तक जो उद्योग एक मुंबईवर्क संगठन के लिए विदेशक उद्योगों से वे मूटवर्क का कानून उद्योग और रेलवे"। अतः प्रथम विश्वयुद्ध के बाद से उद्योग अतिरिक्त मूटवर्कों और मिला इच्छाओं अर्थव्यवस्था के धारण-स्वत बनने लगे थे।

### प्रथम विश्वयुद्ध का प्रभाव:-

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद भारत में राजनीतिक उद्योग अर्थव्यवस्था इच्छाओं में महत्वपूर्ण परिवर्तन आए। राजनीतिक दुर्घटना से सामान्यकारियों ने भारतीय दुर्घटनाओं को काम निवारणका विचार था। इस दुर्घटनाओं को राजनीतिक संगठन (भारतीय राष्ट्रीय मूटवर्क) संगठन में वे मूटवर्क संगठन करने में असमर्थ था किन्तु उनमें मूटवर्क के दौरान महत्वगत के बर्तन-उद्योग करने की जरूरत की थी। और भी उद्योग बात यह थी कि देशी दुर्घटनाओं को मूटवर्क के दौरान अर्थव्यवस्था के विनिर्देशक में संगठन-सा विचार देने के बाद संगठन कि अस्तित्व को उद्योगी कार्यवाही स्थिति में लौट आई थी। वर्साय (Versailles) में मिला देशों के उद्योगी कार्यवाही को उद्योग हुआ था उसमें मुसलमान मुख्य थे। असंतोष की इन विभिन्न धाराओं ने मिलाकर कार्यवाही और संगठन के पुनर्निर्माण का महत्वगत एक विचार को संगठन अस्तित्व के कार्यवाही पर आधारित था।

राजनीतिक क्षेत्र में बड़ी अस्तित्वगत अपने को उत्थित महत्वगत कर रहा था, बड़ी आर्थिक संघर्ष पर मूटवर्क से मूटवर्क को सबसे ज्यादा आघात पहुँचा। मूटवर्क के दौरान मूटवर्कों की कार्यवाही दुर्घटना हो गई, किन्तु इस मूटवर्क के अनुसार मूटवर्कों के संगठन में वृद्धि नहीं हुई। इसके विरुद्ध विरोध (employment) अस्तित्वगत मुद्दागत नहीं था। इस मूटवर्क को संगठन में औद्योगिक संगठन को सबसे ज्यादा कष्ट संगठन पड़ा। मध्य वर्ग ने इस अनुसार और मिला हुए मूटवर्क को बड़ी धारण से अपने राजनीतिक एवं आर्थिक स्वार्थों के लिए उपयोग करने की कोशिश की। इसके परिणामस्वरूप एक भारी इच्छा अस्तित्वगत अस्तित्वगत यह किन्तु अपने प्रतिनिधि के दौरान भारतीय अर्थव्यवस्था अस्तित्वगत की संभव ही बदल दी। पिछले कई दशकों से अर्थव्यवस्था-अस्तित्वगत की जो धारण उच्छादी होती नहीं जा रही थी उसे संगठन पर नियोजित तथा अस्तित्वगत रूप में व्यक्त होने का मौका मिला। एक मुंबईवर्क अस्तित्वगत अब एक विनिर्माण अस्तित्वगत संगठन का संगठन जा रहा था। किन्तु यह स्थिति एक अन्य दुर्घटना से भी महत्वपूर्ण थी। इसने भारतीय मूटवर्क संगठन पर मध्य वर्ग के अस्तित्वगत प्रभाव के मूटवर्क संगठन का मूटवर्क किन्तु, एक ऐसा प्रभाव किन्तु अभी तक धारण नहीं किया जा सका है। यह प्रभाव ही अनुसार: भारतीय मूटवर्क वर्ग की आर्थिक दुर्घटना का प्रतिक्रिया या क्योंकि इस मूटवर्क किन्तु का जो लोग उनका नेतृत्व करते आए और आगे तक नेतृत्व करते रहे, उनमें से मूटवर्क का मूटवर्क वर्ग से कोई संगठन संगठन

की था जबकि फिर दो पक्ष को अपने राजनीतिक उद्देश्यों को पूर्ति का साधन पर था। "1918 में जो हड़तालें की गयीं शुरू हुईं और लगभग तीन वर्ष तक चलीं, वे एक ही ध्येय के लिए थीं और उसकी ही प्राप्ति के उपाय नहीं जा सकते थे। 1918 के अंत में पहली बड़ी हड़ताल हुई जिसमें कानपुर मिलों के एक मुकाम को बंद में पूर्ण-से-पूर्ण उद्योग को प्रभावित किया। जबकी 1919 तक सभी मिलों में लगभग 1,25,000 मजदूर हड़ताल पर थे। 1919 के अंत में एच.ए.ए. के विचारक देशांतरों हड़ताल के प्रतिनिधित्वपूर्ण मजदूरों ने जगह-जगह हड़तालें कीं। तीसरी ही हड़तालें की गईं तब अपने विचार पर पूर्ण रूप से संतुष्ट हुए उन्होंने जो अर्थों में लगभग 200 हड़तालें हुईं जिसमें लगभग 25 लाख मजदूर शामिल हुए। निम्नलिखित आँकड़ों से इस आंदोलन की शक्ति और तीव्रता का कुछ अंदाजा लगाया जा सकता है।

"4 मार्च से 2 दिनों तक, ऊनी कानपुर मिल, कानपुर के 17,000 लोग हड़ताल पर। 17 दिसंबर, 1919 से 9 जनवरी, 1920 तक, नूर-मिल, बलरघाट के 35,000 लोग हड़ताल पर; 31 जनवरी को ब्रिटिश इंडियन रीफिनेशन कंपनी के 10,000 लोग हड़ताल पर; 24 फरवरी से 20 अप्रैल तक, एम.एस.ए.ए. मिल बर्हल के 40,000 लोग हड़ताल पर; 9 मार्च को पिल ऑयर्स, धरम के 60,000 लोग हड़ताल पर; 20-26 मार्च, मिल मजदूर, मद्रास के 17,000 लोग हड़ताल पर; मिल मजदूर, आंध्रप्रदेश के 25,000 लोग हड़ताल पर।"

संदर्भ सूची

1. R.P. Das, India Today
2. Bulletin of the Department of Industries And Labour, quoted by V.B. Kamik, Indian Trade Unions (A Survey) (1960).
3. R.P. Das, India Today.
4. D.H. Buchanan, The Development of Capitalist Enterprise in India, quoted in Harold Crouch, Trade Unions And Politics in India.
5. दृष्टिकोण में 1920 में पहले बड़ी कानपुर हड़ताल में शक्तिशाली को प्रभावित किया है। देखिए D. Miris, Labour Discipline in Trade Unions.
6. Harold Crouch, Trade Unions And Politics in India.
7. R.P. Das, India Today.
8. R.K. Das, The Labour Movement in India, pp. 36-37.
9. Harold Crouch, op. cit.
10. V.B. Kamik, op. cit.

ISSN 0975-119X

UGC-CARE GROUP I LISTED

वर्ष 11 अंक 4 जुलाई-अगस्त 2019

# दृष्टिकोण

कला, मानविकी एवं वाणिज्य की मानक शोध पत्रिका

India's Leading Refereed Hindi Language Journal



IMPACT FACTOR: 5.051

## दृष्टिकोण

उपराशुनिकता और उपभोक्तावाद: मुगदूणा का वास्तविक सुख को उल्लास-डॉ० रमेश कुमार वर्णवाल	125
अर्धशतक कवियित्री गीतिका समाज का संस्कृत साहित्य में योगदान-डॉ० मीना गुप्ता	129
भूमि का काव्य साक्ष 'संसार में सदाक तक': व्यवस्था विरोध का जीवंत दस्तावेज-डॉ० मलकायत सिंह	132
पटना जिला में अनुसूचित जाति को साधारण: एक भौगोलिक मूल्यांकन-डॉ० मनोज कुमार सिन्हा	138
उच्च शिक्षा के जिलाद्वी विद्यार्थियों में सामाजिक कौशल का विकास: एक अध्ययन-श्रीमती रंजना योगी; प्रो० वंदना सोस्वामी; डॉ० सना शर्मा	145
गुरु ग्रन्थ साहब में कबीर (भक्ति आन्दोलन के सन्दर्भ में)-डॉ० कुलदीप कौर पाठवा	150
राष्ट्र साहित्य में डॉ० सिद्धनाथ कुमार का योगदान-रोशन कुमार	153
भारत में राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रम-डॉ० जया भारती	156
बिहार में मुराभन और जल जीवन हरिधराली: एक सम्बोधनात्मक अध्ययन-डॉ० तेलानी मीना होंरी	159
वैदिक संस्कृति व धर्म के दुर्लभता में पुष्प शास्त्रियों का योगदान-डॉ० ईशा शर्मा	163
पारंपरिक और आधुनिक कला का स्वरूप: एक दार्शनिक विश्लेषण-प्रिया कुमारी तिलारी	166
दूरस्थ शिक्षा के अत्यांत अध्ययनगत विद्यार्थियों का एम० एनई के प्रति आगिगत का अध्ययन-प्रियंका रावत	168
भारतीय अनुसंधान विचारकों के अग्रदूत डॉ० रामेंद्रनाथ ठाकुर (पारवात्य घनवादी कला के परिश्रेक्ष्य में)-डॉ० मंडू सिंह	174
उच्च शिक्षा के कुछ मूलभूत इसन-आकांक्षा वर्मा; डॉ० शकुन्तरा मिश्र	177
साहित्य में दलित चिंतन का स्वर-डॉ० मनोषा सिंह	179
संस्कृत में निवसतंग व्यक्तियों को 'समावेश' के संसार में साधार्: एक सामान्य परिश्रेक्ष्य-शिवानी	183
विश्व भाषा विन्दी के विविध काव्यम-डॉ० अनु शर्मा	186
रुनक बाणी सामुदायिक रेडियो का प्रमोर्णा पर प्रभाव-हर्षवर्धन पाण्डे	189
हिंदी के विकास में बुन्देलखंडी साहित्य का योगदान-कृष्णांक शुक्ला	195
डॉ० अनीस कुमार मिश्रा के लघु कथाओं का सौंदर्य-अंजना गुप्ता; किशोर कुमार जयसवाल	198
1818 की अटिवा रेधि व बेंकनरे रिषासत-भारती गोपात	205
आधुनिक चित्रकला में कोलाज चित्रण-डॉ० ईशर चन्द गुप्ता	209
प्रान्तीय विद्यालय में स्वयं सहायता समूह मण्डकोकाइनेस: पहिला समाहितकरण की समीक्ष्य विधि-डॉ० गणेश ईशान	213
साहित्य को जन्वदायी धारा और मुक्तिधोच-डॉ० अबुजा एन् गलखेडकर	216
आधुनिक धरर में बाल्योदीय रानायण एवं श्रीराम के आदर्शों को प्रासंगिकता-डॉ० शोधर ठेगडे	219
एन एस के प्रगति के काल (1924 से 1939 तक)-डॉ० सीमा पटेल; नीतू कुमारी	225
समीची लघु चित्रों में सांस्कृतिक प्रभाव-डॉ० पुनीता शर्मा	226
भारत व अंड-सम सम्यन्ध: एक अध्ययन-डॉ० अकताम आलाम	230
सामाजिक विदेश नीति में गुटनिरपेक्षता: एक अवलोकन-प्रो० (डॉ०) पूनम	233
भारत में सामाजिक कल्याण कार्यक्रम: बदलते परिदृश्य, उभरती समस्याएं और लक्षित समूह-अभ्युज मिश्र	238
विद्यालय के काव्य में प्रगति चलना का समीक्षात्मक अध्ययन-डॉ० रानीया शर्मा	241
हिंदी के विकास में पत्र-पत्रिकाओं का योगदान-डॉ० ज्ञानोबा रावरी	244
वैश्विकता के दौर में परम्परागत लोक कलाओं का बदलता स्वरूप: एक अध्ययन-डॉ० शिवम शर्मा	248
ब्रिटिश आर्थिक नीतियों का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव-राजेश कुमार	

# श्रम संघ के प्रगति का काल (1924 से 1939 तक)

डॉ० सीमा पटेल

प्रोफेसर, एग्रीगेट प्रॉफेसर, इतिहास विभाग, सरदार वल्लभ भाई पटेल कॉलेज, भयुआ वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)

नीतू कुमारी

प्रोफेसर, इतिहास विभाग, सरदार वल्लभ भाई पटेल कॉलेज, भयुआ वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)

राज्य मजदूर वर्ग के आंदोलन में सन् 1926 से 1929 समय बहुत महत्वपूर्ण है।

सन् 24 के राजनीतिक और आर्थिक जीवन में एक प्रशासकीय तबल-तुलन आसन था। भारतीय कम्युनिस्ट आंदोलन को मजदूर नींव रखता और बढ़ती चलाकर बढ़ा था। इसलिए इस दौर के मजदूर आंदोलन पर कम्युनिस्ट विचार का काफी दृढ़ प्रभाव दिखाई पड़ता है। इन वर्षों के दौरान कर्ग-कर्मियों को जहाँ सरकार ने इस संघर्ष पर 'कम्युनिस्ट महर्षव' का आरोप लगाने का प्रयास किया लेकिन कम्युनिस्टों के नेतृत्व में हुई बहुत सी हड़तों, धरतों को मनमाजों का दमन करने और उनके अंदर सुलग रहे असंतोष को तीखी अभिव्यक्ति थी। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मजदूरों के लक्ष्य के अंदर स्तर के साथ-साथ संघर्ष के दौरान मजदूर वर्ग का वैश्वीय दृष्टिकोण भी विकसित हुआ।

सन् 1929 में सरकार ने 'कम्युनिस्टों से खतरा' का झूठा खड़ा करके मजदूर वर्ग के बुद्धिमान संघर्षों पर क्रूर दमन कर उनको दबाने के लक्ष्य का प्रयास किया जिससे उनका खिलाफ बस्ता को बढ़ाकरने की भी कार्पनीति अपनाई। लेकिन से बढ़ रहे मजदूर वर्ग आंदोलन को राज्य को नियंत्रण में रखने के लिए सरकार सरकार ने 'इंडियन ट्रेड यूनियन ऐक्ट, 1926 (भारतीय ट्रेड यूनियन अधिनियम 1926) लागू किया तो दूसरी तरफ 'ट्रेड डिस्मूट ऐक्ट' (अंतर्राष्ट्रीय विवाद निवारण) और 'एम्प्लॉयमेंट ऐक्ट' (जन सुरक्षा अधिनियम) के जरिए अपने दमनकारी दारतों को अंजाम दिया। इन कानूनों के मुन्वीयित जनमानस ने मजदूर वर्ग और उनका बुद्धिमान संघर्षों को समर्थन करने के लिए सरकार ने बड़ी सावधानी से कृपण बुध और 'कम्युनिस्ट खतरा' को समर्थन करके, जो बला को मुक्त करने के लिए 'सेन्ट महर्षव कंस' शुरू किया।

## वर्तनीक संघर्ष में नया विश्वास

जिन वर्षों से संघर्ष न करने को जो नीति अपनाई जा रही थी उसके परिणामस्वरूप सामान्यवाद विरोधी शक्तियों में विभटन विद्यमान और जनक को समर्थन हो रही। इसके अतिरिक्त साम्प्रदायिक विंसा के अंकुरण से इन शक्तियों का और भी पतन हुआ। सामान्यवादियों ने राष्ट्रीय आंदोलन को न केवल सही तरीके से निरस्त होसित की और बहुत शीघ्र अपनी आर्थिक और प्रशासनिक नीतियों को पुनर्सुवर्धित किया। अपनी दमनकारी नीति को इनके जहाँ में सधे हुए उलटके से लागू किया।

सन् 1921 का मुद्रा विना (करौली विना) भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए कसब झटका था। हिल्टन पंग करेसी कमीशन 1925-26 ने अन्दर के अर्थव्यवस्था को विचारित की और एक कचरा की बरीसत। शिपिंग 6 एस के बरकर निर्धारित की। इंडियन स्टील प्रोटेक्शन बिल 1924 के संशोधन के द्वारा 1927 के कानून ने इंडिया स्टील के लिए सार्वकारी दरें तय कीं। इस प्रकार सरकार की राजकोषीय नीति का इस प्रकार परिष्कार किया गया जो बंधन के साथ के साथ में औद्योगिककरण के लिए स्वीकृत शुल्क व्यवस्था को बदल दिया गया और फिर सामान्यवाद को प्रार्थीयता जताता हुआ आ गया।

सन् 27 आर्थिक हमलों से साम्प्रदायिक स्थापित कर नवंबर 1927 में ब्रिटिश मंत्रिमंडल ने संसद में साम्प्रदायिक कमीशन को नियुक्त की घोषणा की। इस कमीशन को संसदीय लोकतंत्र के लिए भारतीयों की योग्यता की जाँच और कुछ प्रशासनिक सुधारों को सिफारिश करती थी। ब्रिटिश सरकार, सन् 27 कानून के नेतृत्व काले इस कमीशन में कोई भी भारतीय प्रतिनिधि नहीं था।

साम्प्रदायिकों की आशा के विपरीत, इस घोषणा ने राष्ट्रीय आंदोलन को नई प्रति प्रदान कर दी और सामान्यवाद विरोधी शक्तियों को पुनः एकजुट करने में मदद की। कुछ समय के लिए भारतीय दृष्टीयति वर्ग ने सामान्यवादियों के साथ किसी भी प्रकार के जालनस को आशा छोड़ दी और अर्थव्यवस्था को बचाने को साथ में समर्थन के लिए साथ हुआ। लेकिन मजदूर वर्ग और जनता में विकसित हुई गई भेदभाव और साम्प्रदायिकता को साथ-साथ बहाल







## दृष्टिकोण

साम्प्रदायिक मजदूर संगठन, पंजीकृत और गैर पंजीकृत ट्रेड यूनियनों के बीच विभेदीकरण और खास तौर पर गैर पंजीकृत यूनियनों को समुदाय गैर कायूटी कक्षा देने के सख्त खिलाफ थे। उनको थापना थी कि भारतीय ट्रेड यूनियन आंदोलन को आर्थिक अंधाधुंध में गैर पंजीकृत यूनियनों का होने स्वाभाविक था और इसलिए ऐसी यूनियनों को भी कायूटी सुरक्षा प्रदान करना समझा भी जिम्मेदार है। श्री मजदूर नेताजी (एन.एच.जी) और लाला लालजय राम) ने संवैधानिक अर्थव्यवस्था में इसका प्रवृत्तपूर्वक समाधान किया।

राज्य कमीशन आन लेबर इन इंडिया 1931 ने भी अपनी रिपोर्ट में सरकार द्वारा ट्रेड यूनियन प्रतिबंधों को 'सही' और 'विकल्प पूर्ण' मान्यता देने के लिए, इस घोषित नीति को सही ठहराया और आगे कहा कि ट्रेड यूनियन आंदोलन के हित में ऐसा ऐक्ट बहुत जरूरी होना चाहिए था।

भारत में जब ट्रेड यूनियनों का गठन प्रारंभ हुआ और देश के विभिन्न भागों में आंदोलन फूट पड़ा तब सरकार और दूरिष्टता से भरी साम्राज्यवादी सरकार ने ट्रेड यूनियन आंदोलन को अर्थव्यवस्था की सीमाओं में बाधकर रखने और इसे राजनीतिक स्वतंत्रता प्रदान करने से रोकने के लिए चारों तरफ से पैगु डारने और शिकंशा करने की आर्थिक-अपवादों, आर्थिक साम्राज्यवादी इस घोषणा में थे कि मजदूर वर्ग राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन में किसी भी प्रकार शामिल न हो। इसी उद्देश्य को पूर्ण के लिए सरकार ने ट्रेड यूनियन ऐक्ट में अनेक प्रतिबंधों को साथ, खास तौर पर यूनियन बोर्ड की राजनीतिक इन्तरेल से रोकने के लिए नियम बनाए इन प्रावधानों के लागू करने से भारतीय ट्रेड यूनियन आंदोलन के स्वतंत्र विकास में साम्राज्यवाद का पैगु इस्तेमाल दिखाई दिया।

### संदर्भ सूची:

1. आर.पी. दत्त, इंडिया टुडे, पृ. 283
2. एच. लेबर कमेटी, फरवरी 1922, पृ. 40-44
3. रिपोर्ट ऑफ दि (1922) कमीशन आन लेबर इन इंडिया, 1931, पृ. 158
4. गहरी, पृ. 303
5. आर.के. मुन्शी, द इंडियन वीकिंग काल, पृ. 144-45

ISSN 0972-1894

VOLUME-78

NUMBER-85

Oct-Dece., 2018

*The* **Hindustan Review**



*An International Research Journal of BCARDS*

*A Quarterly Refereed Research Journal of Buddhist  
Centre for Action Research and Development Studies*

# CONTENTS

Sl. No.	ARTICLES FROM THE EDITOR	AUTHORS	PAGE No.
17.	बंगाल से बिहार विभाजन का कारण	डॉ० विरेन्द्र प्रसाद सिंह अनु कुमारी	97-99
18.	द्वितीय विश्वयुद्ध और भारतीय राष्ट्रियता का विकास	डॉ० हरि कृष्ण सिंह छोटन कुमार	100-105
19.	1857 के स्वाधीनता संग्राम में इलकारी बाई का योगदान	डॉ० विरेन्द्र प्रसाद सिंह दुर्गेश कुमार सिंह	106-109
20.	सध्यायुगीन हिन्दु समाज में नारी की सामाजिक स्थिति	डॉ० ब्रज किशोर सिंह किरण कुमारी	110-113
21.	भारत छोड़ो आन्दोलन में बिहार के युवाओं की भूमिका	डॉ० सीमा पटेल ✓ लव कुमार	114-116
22.	दलित समस्या और महात्मा फुले	डॉ० विजय कुमार सिंह नीतू	117-120
23.	भारत में ब्रिटिश शिक्षा का विकास	डॉ० राजीव कुमार प्रीति गुण	121-126
24.	बिहार की राजनीति में अनुसूचित जाति की महिलाओं की भूमिका	डॉ० रामलाल सिंह सुमन कुमारी पाण्डेय	129-133
25.	भारतीय पुनर्जागरण और नारी मुक्ति संघर्ष	डॉ० टीरा प्रसाद सिंह स्वास्ति कुमारी	134-140
26.	भारतीय मुसलमानों में राष्ट्रीय जागरण	डॉ० विरेन्द्र प्रसाद सिंह विनोद कुमार	141-146
27.	रेवास का जीवन वृत्त और उनकी शिक्षा	डॉ० सुशीला सिंह महेश कुमार	147-152
28.	भारत में पुलिस प्रशासन का इतिहास	डॉ० उमेश कुमार धर्मराज मिश्रा	153-157
29.	Origins of Gurushishya Parampasra In Ancient India	Hira Singh	158-161
30.	حاجتگاه شاه ارزانی: ایک تحارف	محمد نسیم البدرین و نسیم حسینی	162-168



## भारत छोड़ो आन्दोलन में बिहार के युवाओं की भूमिका

डॉ० सीमा पटेल

एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग  
एम०वी०भी०पी० कॉलेज, भभुआ  
वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

लव कुमार

शोध छात्र  
इतिहास विभाग,  
वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

भारत के स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान मानव क्रांति के दिनों में बिहार ने दृढ़ संकल्प व अदम्य उत्साह के साथ-साथ अपने शौर्य का परिचय दिया। गोंधीजी द्वारा सत्याग्रह का चंधारण में सफल प्रयोग के बाद सभी आंदोलनों में बिहार के युवाओं ने समुचित योगदान दिया। किन्तु जिस आंदोलन में बिहार के युवाओं ने अपना सर्वस्व न्योछाकर कर दिया वह था अगस्त 1942 का आन्दोलन।

द्वितीय विश्वयुद्ध की प्रगति और उससे उत्पन्न गंभीर परिस्थिति के मद्देनजर मार्च 1942 में ब्रिटिश प्रधानमंत्री चर्चिल ने युद्धोपरांत भारत को औपनिवेशिक स्वराज्य प्रदान करने की घोषणा की। इस व्यवस्था की रूपरेखा प्रस्तुत करने हेतु 22 मार्च, 1942 को स्टेटफोर्ड क्लिफ भारत आये। परन्तु उनके प्रस्ताव राष्ट्रवादियों के लिए अपर्याप्त एवं असंतोषजनक थे। अतः अगस्त 1942 में कांग्रेस ने 'भारत छोड़ो आंदोलन' का आह्वान किया।

9 अगस्त 1942 को कांग्रेस के सभी महत्वपूर्ण नेता गिरफ्तार कर लिए गये। कांग्रेस को अवैध घोषित कर दिया गया। इसी दिन राजेन्द्र प्रसाद, फूलन प्रसाद वर्मा, मधुरा प्रसाद को गिरफ्तार कर लिया गया। 10 अगस्त को श्रीकृष्ण सिंह 11 अगस्त को जनुग्रह सिंह गिरफ्तार किये गये। इन नेताओं की गिरफ्तारी के साथ ही आंदोलन अनियंत्रित हो गया तथा इसने संपूर्ण बिहार को अपने आगोश में ले लिया।

11 अगस्त को पटना में एक लोमहर्षक घटना घटी। इस दिन छात्रों के एक जुलूस ने सचिवालय भवन के सामने विधायिका की इमारत पर राष्ट्रीय झण्डा लहराने की कोशिश के क्रम में पुलिसिया बर्बरता के शिकार बने और शहादत दी। ये शहीद थे-उमाकांत सिंह, रामानंद सिंह, सतीश प्रसाद झा, देवीपद चौधरी, राजेन्द्र सिंह, रामगोविन्द सिंह और जगपति कुमार। 12 अगस्त को इस गोलीकांड के विरोध में पटना में भूयं हड़ताल रही। उसी दिन शाम में कांग्रेस मैदान में आयोजित सभा में जगतनारायण लाल की अध्यक्षता में एक प्रस्ताव पारित हुआ कि संधार सुविधाओं को ठप्प कर दिया जाए। फलतः पूरे बिहार में रेल पटरियों उखाड़ी गई, तार व टेलीफोन की लाइनें फाट दी गईं, डाकघर-रेलवे स्टेशनों, धानों अन्य

सरकारी इमारतों को जलाया गया और पुलिस घर भी आक्रमण किये गये। आन्दोलन का व्यापक प्रसार बिहार के अन्य भागों में भी हुआ।

सीवान घाने पर राष्ट्रीय झण्डा लहराने की कोशिश में फूलेंग प्रसाद श्रीवास्तव पुलिस की गोली के शिकार बने। सारण में जगलाल चौधरी ने पुलिस घाने को जला दिया। सिधाराम सिंह के नेतृत्व में उत्तरी भागलपुर में राष्ट्रीय सरकार की स्थापना की गई। गया के कुर्था घाने पर झण्डा लहराने के क्रम में ध्रुव कुमार ने शहादत दी। झुमरौंघ में ऐसे ही प्रयास में कपिल मुनि ने शहादत दी। दरभंगा में कुलानंद वैदिक और दीघवारा में कर्पूरी ठाकुर ने संचार व्यवस्था को ठप्प करने का कार्य किया।

सारण जिला के रघुनाथपुर, सीवान, परसा, मांझी, एकमा, दीघवारा, दरोली, बैकुण्ठपुर आदि में ब्रिटिश प्रशासन घराशाही हो गई एवं वहाँ स्थानीय लोगों ने स्वतंत्र मण्डल नाम से अपनी प्रशासनिक व्यवस्था लागू कर दी। हाजीपुर, मुजफ्फरपुर, सीतामढ़ी और दरभंगा के क्षेत्रों में ऐसे कई स्थानों पर क्रांतिकारी सरकारें संगठित कर ली गईं। गाँवों में पंचायतों व रक्षा दलों की स्थापना की जाने लगी और राष्ट्रवादियों ने वस्तुतः सरकार की स्थापना कर ली।

आन्दोलन में तीव्रता आने के उद्देश्य से जयप्रकाश नारायण ने नेपाल में 'आजाद दस्ता' का गठन किया। वे 9 नवम्बर 1942 को हजारीबाग जेल से रामानंद मिश्र, योगेन्द्र शुक्ल, सुरज नारायण सिंह, शालिग्राम सिंह के साथ भागकर नेपाल चले गये। वही से 'आजाद दस्ता' द्वारा युवकों को तोड़-फोड़ की कार्यवाही के लिए प्रशिक्षण देने का कार्य उन्होंने किया। आजाद दस्ता से प्रभावित होकर बिहार में भागलपुर एवं पूर्णिया में भी इसी तरह का संगठन बनाया गया। पहाड़ पर रेडियो स्टेशन बनाने का निर्णय हुआ एवं राममनोहर लोहिया को रेडियो एवं प्रचार विभाग का अध्यक्ष बनाया गया। एक बिहार प्रान्तीय आजाद परिषद् का गठन किया गया जिसका संयोजक सुरज नारायण सिंह को बनाया गया। कोसी नदी के किनारे 'बकरो का टापू' नामक स्थान से आजाद दस्ता का संचालन किया जाता था। 1943 के अंत तक आजाद दस्ता सक्रिय रहा। परन्तु भारत सरकार के दबाव में नेपाल सरकार द्वारा मई 1943ई० जय प्रकाश नारायण एवं राम मनोहर लोहिया समेत कई प्रमुख नेताओं की गिरफ्तारी के कारण यह प्रवास शनै-शनै शिथिल पड़ गया।

भारत छोड़ो आन्दोलन के दरम्यान बिहार की कई वीरान्ताओं ने अपनी जान हथेली पर रखकर संपूर्ण महिला समाज को सक्रिय भागीदारी हेतु उत्प्रेरित किया। 9 अगस्त को महिलाओं का विराट जुलूस पटना से निकाला गया, जिसका नेतृत्व डॉ० राजेन्द्र प्रसाद की बहन श्रीमती भगवती देवी कर रही थीं। गोविन्दपुर के श्री नरसिंह गोप की पत्नी जिरियाबती देवी ने अंग्रेज सिपाही को गोली मार दी। छपरा में शांति देवी ने एक विशाल जनसभा की अध्यक्षता की। दिघवारा प्रखण्ड पर तिरंगा फहराने के जुर्म में दो

सभी बहनों शरदा एवं सरस्वती को 14 एवं 11 वर्ष की सजा दी गई। गया जिले की प्यारी देवी को कैम्प जेल भेज दिया गया जहाँ उनकी मौत हो गई। वैशाली में सुनीति देवी एवं राचिका देवी ने पुरुष वेश में माईकिल यात्रा द्वारा जन जागरण पैदा किया। सितम्बर 1942 में चौधम घाने के सहियार गाँव में पुलिस की गोली से कई महिलाएँ मारी गईं।

आन्दोलन के दौरान पुलिस क्लब में भी प्रतिक्रिया हुई। श्री रामानंद तिवारी के नेतृत्व में पुलिस संघ के सत्याग्रह में 500 पुलिसकर्मियों ने गिरफ्तारी की तथा पुलिसिया जुल्म के विरोध में उपवास रखा। छात्रों के संगठित प्रयास द्वारा कुछ रेलगाड़ियों पर कब्जा कर लिया गया और इसे एक स्थान से दूसरे स्थान पर चलाकर आंदोलन का प्रचार किया गया। इस ट्रेन को 'स्वराज ट्रेन' नाम दिया गया।

भारत छोड़ो आन्दोलन में बिहार के युवाओं का महत्ती योगदान रहा। यह इस तथ्य से प्रमाणित होता है कि बिहार में 15 हजार से अधिक लोग बंदी बनाये गये। 8783 व्यक्ति को सजा हुई और 134 व्यक्ति मारे गये। इस प्रकार स्वतंत्रता से पूर्व भारतीय राजनीति में युवाओं की भागीदारी उच्च स्तर पर पहुँच चुकी थी। स्वातंत्र्योत्तर भारत में भी यह प्रवृत्ति जारी रही। 1950 के दशक तथा उसके पश्चात् भी युवाओं ने महत्त्वपूर्ण गुदों से जुड़कर राजनीति में सक्रिय भागीदारी निभाई।

#### संदर्भ ग्रंथ-सूची :-

1. के०के० दत्त: बिहार में स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास, पटना।
2. बलदेव नारायण: अगस्त क्रांति, पटना।
3. इम्तिआज अहमद: बिहार का परिचय, पटना, 2008।
4. विवेकानंद गुप्त: द नाइनटीम फोर्टी टू दि रिलेक्विन विद स्पेशल रेफरेंस टू सिरहुत, पी०एच०डी० वीसिस, पटना विश्वविद्यालय।
5. कुमार अमरेन्द्र: स्वतंत्रता आंदोलन में बिहार की महिलाओं का योगदान, पटना, 1958।
6. शिवपूजन सहाय: बिहार की महिलाएँ, पटना।



ISSN 0972-1894

Jan-Mar, 2018

VOLUME-75

NUMBER-83

The

# Hindustan Review



**An International Research Journal of BCARDS**

*A Quarterly Referred Research Journal of Buddhist  
Centre for Action Research and Development Studies*

UGC Approved Journal No - 62908; Social Science : Arts and Humanities, Serial No- 278



## CONTENTS

Sl. No.	ARTICLES FROM THE EDITOR	AUTHORS	PAGE No.
29.	आरक्षण और सामाजिक न्याय	डॉ० बेचू प्रसाद अंजय कुमार रेड्डी	184-188
30.	सामाजिक न्याय, मानवाधिकार और पुलिस	डॉ० उमेश कुमार परमराज मिश्रा	189-198
31.	भारत छोड़ो आन्दोलन में युवाओं की भूमिका: बिहार के विशेष संदर्भ में	डॉ० सीमा पटेल लय कुमार	197-200
32.	ट्रेड यूनियन के अन्तर्गत भारतीय शिक्षा	डॉ० राजीव कुमार प्रीति सुगन	201-206
33.	बिहार की अनुसूचित जाति की महिलाओं की राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति का अध्ययन	डॉ० रामलखन सिंह सुगन कुमारी पाण्डेय	207-211
34.	आरक्षण और सामाजिक न्याय	डॉ० विरेन्द्र प्रसाद सिंह निगोद कुमार	212-218



## भारत छोड़ो आन्दोलन में युवाओं की भूमिका: बिहार के विशेष संदर्भ में

डॉ० सीमा पटेल

एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग,

एम०वी०भी०पी० कॉलेज, भभुआ

वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

लय कुमार

इतिहास विभाग,

वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

भारत छोड़ो आन्दोलन जिसे अगस्त क्रांति भी कहा जाता है भारतीय जनता की धीरता और देशप्रेम की अद्वितीय मिसाल है। 1942 के क्रिडा मिशन की विफलता एवं ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत के इच्छा के विरुद्ध उसे विश्व युद्ध में साझेदारी बरकरार रखने एवं किसी सामानजनक संगठनों के लिए तैयार न होने से यह आन्दोलन अग्र संभावनी हो गया। इसके साथ-साथ बढ़ती कीमतों एवं जरूरी वस्तुओं के अभाव ने भी जन साधारण के मन में असंतोष भर दिया।

कांग्रेस के कुछ लोग विश्व युद्ध की एक मौका मान रहे थे जो यह चाहते थे कि जिस तरह से प्रथम विश्व युद्ध में भारत द्वारा ब्रिटेन का समर्थन किया गया था, किन्तु उसके बाद भारतीयों को कुछ फायदा नहीं हुआ था। अतः इस मौके में एक बड़ा आन्दोलन छड़ा कर अंग्रेजों को सम्झौते करने पर मजबूर किया जाए। लेकिन नेहरू एवं गांधीजी जैसे लोग भी फासिस्ट विरोधी युद्ध को कमजोर नहीं करना चाहते थे। किन्तु बाद में इस निष्कर्ष पर पहुँच गया कि अधिक चुप रहने से यह स्वीकार कर लेना होगा कि अंग्रेजों को भारतीयों का भाग्य तय करने का अधिकार है। अतः 8 अगस्त को संबई में हुई बैठक में कांग्रेस ने भारत छोड़ो को प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया एवं गांधीजी के नेतृत्व में अहिंसक जनसंघर्ष चलाने का फैसला लिया गया। वहीं पर जनप्रतिनिधियों को संबोधित करते हुए गांधीजी ने "करो या मरो" का नारा दिया। 9 अगस्त की सुबह 'आपरेशन जीरो आवर' के तहत कांग्रेस के सभी महत्वपूर्ण नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया।

भारत छोड़ो आंदोलन को तीन चरण में बांटा जा सकता है। पहला चरण जो भारी और हिंसक था जिसे शीघ्र ही कूचल दिया गया था। इसमें हड़तालें एवं अधिकांश शहरों में सेना और पुलिस के साथ अड़भे सम्भलित थीं। दूसरे चरण में ग्रामीण इलाकों में एवं जुझारू विचारियों का योगदान महत्वपूर्ण रहा। इस चरण में देश के कई स्थानों पर राष्ट्रीय सरकारों की स्थापना हुई, जिनमें तामलुक, सतारा एवं

तलचर की राष्ट्रीय सरकारें प्रमुख थीं। अगले चरण में यह आंदोलन अमानवीय धमन से कमजोर पड़ा इस चरण में आंदोलन कम उग्र एवं लंबा रहा। 1943 तक हजारों लोगों को गिरफ्तार किया गया था, जिसमें बिहार में 16 हजार से अधिक लोगों की गिरफ्तारियाँ उल्लेखनीय रही।

बिहार का इस आंदोलन में भी निर्णायक योगदान रहा। 31 जुलाई को ही राजेन्द्र प्रसाद ने बिहार कांग्रेस कमिटी की एक विशेष बैठक बुलाकर कांग्रेसी कार्यकर्ताओं को भावी संघर्ष के लिए संगठित होने का आदेश दिया। उसी दिन अजुमन इस्लामिया हॉल में आयोजित सभा में छात्रों और युवकों ने कांग्रेस के कार्यक्रम को समर्थन देने की योजना बनाई। आंदोलन शुरू होते ही बिहार प्रांतीय कांग्रेस कमिटी को गैर-कानूनी घोषित कर दिया गया। पुलिस ने सदाकत आग्रम जिला कांग्रेस कार्यालय को भी जवा कर लिया गया।

सरकार के दमनात्मक नीति के विरोध में जनता में विद्रोह की लहर व्याप्त हो गयी। लगभग प्रदेश के सभी जगहों पर राष्ट्रीय झण्डा फहराया जाने लगा। उन दिनों विद्यार्थियों के एक जुलूस ने सचिवालय भवन के सामने विधायिका की इमारत पर राष्ट्रीय झण्डा फहराने की कोशिश की। किन्तु घटना के जिलाधी W.G. आर्चर के आदेश पर उन पर गोली चलाई गई जिसमें सात छात्र मारे गये जिनमें उमाकांत प्रसाद सिन्हा, रामानंद सिंह, सतीश प्रसाद झा, देवीपद चौधरी, राजेन्द्र सिंह, रामगोविन्द सिंह एवं जगपति कुमार थे।

भारत छोड़ो आंदोलन को सरकार द्वारा बलपूर्वक दबाने से क्रांतिकारियों को गुप्त रूप से वापस होना पड़ा। गुप्त गतिविधियों में 'आजाद दस्ता' का महत्वपूर्ण स्थान है। आंदोलन के शुरू में ही जयप्रकाश नारायण को गिरफ्तार कर जेल भेज दिया गया, जहाँ से वे दिपावली की रात 9 नवम्बर 1942 को रामानंद मिश्र, योगेन्द्र शुक्ल, सुरज नारायण सिंह, गुलाब चन्द्र गुप्त और जालिग्राम के साथ हजारीबाग जेल से फरार हो गये एवं नेपाल के जंगल में भूमिगत हो गये। वहीं पर जयप्रकाश नारायण ने अपने सहयोगियों के साथ आजाद दस्ता का गठन किया। इस दस्ते में कई युवा लोग शामिल हुए। 1943 में आजाद दस्ता के पहले प्रशिक्षण शिविर में बिहार के 25 युवकों को सरदार नित्यानंद सिंह के निर्देशन में प्रशिक्षण दिया गया। किन्तु बाद में बड़े नेताओं के गिरफ्तारी से आजाद दस्ते का कार्य शिथिल हो गया।

इस आंदोलन की एक विशेष घटना यह थी कि कुछ युवा छात्रों ने कुछ रेलगाड़ियों पर कब्जा कर लिया और इन ट्रेन को अपने नियंत्रण में एक स्थान से दूसरे स्थान पर चलाकर आंदोलन का

प्रचार-प्रसार किया। इस ट्रेन का नाम 'स्वराज ट्रेन' रखा गया। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में पढ़ने वाले बिहारी छात्रों ने इस आंदोलन के प्रसार के लिए गांव-गांव का दौरा किया।

1942 में राजेन्द्र प्रसाद के गिरफ्तारी की सूचना मिलते ही वी.एन. कॉलेज के युवा छात्रों ने हड़ताल निकाला तथा इंजीनियरिंग कॉलेज पटना ट्रेनिंग कॉलेज, साइंस कॉलेज आदि संस्थानों के भवनों एवं छात्रावासों पर झण्डे फहराये गये। इसके साथ-साथ छात्राओं ने बिहार केंद्रीय छात्र परिषद नामक एक नए संगठन भी बनाया था।

गांवों में पंचायतों और रखा दलों की भी स्थापना की जाने लगी। इस आंदोलन के क्रम में हिंसा और पुलिस दमन के कई उदाहरण सामने आये। सीवान घाने में झण्डा फहराने की कोशिश में फुलेना प्रसाद श्रीवास्तव मारे गये। वहीं मारण में जगलाल चौधरी, दरभंगा में कृत्तानंद वैदिक और सिधधारा में संपूर्ण ठाकुर ने संसार व्यवस्था को ठप्प कर दिया।

सौम्यता और विस्तार दोनों दृष्टि में बिहार अग्रणी था। इस आंदोलन में आदिवासियों की पर्याप्त भागीदारी रही थी क्योंकि एक कांग्रेसी सूत्र के अनुसार मारे जाने वालों में सबसे अधिक लोग हनारीवाग जिले के ही थे। ताना भागत आंदोलनकारियों ने भी अपने क्षेत्र में ब्रिटिश सत्ता को चुनौती दी थी। जमशेदपुर के टिस्को के मजदूरों ने भी हड़ताल कर दी थी।

जनता द्वारा पुलिस थानों पर चाबा बोलने की सबसे अधिक घटना बिहार में ही घटी थी। 15 अगस्त को लिनलिथगो ने पटना के आसपास संचार साधनों का अस्त-व्यस्त कर रही भीड़ पर आसमान से मशीनगनों द्वारा गोलियों बरसाने का आदेश दिया था। इसके साथ-साथ भागलपुर एवं मुंगेर में आंदोलन दबाने के लिए वायुयानों का प्रयोग किया गया था। दरभंगा के राजा ने न केवल सरकार को अपने सशस्त्र सैनिकों देने से मना कर दिया बल्कि गिरफ्तार लोगों की मदद भी की।

बिहार में इस आंदोलन को जिसने प्रचण्ड बनाया, उनमें किसानों का भारी विद्रोह एवं महिलाओं के योगदान की महत्वपूर्ण भूमिका थी। पटना में जहाँ इस आंदोलन का नेतृत्व श्रीमती भगवती देवी ने की तो हजारीवाग में श्रीमती सरस्वती देवी ने वहीं भागलपुर में श्रीमती माया देवी ने इस आंदोलन को आगे बढ़ाया।

अन्तरराष्ट्रीय दबाव एवं गांधीजी के उपवास के बावजूद सरकार ने इस आंदोलन को कुचलने के लिए सबकुछ किया उसके दमन की कोई सीमा नहीं रही। 1857 के बाद से भारत में इतना निरमम दमन के लिए सबकुछ किया उसके दमन की कोई सीमा नहीं रही।

कभी नहीं देखने को मिला था। आंदोलन की एक विशेषता तो यह रही थी कि निजी सम्पत्तियों पर आक्रमण नहीं किया गया था। इसके साथ इस आन्दोलन के अन्य विशेषता आजादी की मांग राष्ट्रीय आन्दोलन को पहली मांग बन गई। सरकार अन्ततः आंदोलन को कुचलने में सफल रही। 1942 का यह आंदोलन यद्यपि काफी सक्षिप्त रहा, किन्तु इसका महत्व इरर वात से था कि इसने दिखाया कि देश में राष्ट्रवादी भावनाएँ किस गहराई तक अपनी जड़े जमा चुकी थी और जनता संघर्ष और बलिदान की कितनी बड़ी क्षमता प्राप्त कर चुकी थी। यह स्पष्ट हो गया था कि जनता की इच्छा को विरुद्ध भारत पर शासन कर सकना अब अंग्रेजों के कठिन हो गया था। भारत के आजादी प्राप्ति में निःसंदेह यह आंदोलन एक मील का पत्थर साबित हुआ।

#### संदर्भ ग्रंथ-सूची :-

1. चन्द विष्णिः भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय, निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, 1999
2. सरकार सुमितः आधुनिक भारत, राजकमल प्रकाशन, पटना-2002
3. राउत सुरेन्द्रः विहार समग्र, कुमार बुक सेन्टर, दिल्ली-2009
4. ग्रोवर बी. एल. एवं गशपालः आधुनिक भारत का इतिहास, एम चन्द एंड कंपनी लिमिटेड, नई दिल्ली-2002
5. शुक्ला रामलक्ष्मणः हिन्दी माध्यम कार्यान्वय, निदेशालय दिल्ली, विश्वविद्यालय, 2003
6. पाठक लक्ष्मीः भारत में अंग्रेजी राज, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली- 2003
7. सिंह अयोध्याः भारत का मुक्ति संग्राम, मैकमिलन कंपनी ऑफ इंडिया, नई दिल्ली, 1977



Approved by UGC  
Journal No. : 63580  
Regd. No. 21747

Indexed : IJIF, IZOR & SJIF  
IJ Impact Factor : 2.471  
ISSN 2277-2014

# Research Discourse

*An International refereed research Journal*

Year-VIII

No. 4

Supplement 2018

Editor in Chief

**Anish Kumar Verma**

Associate Editors

**Rakesh Kumar Sharma**

**Parasottam Lal Vyas**

**Ramesh Mishra**



International  
Innovative Journal  
Impact Factor (IJIF)



Scientific Journal Impact Factor

•	ओजोन क्षरण : संकल्पनात्मक पृष्ठभूमि डॉ० लतीफ इब्न तियागी	154-155
•	चन्दौली जनपद के प्राथमिक स्तर के सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के सेवादाता शिक्षकों में शिक्षण दायित्व बोध का तुलनात्मक अध्ययन अमृता भीमासाय व डॉ० विशाखा शुक्ला	156-156
•	भारतीय संस्कृति की समन्वयशील परम्परा : एक ऐतिहासिक विश्लेषण डॉ० नैला कुमारी	159-161
•	धार्मिक सामाजिक स्तर एवं सामाजिक समायोजन डॉ० छाया कुमारी	162-163
•	दृष्टिबाधित बालक व दृष्टिबाधित बालिकाओं के सम्प्रत्यय प्राप्ति का तुलनात्मक अध्ययन बीरल कुमार भारती व प्रो० आशा पाण्डेय	164-167
•	ज्ञान का परम्परागत दृष्टिकोण तथा अंग्रेजी शिक्षा नरेंद्र कुमार व डॉ० सीमा पटेल	168-170
•	महर्षि अरविन्द घोष के शैक्षिक विचार एवं समकालीन संदर्भ जयन्ती	171-173
•	प्रेमचन्द की कथात्मक भाषा सुजय कुमार	174-175
•	राष्ट्रीय आंदोलन की यात्रा में अनुग्रह नारायण सिंह की भूमिका राजीव रंजन	176-178
•	शिक्षा : प्लेटो के विशेष सन्दर्भ में अनुराधा कुमारी	179-180
•	भारत में परिवार कल्याण कार्यक्रम प्रीति द्विवेदी	181-182
•	जाति प्रथा ग्रामीण सामाजिक स्तरीकरण का प्रमुख आधार डॉ० मनीराम	183-184
•	सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के गद्य साहित्य में सामाजिक स्वरूप डॉ० पंकज कुमार राय	185-186
•	मानसून का पूर्वानुमान : भारत के सन्दर्भ में नवीन विश्लेषण मुकेश कुमार शर्मा	187-189
•	विश्वनामित्र : मिथक के आड़ में आधुनिक विसंगतियों से संवाद साधना गादव	190-192
•	नाटक : अध्ययन और अनुशीलन डॉ० सन्तोष कुमार	193-194
•	गहिसा सशक्तिकरण लता कुमारी	195-197
•	कर्मचारीतंत्र : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन स्निग्धा सिंह	198-200

## ज्ञान का परम्परागत दृष्टिकोण तथा अंग्रेजी शिक्षा

नरेन्द्र कुमार\* व डॉ० सीमा पटेल\*\*

\*शोधार्थी, वीर कृष्ण मिश्र विश्वविद्यालय, अरा, बिहार

\*\*शोध विद्वान, एस्को पीए, लखनऊ कलेज ऑफ़ पेटेंट कानून, मधुवा, बिहार

**सारांश :** प्रस्तुत शोध पत्र ज्ञान का परम्परागत दृष्टिकोण तथा अंग्रेजी शिक्षा को प्रकाश में लाने का प्रयास करता है। भारत में सामूहिक रूप से शक्तिशाली उच्चतर वर्ग के संपादन हो जाने से नया मध्यम वर्ग सामने आया। आरम्भिक युग में इस वर्ग के लोग अपने को स्वाभाविक रूप से ब्रिटिश शासन के द्वारा उपयुक्त मानते थे। व्यापारियों का धन, जमींदार वर्ग की लगन से तथा दूसरे वर्गों के देन आदि ऐसे स्रोतों से प्राप्त होते थे, जो मुख्यतः अंग्रेजी शिक्षा ने पैदा किए थे, इसलिये ये वर्ग अपने हितों-विषयों के प्रति कृतज्ञ थे। पर ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, त्यों-त्यों धीरे-धीरे लोगों की भाँति दूर होने लगी। प्रस्तुत शोध पत्र पूर्व के अध्ययनों से प्रत्यक्ष है तथा अध्ययन विषय एवं समाज के लिए महत्वपूर्ण है।

**मुख्य शब्द :** नया मध्यम वर्ग, उच्चतर शासक वर्ग, परम्परागत बुद्धिजीवी वर्ग, परम्परागत जीविका, सांस्कृतिक घटकों आदि।

एक तरफ ब्रिटिश विजय का सामाजिक परिणाम यह रहा कि उच्चतर शासक वर्ग का अंत हो गया और दूसरी तरफ इसका परिणाम यह हुआ कि ब्राह्मण का परम्परागत बुद्धिजीवी वर्ग कमजोर पड़ गया। इसका आंशिक कारण यह था कि संरक्षकता के सारे हथकण्ड यानी राजदरवाजे, सुबेदारों, सरदारों और जमींदारों के दरबार भुंगे हो गए थे। इसके अलावा आंशिक रूप से दूसरा कारण यह था कि कम्पनी ने पहले से चलती आई, धार्मिक व्यक्तियों और विद्वानों को वी-हुई लगानमुक्त जमीनों को फिर से ले लिया। इस प्रकार अपनी परम्परागत जीविका से वंचित होने के बाद वे जहाँ भी हो सका, नौकरी और राजगार ढूँढने के लिये बाध्य हुए। एसाब कैंड के शब्दों में "प्राचीन विद्या और संस्कृति की जड़ों पर कुठाराघात हुआ, अतः जिस प्रभाव से हिन्दू संस्कृति में उदासता तबों का उदभव हुआ था, वह जाता रहा, पर जिस प्रभाव के कारण इसमें कृसनकार और हास्यास्पद तत्त्वों का प्रवेश हुआ, वह बढ़ गया।"

भारतीय मन पर जिन सामाजिक घटकों ने बहुत अधिक प्रभाव डाला और जीवन की नैतिक, सौन्दर्य-परक, सामाजिक, नैतिक और धार्मिक संभराओं के सम्बन्ध में नए ढाँचों का विकास किया, उनमें पाश्चात्य ज्ञान का विस्तार जो सबसे महत्वपूर्ण स्थान देना चाहिये।

इतना तो स्मरण दिया जा सकता है कि आधुनिक पाश्चात्य ज्ञान आवश्यक रूप से वैज्ञानिक, वस्तुपरक, आलोचनात्मक, भास वाच्य प्रमाणों से दूर तथा मौखिक और गुञ्जासंगत प्रक्रियाओं से प्राप्त किया गया है।

परम्परागत ज्ञान एक सुसम्बद्ध समग्र ज्ञान माना जाता था। इसके अध्ययन की कठिनाई इस कारण से नष्ट जाती थी कि संस्कृत भाषा का ज्ञान अपरिच्छेद था और समृद्ध शब्द कोष और खटित व्याकरण से युक्त संस्कृत भाषा का अध्ययन बहुत परिश्रम साध्य था। इस प्रकार से ज्ञान प्राप्त करने की परिस्थितियों के कारण ही यह चीज के मैटरी-नी की तरह अनिवार्यतः इसके भक्तों का एक छोटा-सा और युवा हुआ दल रह गया। उनके लिए जीविका कमाना जरूरी नहीं था क्योंकि उनका पालन करना सरकार या समाज का कर्तव्य था। यद्यपि वे लोक संग्रह की दृष्टि से गरीब थे, फिर भी आध्यात्मिक रूप से धनी थे और समाज में उनका बड़ा आदर था। उनमें से राव तो नहीं, पर अधिकांश ब्राह्मण थे और कुछ लोग हिन्दुओं की अन्य जातियों के लोग थे।

हिन्दू और मुस्लिम विद्वानों के दायरे अक्सर अपनी ही तक सीमित थे, इसलिये उन्होंने, कुछ अपवादों को छोड़कर अपने ज्ञान का आदान-प्रदान नहीं किया। मतीजा यह हुआ कि उन्होंने एक दूसरे के मन को भी समृद्ध नहीं बनाया। इसके अलावा अठारहवीं शताब्दी राजनैतिक मझबूठी और वीदिक द्वारा का युग था। उभय-पुस्तक के काल में जबकि युद्ध और हिंसा का सर्वत्र नोलबाला था, विज्ञान का मनपना संभव नहीं था। पर जब ब्रिटिश विजय से शान्ति स्थापित हुई, तो ज्ञान वृद्धि की प्राथमिक शर्तें पूरी हो गईं। विज्ञान अपने साथ एक नए प्रकार का ज्ञान ले आए थे जिसके बीज उर्वर भूमि पर गिरे और फले-फूले।

**शिक्षा के क्षेत्र में ईसाई मिशन :** प्तारी के युद्ध के पहले के समय में बौद्धिक परिवर्तन के दो मुख्य अभिकरण थे। भारतीयों के तरह से यूरोपीय सौदागरों के प्रभाव में आए, एक तो व्यापारी संस्थाओं में और दूसरे प्रशासन कार्य में।

जो ईसाई मिशनरी भारत में ईसाई धर्म का प्रचार करना चाहते थे, वे भारतीयों में जाकर साईबल का प्रचार करते थे और ईसाई मातृवर्ण में भारतीय बच्चों की शिक्षा के लिए स्कूल खोलते थे।

प्रारम्भिक सोपानों में, ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने ईसाई धर्म को प्रचार में कोई दिलचस्पी नहीं ली, यद्यपि 1698 के अधिकार पत्र में कारखानों के पाठरियों से यह कहा गया था कि वे "देरी भाभाई सीखें ताकि वे उन निवासियों को जो कम्पनी के नौकर या गुलाम होंगे उनको कम्पनी के एजेंटों एवं प्रोटेस्टेंट धर्म की शिक्षा अधिक अच्छी तरह से दे सकें।" पर कम्पनी मुनाफा कमाने में इतनी धरती थी कि यह हिदायत धरी रह गई।

प्तारी के बाद बंगाल में प्रोटेस्टेंट मिशनरियों के कार्य ने जोर पकड़ा। 1758 में वेनिस मिशन के कीरमान्ण्डेर कलकत्ता पहुँचे और वसाइय ने उन्हें अपना मिशन शुरू करने की अनुमति दी। पर उनका कार्य अधिकांश अंग्रेजों और पुर्तगाली कहलाने वाले





के सभी संप्रदाय साहित्य की उन्नति में बाधक थे, मानो उनका सृजन प्रगति को रोकने के लिए हुआ था न कि मान्य बुद्धि को ज्वा बढ़ाने के लिए।”

उनको आशा थी कि “अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करने के बाद भारतीय लोग ब्रिटिश शासन के भक्त हो जाएंगे। उसी प्रकार शिक्षित होकर, उन्हीं लक्ष्यों से प्रेरित होकर, हमारे साथ उन्हीं उद्देश्यों में संलग्न होकर वे हिन्दू से बर्ती ज्यादा अंग्रेज हो जाएंगे, जैसे कि रोमन साम्राज्य के अधीन गाल या इटालियन लोग रोमन ज्यादा हो गए थे।”

यद्यपि इस भविष्यवाणी का पहला अंश कुछ हद तक पूरा हुआ है पर इसका दूसरा भाग ट्रेवेलियन की आशाओं से कुछ विपरीत उतरा। फिर भी कुल मिलाकर गैकले और ट्रेवेलियन की भविष्यवाणियों आश्चर्यजनक रूप से सही प्रमाणित हुईं। पर यह बहुत अत्युक्ति होगी कि भारतीय लोग रंग और बगड़े के अतिरिक्त सभी विषयों में अंग्रेजी की नकल बन गए हैं या ब्रिटिश शासन के प्रति शिक्षित भारतीयों के वाफादारी अंग्रेजी शिक्षा के कारण बढ़ी हुई है। बल्कि परिणाम इसके विपरीत ही हुआ है।

**भारतीय भाषाओं की अवहेलना :** यह कहा गया कि भारतीय भाषाओं के जरिए ही माध्यमिक विद्यालयों की शिक्षा संभव है और भारतीय साहित्य के विकास पर उसका अच्छा असर होगा। प्रमाण में बम्बई का उदाहरण दिया गया, जहाँ अधिकोश माध्यमिक विद्यालयों में भारतीय भाषाएँ शिक्षा के माध्यम के रूप में चल रही थीं।

यह मानते हुए कि भारतीय शिक्षकों की नियुक्ति की दृष्टि से भारतीय भाषाओं के जरिए, शिक्षा अधिक सरती और सुविधाजनक हो सकती है, आकलैंड ने इस कारण इस सुझाव को मानने से इंकार कर दिया कि “देशी नवयुवक हमारे विद्यालयों में देशी भाषा की रचना सीखने नहीं आएंगे।”

1837 में बम्बई में शिक्षा के माध्यम के प्रश्न पर उच्च न्यायालय के न्यायाधीश, शिक्षा मण्डल के अध्यक्ष और आंग्लवादी सर एरस्कीन पेरी ने तथा कर्नल जार्विस, जगन्नाथ शंकर सेठ और मण्डल के दूसरे भारतीय सदस्यों में द्वंद्व चला। जगन्नाथ शंकर सेठ ने 1847 की पहली मई को बोर्ड को सामने अपने मन्तव्य में कहा—“यदि हमारा उद्देश्य भारतीयों में ज्ञान का प्रचार तथा मानसिक उन्नयन है, तो मेरा यह मत है कि यह ज्ञान उन्हें उनकी अपनी भाषा में दिया जाए। भला और किस उपाय से हम यह आशा कर सकते हैं कि हम कभी स्त्रियों में शिक्षा का व्यापक प्रसार करेंगे? मैं फिर कहता हूँ कि मैं अंग्रेजी की शिक्षा को किसी भी प्रकार निरुत्साहित नहीं करना चाहता, पर मैं विश्वास करता हूँ कि यह आग जनता की पहुँच के बाहर है।” 1833 के बाद बम्बई और मद्रास की प्रेसिडेंसियों पर गवर्नर जनरल का नियंत्रण बढ़ गया। इसका उपयोग बम्बई की मद्रति को बंगाल की पटरी पर लाने में किया गया। इस प्रकार बोलचाल की भाषाओं का पक्ष कमजोर पड़ गया और अंग्रेजी, उच्चतर शिक्षा के माध्यम के रूप में स्वीकृत हुई। यह कहा गया है कि अंग्रेजी ने विभिन्न भाषाएँ बोलने वाले भारतीयों को एक सामान्य भाषा दी, और इस प्रकार भारत के सारे भागों में, परस्पर विचार विनिमय का एक साधन प्राप्त हो गया।

#### सन्दर्भ :

1. एस०के० दे, “हिस्ट्री ऑफ बंगाली लिटरेचर इन द नार्थ-वेस्टीय सेप्टरी” कलकत्ता विश्वविद्यालय, 1919, पृ. 31
2. जे० रिक्टर, “ए हिस्ट्री ऑफ मिशन इन इंडिया,” एस० एच० मूर द्वारा अनूदित, 1908, पृ. 129
3. निदेशक मण्डल की समिति का उत्तर 18 अगस्त, 1824, देखिए : ए० हावेल, पृ. 15-16
4. निदेशक मण्डल की समिति का उत्तर 18 अगस्त, 1824, देखिए : ए० हावेल, पृ. 17-18
5. “दि इंग्लिश बक्स ऑफ राजा रामसेठन राय”, जे०सी० चोप द्वारा सम्पादित, जिल्ड 2, कलकत्ता, 1903, पृ. 324
6. कोर्ट ऑफ गवर्नर्स का पत्र बंगाल के परिषद् गवर्नर जनरल के नाम, 5 सितम्बर, 1827
7. सिलेक्शन्स फ्रॉम एजुकेशनल रेकॉर्ड्स, भाग-1, 1781 से 1839, कलकत्ता, पृ.50
8. सिलेक्शन्स फ्रॉम एजुकेशनल रेकॉर्ड्स, भाग-1, 1781 से 1839, कलकत्ता, पृ.50



Approved by UGC  
Journal No. 48923  
IJJ Impact Factor : 2.695

ISSN : 2348-4624  
Year : V, No. : XVII, Issue-I  
January-March, 2018

# Śodha Mīmāṃsā

An International Refereed  
Research Journal

Editor in chief

**Dr. Rakesh Kumar Maurya**

Associate Editor

Dr. Anish Kumar Verma & Dr. Devi Prabha

Published by :

**Kusum Jankalyan Samiti**

Deoria, U.P. (INDIA)

विद्यालयीय पाठ्यक्रम का विद्यार्थियों की उपस्थिति, शैक्षिक निष्पत्ति तथा समायोजन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन  
सम्बन्धित साहित्य के पुनर्निरीक्षण 64-66

पूजा कुमारी

नागार्जुन के उपन्यासों में प्रगतिशील चिन्तन : आर्थिक तथा राजनीतिक संदर्भ में 67-69

श्रीती सिंह

उच्च शैक्षिक संस्थाओं में विद्यार्थियों की उपस्थिति की समस्या एवं समाधान 70-71

अनुराधा कुमारी

तनाव प्रबंधन में श्रीमद्भागवद्गीता की उपदेयता 72-75

श्री नारायण मिश्र

भारत के कृषि क्षेत्र में विद्यमान समस्याओं का आलोचनात्मक मूल्यांकन 76-78

मुकेश कुमार शर्मा

पश्चिमी ज्ञान विज्ञान से सम्पर्क एवं प्रभाव 79-81

नरेश कुमार व डॉ० सीमा पटेल

परिणत समय में छात्रों की शैक्षिक सफलता में शिक्षक नेतृत्व की प्रसंगिकता : एक अध्ययन 82-86

उदुल

भारत में संसदीय शासन प्रणाली (ऐतिहासिक पृष्ठभूमि) 86-89

डॉ० ज्ञान गुप्ता

नाट्य मंचन में अभिनय की भूमिका 89-90

डॉ० सतीश कुमार

नैतिक अवमूल्यन और बौद्ध दर्शन 91-93

डॉ० सुनील कुमार खंडा

स्त्री मनोविज्ञान : कृष्णा सोनती एक गूढ़ 94-96

सुधिया सिंह

मानव संसाधन विकास केंद्रों द्वारा संचालित कार्यक्रमों के प्रति शिक्षकों की अभिवृत्ति का अध्ययन 97-99

सन्मित सिंह

लोक जीवन की मानवीय व्याख्या 99-101

सुगता जायसवाल व प्रो० मंजु किशोर शिंदी

परम्परा एवं आधुनिकता : एक अध्ययन 102-104

सोहा सिंह

विद्युत्संयोजकशास्त्र में वर्णित वनस्पतियों का परिचय एवं उपयोग 105-108

डॉ० विश्वज्योति दत्त द्विवेदी

नागार्जुन की प्रगतिशील शैली अथवा धर्म और लक्षण का शिल्प विज्ञान 109-110

डॉ० किरण कुमारी मिश्रा

अनुसूचित जाति की महिलाओं में शातनदी का प्रभाव : एक अध्ययन 111-114

स्वीता कुमारी

सर्व शिक्षा योजना : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन 115-117

छोटे शास्त्र

संस्कृत साहित्य में काव्यमयी तब गद्य परिचय 118-119

डॉ० जय शोषण शंकर

धर्मशास्त्रसाहित्यविद्ययासक्त विवेचनम् 120-122

डॉ० शिवका मन्द पाशवान

जवाहर न्याय नेहरू और सुभाषी जी के सम्बन्धी का विस्तृतमात्मक अध्ययन 123-125

जितेंद्र प्रसाद

साम्प्रत वेदान्त की ज्ञान-संगता 126-128

दीपनारायण शारदेय व डॉ० किन्सा कुमारी

सामाजिक किलाने एवं जागरूकता कार्यक्रमों के प्रति ग्रामीण महिलाओं की जागरूकता : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन 129-131

शबली नौर

## पश्चिमी ज्ञान विज्ञान से सम्पर्क एवं प्रभाव

नरेन्द्र कुमार\* व डॉ० सीमा पटेल\*\*

\*शोधार्थी, गैर फुल टाइम शिक्षा विद्यापीठ, जयपुर, विहार

\*\*शोध निर्देशक, एच० पी०, सरदार चंदावर चौक, पटेल कानून, नगुआ, विहार

उपयोगितावादी विचारों से प्रभावित एवं तर्कबुद्धि (हेतु) मानवता और मानव अधिकारों में गहन आस्था रखने वाले ईस्ट इण्डियन कम्पनी के अधिकारियों के साथ यूरोपीय पुनर्जागरण तथा औद्योगिक क्रांति से उत्पन्न नवीन चेतना का भारत में प्रवेश हुआ। इंग्लैंड जैसे विकासोन्मुख देश तथा अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम से प्रविष्ट वास्तविक सभ्यता ने हमारी शिक्षा, सामाजिक विचारों, स्थापत्य कला, आर्थिक जीवन, प्रविष्टा, संचार, परिवहन, उद्योग, प्रविधि, स्वास्थ्य सेवाएँ, खान-पान सम्बन्धी वृत्तियों और सन्मान्य रहने-सहन सभी को प्रभावित किया। भारतीय जनजीवन के विभिन्न पहलुओं में उत्प्रेरक, आकर्षक एवं व्यापक परिवर्तन हुए जिनके फलस्वरूप यह युग (19वीं शताब्दी), अन्य समस्त युगों की तुलना में, अत्यन्त भिन्न तथा विशिष्ट बन गया। आधार-विचार तथा ध्येयत्व में आधुनिक भारत का निवासी अपने पूर्वजों से भिन्न दिखने लगा।

पश्चिमी सभ्यता के तीन तत्वों का इसमें विशेष योगदान रहा है—ईसाई आचारशास्त्र, विधि का शासन और प्रकृति पर विज्ञान की विजय।

पश्चिमीकरण का रूप जनता के विभिन्न भागों में एकरूप नहीं था। कुछ ने वेशभूषा, खान-पान, रहने-सहन, तौर-तरीकों को अपनाया तो कुछ ने ज्ञान-विज्ञान, साहित्य आदि को, किन्तु इस अन्तर को रूढ़ नहीं माना जा सकता। पश्चिमीकरण ने प्राविधिकी, संस्थाओं, ज्ञान-विज्ञान, विचारों, विचारों तथा मूल्यों को भी प्रभावित किया। समाचार-पत्रों, ईसाई मिशनरी, चुनावों को भी पश्चिमी सभ्यता के प्रभावों के अन्तर्गत गिना जाता है। इन नई संस्थाओं के प्रवेश के साथ ही प्राचीन (पारम्परिक) संस्थाओं में भी आचारात्मा परिवर्तन हुए। मूल्यों में भी परिवर्तन आये— ब्रह्महत्या के लिए मानवतावाद को अपनाया जाने लगा जिसमें सभ्यता तथा धर्मनिरपेक्षता दोनों जब समावेश है यद्यपि भारतीय संस्कृति इनसे विहीन नहीं थी।

साहित्य के क्षेत्र में उपन्यास, आधुनिक काव्य छन्दों आदि को विभिन्न भारतीय भाषाओं में पश्चिम के संचार के फलस्वरूप अपनाया गया। कला, स्थापत्य, नृत्य एवं संगीत भी पश्चिम से व्यापक रूप से प्रभावित हुए। पश्चिमी सभ्यता के प्रभावस्वरूप आर्थिक क्षेत्र में उद्योगों की स्थापना एवं संपृद्धि हुई, नये नगरीय केंद्रों का विकास हुआ तथा पश्चिमी प्राविधिकी भी अपनाई गई। विज्ञान, वैज्ञानिक सोच, धिकित्सा, गणित आदि भी पश्चिम से प्रभावित हुए। भारतीय सभ्यता-संस्कृति में नवीन तत्वों के प्रवेश ने अंग्रेजी शिक्षा की प्रमुख भूमिका थी जिसने, भारतीयों को पश्चिमी दर्शन, विज्ञान, साहित्य, इतिहास, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र आदि के अध्ययन का अवसर प्रदान कर, उन्हें पश्चिमी सभ्यता-संस्कृति के विभिन्न पहलुओं से परिचित बनाया। विभिन्न विषयों तथा क्षेत्रों से सम्बन्धित नवीन विचार भारतीयों को उद्घेष्टित

करने लगे। विचार एवं कर्म की नवीन प्रवृत्तियों ने पारम्परिक भारतीय संस्कृति में हलचल उत्पन्न कर दी।

पश्चिमी शिक्षा ने नव-शिक्षाप्रान्त जनों के दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन को जन्म दिया। ज्ञान-साहित्य इतिहास और राजनीतिक संस्थाओं के अध्ययन के फलस्वरूप मानवतावादी दृष्टिकोण विकसित हुआ और वे जाति, धर्म आदि का भेदभाव भिन्न-भिन्न मानवजात के हित से सक्रिय रूप से जुट गये जिससे समाजापरक एवं धर्म-निरपेक्ष (लीकिक) प्रवृत्तियाँ पनपी। इसके साथ ही, नई शिक्षा ने हेतुवादी और आलोचनात्मक दृष्टिकोण के विकास को भी प्रोत्साहित किया, जबकि पारम्परिक शिक्षा-प्रणाली में अज्ञान को ही प्रायः और मूढ़ कर स्वीकार कर लिया जाता था। भारत पर पाश्चात्य संस्कृति के संचार का सर्वाधिक महत्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि, प्रचलित परम्पराओं, विधायी और रीति-रिवाजों में अन्तर्विश्वास के स्थान पर हेतुवाद की एक ऐसी भावना का जन्म हुआ जो किसी भी चीज को और मूढ़ कर स्वीकार करने के बजाय जिज्ञासा (जोय पढ़ताल) और तर्क पर जोर देती थी।

पश्चिम के साथ सम्पर्क के फलस्वरूप भारतीय सभ्यता के नये युग के सूत्रगत के सन्दर्भ में डी.एस. शर्मा ने लिखा है कि हमारे स्कूल-कॉलेजों में—युवा विद्यार्थियों की धर्मरहित दृष्टि के समस्त विचारों का एक नया जगत प्रकट हुआ। अंतर्दृष्टिपूर्ण पौराणिक भूगोल, दर्शन-व्याख्यात्मक इतिहास और मिथ्या-विज्ञान के स्थान पर पृथ्वी के अकार, राष्ट्रों के उत्थान एवं पतन तथा प्रकृति के अपरिवर्तनीय नियमों (विधानों) से सम्बन्धित संयत एवं सही विचार आये।

ब्रिटिश शासन के अधीन जन्म लेने वाली नई राजनीतिक, आर्थिक, शैक्षणिक तथा सामाजिक स्थितियों ने जाति-प्रथा पर भी प्रहार किया। ग्राम-समुदाय की आत्मदृष्टि का अन्त हुआ, भूमि में निजी स्वामित्व की प्रणाली की शुरुआत हुई, विदेशी नियन्त्रण के अर्थात् फिट-मुट रूप से उद्योगों का जन्म एवं विकास हुआ, नये व्यक्तियों तथा नगरों और सामाजिक-परिवहन के नये साधनों (रेल्वे आदि) का विकास हुआ जिसके फलस्वरूप न तो ध्येयताय जातियों से बंधे रह गये, न विभिन्न जातियों का परस्पर दुराव ही पूर्वात्त बने रहना सम्भव रहा। ब्रिटिश शासन के अधीन व्यक्ति की परिस्थिति अन्त परम्परा पर आधारित न रहकर, शिक्षा, व्यवसाय, आर्थिक स्थिति आदि पर आधारित हो गयी।

पश्चिम के अनेक वैज्ञानिक आविष्कारों का भारत में प्रवेश हुआ—मुद्रशालाएँ, वायुमालिनीयान, रेलवे इंजन, तार, टेलीफोन, वायुयान आदि जिन्होंने यातायात परिवहन एवं संचार-सम्पर्क के क्षेत्र में भारतीयों को परस्पर तथा शेष विश्व के निकट लाने में उत्प्रेरक भूमिका निभाई।

मानवतावादी बुद्धिकोण ने समाज एवं धर्म सुधार आन्दोलन को और गिरे स्वातन्त्र्य समाज की प्रेरणा प्रदान की। बाल गिबर्ट, बल्लभ वैद्य (किन्ना दिवाड निरंज), पदाप्रथा, स्त्री-शिक्षा का विरोध, अस्पृश्यता, अन्तर्जातीय धाम-धाम आदि कुप्रथाओं के उन्धान एवं उत्कर्ष के लिए अनिकर्य मान्य जाने लगा।

समाज एवं धर्मसुधार आन्दोलनों (वत्ससमाज, प्रथमासमाज, आर्यसमाज, रामकृष्ण मिशन, शिरोसक्तिकल सोसाइटी आदि) ने समाज में व्याप्त दुराइयों को दूर करने और परिधान लाने में काफी रीति तक सफलता प्राप्त की। नवजागरण (या पुनर्जागरण-रेनैसांस) ने भारतीयों को इहलौकिक जीवन की ओर ध्यान देने और जनसामान्य के भौतिक-नैतिक उत्थान के निमित्त कार्य करने की ओर मार्गदर्शक एवं निरुत्साह से मुक्ति पाने की प्रेरणा प्रदान की।

समाज सुधार आन्दोलनों के फलस्वरूप दलितों में भी नवीन चेतना जागृत हुई। ईसाई मिशनरियों, रामकृष्ण मिशन, शिरोसक्तिकल सोसाइटी, चलिच वर्ग मिशन (बन्द्य) तथा गणेशजी के हरिजन उद्धार (या अछूतोंद्धार) आन्दोलन और सरकार के द्वारा उठाये गये कुछ कदमों ने दलितों के उत्थान में सहायता पहुँचाई।

स्त्रियों के उद्धार एवं शिक्षा के क्षेत्र में भी पश्चिमी संचाल की उल्लेखनीय भूमिका थी। डॉ. मेरी के अनुसार स्त्रियों को स्थापित करनी प्राप्ति, अपेक्षाकृत सुरास्कृत वर्गों में पदाप्रथा के त्याग आदि से प्रकट होने वाला (अपेक्षाकृत) सामाजिक-स्वातन्त्र्य, सार्वजनिक जीवन तथा विभिन्न व्यवसायों में उनका प्रवेश, स्त्रियों से सम्बन्धित आन्दोलनों का विकास, 1937 में ब्रिटिश भारतीय सरकार द्वारा पारित स्त्रियों के सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकारों का अधिनियम, 1933 में मैसूर व्यवस्थापिका द्वारा पारित हिन्दू विधि, स्त्री अधिकार सम्बन्धी विभिन्न, जिनसे स्त्रियों की वैधानिक परिस्थिति में सुधार हुआ, आदि महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हैं, जिनका जन्म स्त्रियों की स्थिति से सम्बन्धित विचारों को नई दिशा दिये जाने से हुआ।

पुरातनपंथी भी अंग्रेजी शिक्षा के समर्थक, किन्तु अंग्रेजी विचारों के विरुद्ध थे। बंगाल में इनमें प्रमुख थे- राधाकान्त देव (1784-1867), गौर मोहन विद्यालंकार और भवानी चरण मुखर्जी आदि। तीसरा बुद्धिकोण वर्गों के बीच समन्वय (सामन्वय) के पक्ष में था, यह न तो पश्चिम को पूर्णतया स्वीकार करने का समर्थक था न पूर्णतया अस्वीकार करने का। यह देश की प्रगति के लिए परिवर्तन के पक्ष में था। राजा राममोहन राय, प्रार्थना समाज और विवेकानन्द इसी बुद्धिकोण के पक्षपर थे। वे पूर्वी दर्शन और आन्त विचारों के सामन्वय को अनिवार्य मानते थे।

रामकृष्णन के अनुसार, पश्चिमी शिक्षा तथा आदर्शों के प्रसार ने हिन्दू धर्म के अन्तर्गत ऐसे आन्दोलनों को उत्प्रेरित किया जो, इसके सामाजिक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों को परिष्कृत करने के साथ ही, उन उपबुद्धियों को उन्मूलित करने के निमित्त थे जो न केवल किन्तुप ही चेतना (भावना-शिवरिड) के ही बल्कि पश्चिमी संस्कृति द्वारा प्रसारित आदर्शों के भी विरुद्ध थे।

हमारे पुनर्जागरण पर पश्चिम की उल्लेखनीय प्रभाव का निरूपण करते हुए डॉ. विश्वनाथ प्रसाद वर्मा ने लिखा है कि, यह साध है कि पश्चिमी शिक्षा तथा ज्ञान के प्रचार-प्रसार से देश में

बौद्धिक-अनुत्पत्ता की नयी भावना उत्पन्न हुई जिसका प्रथम धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक समस्याओं के समाधान के लिए किया गया। ए. आर. देसाई ने लिखा है कि, आधुनिक शिक्षा और उच्चतर पाश्चात्य संस्कृति के सम्पर्क की भारतीय पुनर्जागरण में अत्यन्त प्रगतिशील भूमिका थी और इसका सबसे बड़ा प्रमाण यही है कि आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक प्रगतिशील आन्दोलनों के लगभग सभी नेता अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त बुद्धिवादी वर्ग के थे। निरन्तर वर्द्धमान और गहरे ढंगे हुए राष्ट्रीय आन्दोलन के नेताओं में से अधिकांश आधुनिक पद्धती से शिक्षित हुए थे।

19वीं शताब्दी के अंत तक, विशेषतया शिक्षित भारतीयों में, पाश्चात्य सभ्यता का अत्यन्त अप्रतिरोधनीय आकर्षण रहा है। 19वीं शताब्दी की प्रारम्भिक दशकियों में पाश्चात्य विज्ञान तथा उदात्तवाद की अतिशय प्रधानता थी। विज्ञान के व्यावहारिक उपयोग से संचार और यन्त्रागत की नयी पद्धतियों द्वारा आर्थिक संगठन की नई विधियों और नई राजनीतिक संस्थाओं द्वारा भारत का रूप-परिवर्तन हो रहा था। विज्ञान एक महान मुक्तिदाता के रूप में प्रकट हुआ था और अनन्त सम्भावनाओं से परिपूर्ण मानववादी प्रयास का अग्रदूत प्रतीत होता था।

किन्तु वास्तव में, आधुनिक भारतीय नवजागरण अथवा पुनर्जागरण का काल, जिसका आरंभ राजा राममोहन राय के साथ हुआ और जो पिछली शताब्दी के अन्तिम दशक में विवेकानन्द के साथ चरमोत्कर्ष को प्राप्त हुआ, ब्रिटेन की भौतिक, नैतिक, बौद्धिक, सांस्कृतिक श्रेष्ठता के विरुद्ध हिन्दू भारत का विद्रोह था। इस रेनासांस ने, पश्चिम की श्रेष्ठता के मिथक के विरुद्ध भारत के प्राचीन गौरव को स्थापित कर, आंग्लीकरण (पश्चिमीकरण) की ओर तीव्र प्रवाह को रोकने का प्रयास किया।

सुरेन्द्रनाथ बनर्जी के पितामह अत्यन्त पुरातनपंथी और नैतिक कर्मों के पालन के प्रति अतिनिष्ठ कुलीन ब्राह्मण थे किन्तु उन्होंने अपने ज्येष्ठ पुत्र (सुरेन्द्रनाथ के पिता) को हिन्दू कालेज में शिक्षा दिलायी। अंग्रेजी शिक्षा ने सुरेन्द्रनाथ के पिता के मतिष्क से, पारिवारिक परम्परा तथा वातावरण द्वारा पोषित, पुरातनपंथी विचारों को मिटा दिया। वे उस पीढ़ी के सदस्य थे जिसके कुछ सदस्य केरोजियों के घरों में बैठे थे और, किसी नये पंथ में नये-नये दीक्षित होने वालों के समान, अपने पूर्वजों से उनका विद्वेष पूर्ण एवं उग्र व्यवहार भी था।

इस सन्दर्भ में डॉ. राधाकृष्णन ने लिखा है कि "ब्रिटिश सत्ता के उत्थान के साथ प्राचीन व्यवस्था निर्बल पड़ती गयी और अपनी संस्कृति के प्रति भारतीयों का विश्वास क्षीण होता गया। अनेकों व्यक्ति पश्चिमी सभ्यता से चकाचौंध हो गये जो इहलौकिक सत्ता की प्राप्ति के अधिक अनुकूल प्रतीत होती थी। कुछ व्यक्ति इससे इतने मोहग्रस्त हो गये कि नववीक्षितों जैसे उत्साह के साथ उन्होंने पश्चिमी संस्कृति को अपना लिया तथा अपना पूर्ण पश्चिमीकरण करने को सचेष्ट हो गले, कुछ ने ईसाई धर्म को भी अपना लिया। भारत की सामाजिक-धार्मिक संस्थाओं की निरर्थकता और अनुपयोगिता घोषित कर वे नयी नींव पर राष्ट्रीय जीवन के ढाँचे के पुनर्निर्माण की आकांक्षा करने लगे परन्तु इसके पक्ष में विशाल बहुमत नहीं था। अंग्रेजी शिक्षाप्राप्त वर्गों ने नियत न तो जीवन के परम्परागत मार्ग का, न मतिष्क की वृत्तियों का ही त्याग किया बल्कि पश्चिमी विद्या का उपयोग वे अपनी संस्कृति

के धुंधले और सफ़ाई (या) उभरे परिवर्तन के संकेतों से उत्पन्न प्राचीन धर्मों के अनुसूचित धर्मों के सिरे चलने लगे। अतएव, धर्मों में अत्यंत हेतुवादी विचारों के संघर्ष में हमारे समाज एवं धर्म में प्रतीयय मुर्तियों को जन्म दिया, मरनु में ज्वर की एक कीटी तार के समाप्त अस्वादी से और शीघ्र ही जीण पड़ गये और अपने पीछे उर्वर मिट्टी के ढेर छोड़ गये (ब्रिटिश वैसावाउट्टी से एव्हे इण्डियन रेनॉस में र. घ. मजुमदार द्वारा उद्धृत)। कलकत्ता देश में तीसरावी धर्मों में मरनु सौमिक एवं धार्मिक स्वयं का जन्म हुआ। अपने जीवन के अन्तकाल तक पहुँचते-पहुँचते कवीन्द्र रवीन्द्र भी पश्चिमी राष्ट्रों की सल्लोभिता में अपने पूर्णतः विरहारा को प्राण-पूर्णरूपेण गैरा चुके थे। पश्चिम के 'कलना प्रधान परिदृश्य' से उबर कर अपने निबन्ध "सम्पत्ता का संकट" में टैगोर ने पश्चिम के प्रति अपने मोहनग को व्यक्त किया।

ईसाइयत का भी, कुल मिलाकर, भारत पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। के. एम. पणिकर के अनुसार, ईसाई मिशनरों को सहन किया जाता था, उन्हें सम्पूर्ण प्राप्त नहीं था जिस कारण भारतीय जीवन पर विशेष प्रभाव डालने में वे विफल रहे।<sup>1</sup> बलित वर्गों को छोड़ अन्य हिन्दुओं ने ईसाई धर्म के प्रचार-प्रसार का तीव्र विरोध किया। भारतीयों को ईसाइयत के गुणों (विशेषतःओं) के प्रति आश्चर्य करने के ईसाई धर्म का सिद्धार्थन करने के रजाय, मिशनरियों ने उनके निर्भरता का लाभ उठा कर, उनके धर्म-परिद्वान का प्रयास कर, और इस प्रकार ईसाई धर्म ग्रहण करने वालों की संख्या को अपनी सफलता का मापदण्ड मानकर इसकी प्रगति की गति को अवलम्ब ही किया। भारतीय जीवन एवं विचारों पर कुछ मिशनरियों के विवेक शून्य आक्रमणों ने वेवाचक की ओर वापसी को उत्प्रेरित किया। ये प्रसार इतने नृत्त (अभयार्थित) थे कि उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक में उस समय के तत्कालीन राज. जार्ज निष्ठा ने इस आधार पर ईसाई प्रचार पुस्तिकाओं को जन्म करने का आदेश प्रसारित किया कि ये पुस्तिकाएँ किसी भी प्रकार के तर्क के बिना, नर्क जैसी अग्नि से, बलिक उससे भी प्रचण्डतर अग्नि से, मनुष्यों की एक पूरी जाति के विरुद्ध केवल इसलिए भरी थीं कि वे उस धर्म में विश्वास रखते थे, जो उन्हें उनके माता-पिता ने सिखाया था तथा जिसके प्रति उनके मानस में सदेह उत्पन्न होना असंभव था। इस परिस्थितियों में अद्वैत दर्शन के प्रति आग्रह में वृद्धि हुई जिसके फलस्वरूप मूर्तिपूजा, जाति और अंधविश्वासपूर्ण रीति-रिवाजों के प्रति जोर पकड़ने लगा।

अस्तु पश्चिमी शिक्षा एवं ईसाइयत की प्रागतिशील भूमिका को स्वीकार करते हुए भी, यह समझ लेना गलत होगा कि भारतीय रीतियाँ तथा राष्ट्रवाद इस शिक्षा की व पश्चिमी संघर्ष की ही संवृति थे। वा. काटिकेकर वत्ता के अनुसार, भारत का राष्ट्रीय

जागृतात्मक सामाज्यवाद और (रहती) संघर्ष प्रणाली में, कलकत्ता उत्पन्न हुआ। शिक्षा सामर्या वाले जो भी राष्ट्रीय भावों में युक्तियों को अत्यन्तमाती थीं, अन्त भारतीय युक्तियों को संस्कृत में लिखे गये वेदों की ही शिक्षा मिलती रहती जो उन्हें यहाँ अपने स्वयं के सिद्धान्त और नारे मिल जाते। ए. आर. टैगोर के अनुसार, भारतीय राष्ट्रवाद का जन्म संस्कृत, नवी सामाजिक-धार्मिक स्थितियों के फलस्वरूप हुआ, उन नवी सामाजिक स्थितियों के कारण हुआ, जो अनेकों की भारत विख्या के बाद उत्पन्न हुई। यह विभिन्न स्वार्थों के परस्परिष्ठा स्वार्थ का परिणाम था। भारतीयों की मीम थी-संस्कृती नौकरियों का भारतीयकरण, भारतीय उद्योगों के लिए सुरक्षा, विधीय स्वायत्तता आदि जो उपनिवेशवाद के दिनों में प्रतिकूल नहीं थीं। वा. विश्वाय प्रसाद वर्मा ने भी पश्चिमी विचारों व विचारकों के आधुनिक भारतीय राष्ट्रवादी तथा स्वातन्त्र्य आन्दोलन पर प्रभाव का दृश रूप में निर्वचन करना सर्वथा अतिशयोक्तिपूर्ण नसारा है कि वह पूर्णतः पश्चिमी आदर्शों तथा पद्धतियों के सीते में उल्टा था। डा. शंकर घोष लिखते हैं कि कहा जाता है कि पश्चिमी संघर्ष ने भारत को आधुनिक राजनीतिक आदर्श प्रदान की है, यह दावा कुछ अतिशयोक्तिपूर्ण है। वास्तव में अंशतः वास्तव सतियों किन्तु, बड़े अंशों में, हमारी अपनी दीर्घकालिक आध्यात्मिक परम्परा की अन्तर्निहित ओजस्वला (प्राणवर्षिक) के फलस्वरूप अनेकानेक सुधारक, शिक्षक, संत तथा विद्वानों का उदय हुआ किन्हीं हिन्दु धर्म की परवर्ती अपकृष्टियों का विरुद्ध करते हुए, उसके वास्तविक एम अन्वितार्थ तत्त्वों को प्रकट करते हुए, हिन्दु धर्म का परिशोधन किया, अपने निजी अनुभवों से उसके प्राचीन सत्यों की पुष्टि की, तथा इसके संदेश को यूरोप व अमेरिका तक पहुँचाया।

#### सन्दर्भ :

1. श्रीनिवास : आधुनिक भारत ने सामाजिक परिवर्तन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृ. 48
2. गर्गा टी.एस. : हिन्दुधर्म-श्रुत एवम्, भारतीय विद्या भवन, 1989, पृ. 69
3. मजुमदार आर.सी. : ब्रिटिश वैसावाउट्टी, राजस्थानी प्रकाशन, 1965, पृ. 83-84
4. काव्यती विद्युत एण्ड पाण्डेय राजेन्द्र : आधुनिक भारतीय राजनीतिक सिद्धान्त, राज विज्ञानेशन इन इण्डिया, आग्रा, पृ. 4
5. ईसाई ए.आर. : भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक वृत्तभूमि, सेज पब्लिकेशन, 2010, पृ. 138
6. जमली एस. एन. : ए नैसल इन मैथिल, कुछ पब्लिकेशन, 2010, पृ. 1-2
7. पणिकर के.एम. : एशिया एण्ड वेस्टर्न सोसियल सांघेय पब्लिकेशन, 1993, पृ. 422



# शोध कल्पतरु

An International Multidisciplinary Research Journal

अंक 9

अप्रैल 2013 - जून 2013

*A Refereed Journal, Published Tri-monthly*



संयोजक समिति

डॉ० मनोज कुमार सिंह

निदेशक समिति,

संयोजक समिति, विनोदविहार,

वाराणसी

अध्यक्ष समिति

अमिताभ तेलंग

संयोजक :

डॉ० विद्या सिंह

डॉ० बालकृष्ण किरणोर पाण्डेय

संयोजक :

गणिका सिंह

JOURNAL OF THE AKHIL BHARATIYA BHASHA EVAM

SAHITYA ANUSHILAN SAMITI



10. मीरा : स्त्री अस्मिता की ध्वजवाहिका  
-हनी दर्शन 88-88
11. पार्वतलक्ष्मण तथा श्रीदशरथ में सम्य  
-उमा आर्या 88-108
12. आधुनिक हिन्दी नाटक में प्रेम और यथार्थ का  
अन्तर्क्रन्द : 'अपराध का एक दिन'  
-प्रियंका कुमारी मिश्रा 109-114
13. रेणु में उपन्यासी में नारी का संघ  
-प्रदीप कुमार शीर्ष 115-121
14. समसामयिक सामाजिक विवृतियों का  
समाधान: स्मृति व वेदों अनुसार  
-डॉ. पृथ्वि शर्मा 122-127
15. दर्शन की व्यावहारिक उपयोगिता : पर्यावरण-  
प्रदूषण के विशेष संदर्भ में  
-डॉ. शब्दा राय 128-132
16. रेणु की राजनीतिक दृष्टि और मूल अवधारणा  
-प्रियंका 133-137
17. व्याकरणदर्शन में वाणि की अवधारणा  
-डॉ. सोमवीर 138-153
18. मैथिली युष्म अं: अभा साहित्य में ग्रामीण जीवन  
-कवयत्रीस और 154-159
19. आधुनिक भारत में महिला श्रमजीवन  
-विवेकानंद शिवारी 160-167
20. स्त्री अस्मिता और कृष्णा सोबती का  
सम्बन्ध-साहित्य  
-विजयलक्ष्मी 168-177
21. स्वामी विवेकानन्द की दृष्टि में कर्म एवं कर्तव्य  
-डॉ0 उपेन्द्र कुमार त्रिपाठी 178-185
22. साहित्य और युगबंध  
-डॉ0 संतोष कुमार 186-191
23. दृष्टि, स्थिति एवं प्रलय विषयक चिन्तन : स्वामी  
प्रधान्य जारवती के परिपेक्ष्य में  
-हरेली शाल शीमा 192-202
24. जन जेतन का काँठे चिन्तन  
-नीलम देवी 203-207
25. 1930-40 के दशक में प्रमुख चिन्तन आन्दोलन  
-सुरील कुमार सिँह 208-213
26. योगदर्शन की समीक्षा  
-डॉ0 मनुदेव 214-223

98. नाट्यविद्यायाः गीताशालाकाण्डम्, अं. 2, 2/30
99. ईशानिहन्त्रकवि, च्छाया विद्यापीठम् पृ. 641
100. एसा मिश्रा की 'सिन्धु' समसमीक्षा आरम्भिक, आरंभिक 2, 1997-1998, अंक 1
101. 'सिन्धु', एक प्रतिपादक, सञ्चालिका, सिन्धुविद्यापीठम्, गण्डक 2, पृ. 8
102. 'आज का भारत' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
103. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
104. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
105. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
106. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
107. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
108. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143

### सहायक ग्रन्थ-सूची :

1. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
2. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
3. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
4. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
5. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
6. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
7. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
8. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
9. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
10. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
11. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
12. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
13. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
14. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
15. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
16. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143
17. 'सिन्धु' नामक एक पुस्तक, पृ. 143



## आधुनिक हिन्दी नाटक में प्रेम और यथार्थ का अन्तर्द्वन्द्व : "आषाढ़ का एक दिन"

\* प्रियंका कुमारी मिश्रा

'संवेदनशील' को अभिव्यक्त कर 'चेहरे' से सब बोलकर बहलता व्यक्तित्व दिखलाकर बहलाने वाला साहित्य ही 'सादयशास्त्र कहलसता है'।

नाट्यशास्त्रीय भूतभूति ने लीजगुल के अनुकरण को ही नाटक कहा है- 'लोककृतानुकरण नाट्यमत्तमया कृतम्।'। 'जैसा कि हिन्दी नाटक की परम्परा तो संस्कृत साहित्य की परम्परा से जुड़ी रही है, अभिव्यक्ति के माध्यम श्रद्धा और दृश्य से सांसारलौकिकता का मार्ग बदल, युगम रहा है। इसी नाट्य परम्परा में प्रयोगशील नाटककार के रूप में मोहन राकेश का व्यक्तित्व अवतरित हुआ। कहा जाता है -

'समकालीन रंगरचना की 'पहचान का पहला प्रणयिक संकेत है, मोहन राकेश।'। 'अधिक नाटकों की रचना न करने पर भी ये नाटक क्षेत्र के मरीहा कहलाए, यह या कंगाल प्रयोगशील नाटककार थे बल्कि वैयक्तिक और सामाजिक समस्याओं पर भी उनकी दृष्टि बराबर केंद्रित रही है। उन्होंने कुल तीन नाटक लिखे - आषाढ़ का एक दिन, 'सहने का राजवंश', 'अग्नि-आरू', उनके संदर्भगत जीवन का प्रतिफलन उनकी रचनाओं में देखने को मिलता है। लेकिन उनकी जिन्दगी जितनी उलझी हुई थी, उतनी रचनाएँ उतनी ही सुलझी हुई हैं। जिस तरह वह अपने जीवन में समुक्त एवं स्वतंत्र रहे उसी प्रकार उनके पात्र भी सभी संघर्षों से मुक्त हैं।

'आषाढ़ का एक दिन' आधुनिक हिन्दी नाटक में ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य पर रखा गया ऐसा यथार्थ है, जो आज के जीवन को विषमता,

\* ग्रीक कथा, हिन्दी विधा, 'अग्नि-आरू' विधा, आषाढ़-22-10-13

UGC M. No. 40577

Reg. No. 1080/1971/17

ISSN : 2272-1832

# शब्दार्थ

त्रैमासिक पत्रिका

(साहित्य, कला, संस्कृति और सोच की सीखार्थी पत्रिका)

अंक - 19, जनवरी - मार्च 2018

सम्पादक

वसिष्ठ अग्रूप

प्रोफेसर, हिंदी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221006

सम्पादकीय संपर्क

204/11, राजेश्वर अपार्टमेंट्स,

वेस्टिंग बल्ड (बटिवा) वाराणसी

शब्दार्थ अकादमी, वाराणसी

Self-attested  
Sonal

- रामायण के कथा तत्व द्वारा शमीण युवाओं के चरित्र निर्माण में संगीत का महत्त्व 178-181  
डॉ० राजन कुमार
- भारतीय मुस्लिम महिलाओं की वर्तमान सामाजिक स्थिति : समाजशास्त्रीय अध्ययन 182-187  
प्रशांत कुमार
- नैतिक निर्णय के विश्लेषण की वर्तमान में प्रासंगिकता 188-192  
डॉ० कुमारी सस्मा
- चित्रा मुद्गल के उपन्यासों में नारी संघर्ष 193-196  
कृष्ण कुमार
- रामतत्व का विकास और कवि तुलसीदास 197-199  
राम जीत वर्मा
- दलित साहित्य की संकल्पना - वैचारिकी एवं दार्शनिक आधार 200-207  
सुरेश कुमार यादव
- मार्कण्डेय की कहानियों में शमीण चेतना 208-213  
विवेक यादव
- मृत्यु : एक नैतिक अवसाद या आध्यात्मिक असंतोष 214-219  
डॉ० सोनल

*Self-attached  
Sonal*

## मृत्यु : एक भौतिक अवसाद या आध्यात्मिक असंतोष

डॉ० सोनल\*

वर्तमान परिदृश्य में यह ज्ञातव्य है कि हमारा मानसिक विकास एकांगी हो गया है। हम भौतिकतावादी जीवन में अपने नेतृत्व और जीविधिकाकारी ध्रुवियों का पूर्ण मूल्यंकन नहीं कर पा रहे हैं। हमें ज्ञात ही नहीं होता है कि हम अपनी किन अतृप्त इच्छाओं (दस्तु) को प्राप्त करने में अपना सम्पूर्ण जीवन व्यर्थ कर रहे हैं जो हमें जीवन के किन पथार्थ सुखों से वंचित कर रही है। मनुष्य जीवन में सदैव आनन्द की प्राप्ति करना चाहता है परन्तु मायावी जीवन में वह यह नहीं समझ पाता है कि उसके लिए भौतिक सुख और आध्यात्मिक सुख दोनों में से कौन-सा ज्यादा कल्याणकारी है? एक तरह के भौतिक संसाधनों का विकास समाज को विकसित कर रहा है और वहीं दूसरी तरह समाज का प्रत्येक व्यक्ति मानसिक एवं आध्यात्मिक दरिद्रता से रुग्ण हो रहा है। इस प्रकार मानसिक एवं आध्यात्मिक रुग्णता के कारण समाज में मृत्यु के विकृत रूप दिखाई दे रहे हैं।

मनुष्य के जीवन का अन्त ही 'मृत्यु' है। शरीर के वृद्ध हो जाने पर (प्राकृतिक रूप से) या फिर शरीर के क्षतिग्रस्त होने पर प्राणशक्ति का शरीर से बाहर निकल जाना ही मृत्यु है। मृत्यु के प्रकार हैं- प्रकृति के द्वारा मृत्यु को प्राप्त होना, दूसरी के द्वारा मारा जाना (हत्या), अपने आप को मार देना (आत्महत्या) और यूथेनेसिया (असाध्य बीमारी की दवा में विफलता से इलाज के द्वारा मृत्यु देना)। सामान्य ढंग से शरीर के क्षीण होने पर या आयु के पूरा होने पर प्राणशक्ति का शरीर से बाहर निकल जाना सामान्य मृत्यु है परन्तु आज कुछ ऐसे संताप के कारण व्यक्ति में जीवन जीने की लिप्सा समाप्त हो गयी है। वह असमर्थ ही अपने जीवन को समाप्त कर रहा है। उदा०- आत्महत्या और यूथेनेसिया (इच्छामृत्यु)। यूथेनेसिया मृत्यु का एक ऐसा प्रकार है जिसे विशेष परिस्थिति में उचित माना जा सकता है परन्तु आत्महत्या एक अपराध है। आत्महत्या शाश्वत सत्य मृत्यु को समाज में विकृत रूप से सुचित कर रहा है। यह समाज में नकारात्मक प्रवृत्तियों को उत्पन्न करता है। व्यक्ति अपनी इच्छाओं के जर्मान होकर आत्महत्या का आत्मिकरण कर रहा है।

आत्महत्या लैटिन भाषा के **Suicidium** शब्द से बना है जिसका अर्थ 'स्वयं को मारना' है। यह एक संकुचित प्रवृत्ति का परिणाम है। प्रिय की मृत्यु या अलग-अलग आर्थिक समस्या आदि कारण आत्महत्या जैसे भौतिक अवसाद को

\* सहायक प्राध्याप, दर्शनशास्त्र विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (अंगीकृत इकाई) और कुवैत विश्वविद्यालय, आबू, विशार)

Self-attested  
Sonal

उत्पन्न करती है। आत्महत्या के तीकड़ों में जलरोधक द्रुधि का कारण मग की यही बताप है। प्राचीन काल से ही आत्महत्या को समाज के लिए एक अनिवाप माना गया है। वैदिक साहित्य में आत्महत्या की प्रवृत्ति को हतोत्साहित करने के लिये विभिन्न प्रकार के दण्ड प्रतिमानों का उल्लेख है। आत्महत्या करने वाले व्यक्तियों को साठ हजार वर्षों तक मरक की याता छोडनी पडती है। इस प्रकार का व्यक्ति चाहे जीवित रहे या मर जाये यह अशुद्ध कहलाता है। वैदिक संघों में माना गया है कि ऐसे व्यक्ति की शिता को अग्नि देने वाला भी अशुद्ध हो जाता है। आत्महत्या भाई की मारने से भी बडा अपरध है। गरुड पुराण के अनुसार भी ऐसी जीवात्मा को मृत्यु के परचाल घोर अवगुनी से गुजरना पडता है। धर्मसूत्र ने अपनी पुस्तक में बताया है कि पूर्वकाल से ही आत्महत्या एक दण्डनीय अपरध है जो लिखती है कि "प्राचीन एर्वस में जो व्यक्ति राजा की आज्ञा के बिना आत्महत्या करता था तो उसे सामान्य रूप से दफनाने का अधिकार नहीं था। उस व्यक्ति को शहर के बाहर अकेले दफनाया जाता था। उसकी कब्र पर किसी भी प्रकार का धिदन नहीं होता था।" जमाहमिक धर्म में भी आत्महत्या को ईश्वर के समक्ष किया जाने वाला अपराध माना गया है। यह धर्म जीवन जीने की पवित्रता में विश्वास रखता है। हवाई देश की न्यायनिक प्रणाली की धारा 308 के तहत आत्महत्या एक अपराध है परन्तु 2009 में सरकार ने इसमें परिवर्तन करके इसे अपराध की श्रेणी से हटा दिया है। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि आत्महत्या करना उचित है। यह केवल इसलिए किया गया है कि उस कुण्ठित व्यक्ति को कठिन न्यायनिक प्रक्रिया से गुजरना ना पड़े। यह एक अनैतिक कर्म ही है। यह पूर्वप्रती से प्रसिद्ध होकर किया जाता है। मित और कांट भी यही मानते हैं।

प्रश्न उठता है कि हिन्दू धर्म में सती प्रथा मृत्यु का किस प्रकार का उदाहरण है? क्या यह आत्महत्या जैसे कुकृत्य को प्रक्षय देती है? ऐसा बिल्कुल भी नहीं है। सती प्रथा आत्महत्या को प्रक्षय नहीं देती है। यह कृत्य निराश्रमरी प्रवृत्ति के कारण नहीं होता है बल्कि प्राचीन काल में स्त्रियों अपने सतिध के स्वार्थ जीहर शीर्ष एवं उत्सहपूर्ण प्रवृत्ति से मुक्त होकर करती थीं। जैसे - सती पदमावती का जीहर।

आधुनिक युग में सुसाइड धर्मसूत्र किस प्रकार के मृत्यु को उदाहरण है? क्या यह आत्महत्या का प्रकार है या इच्छामृत्यु का? यह कौसी इच्छामृत्यु है जो अपने सान सार्व व्यक्तियों के मृत्यु का कारण बनती है। ऐसे व्यक्ति निराशासदी होते हैं जिनके जीवन का कोई लक्ष्य नहीं होता है। यह व्यक्ति अन्धविश्वास में आकर ये अपराध करते हैं। यह इच्छामृत्यु नहीं है क्योंकि इच्छामृत्यु का तात्पर्य किसी असाध्य बीमारी से ग्रस्त व्यक्ति को डॉक्टरों सहायता से मरीज के जीवन को समाप्त करना है। इच्छामृत्यु को 'मती किलिम' एवं 'यूरोनेसिया' भी कहा जाता है। Euthanasia एक ग्रीक शब्द है। Eū का अर्थ अच्छी और Thanatos का अर्थ मृत्यु है। इच्छामृत्यु के प्रकार निम्न हैं-

*Self-attempted  
Suicide*

1. **स्वैच्छिक एक्टिव यूथोसिस (Voluntary)**- स्वैच्छिक एक्टिव यूथोसिस में मरीज की मंजूरी के बाद जानबूझकर ऐसी बात की जाती है जिससे कि उसकी मृत्यु हो जाये। यूथोसिस का यह प्रकार अत्यंत गैरकानूनी एवं बेजिम्मान में है।

2. **अवैच्छिक एक्टिव यूथोसिस (Involuntary)**- यह प्रक्रिया पूरी दुनिया में प्रतिबन्धित है। ऐसा मरीज जो गैरकानूनी रूप से अपनी मृत्यु को मंजूरी देने में असमर्थ हो तक उसे मारने की हिम्मत नमा देना।

3. **सक्रिय यूथोसिस (Active)**- इसमें असाध्य बीमारी से परत व्यक्ति को जीवन का अन्त डॉक्टरों सहायता के द्वारा होता है।

4. **निष्क्रिय यूथोसिस (Passive)**- इसमें व्यक्ति अथवा कृत्रिम रूप से जीवने में है और उसके ठीक होने की सम्भावना काफी कम है तो ऐसी स्थिति में उसकी परिवार वालों की सलाहों से डॉक्टर के द्वारा उसकी जीवनरक्षण उपकरणों का बन्द करवा होता है। 9 मार्च 2018 को भारत देश में भी निष्क्रिय इच्छामृत्यु को अनुमति प्रदान की गयी है।

5. **सहायता प्राप्त इच्छामृत्यु (Assisted Suicide)**- जब व्यक्ति जीवन में संतान हो जाता है एक आत्महत्या की दृष्टि से वह डॉक्टर के द्वारा ऐसी बात जता है जिससे उसकी मृत्यु हो जाये। गैरकानूनी, बेजिम्मान, रिहायशगरीब और अमेरिका में इस प्रथाओं को वैध माना गया है।

इस प्रकार रिहायशगरीब, गैरकानूनी, बेजिम्मान, जर्मनी, जापान, कनाडा, फ्रांस, स्पेन, ब्रिटेन, इटली, अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया आदि देशों ने अपनी कानून व्यवस्था में इच्छामृत्यु सम्बन्धित विधियों का निर्माण करके इसे उचित माना है।

इच्छामृत्यु की आशीर्षता को अथवा देखा जाये तो इसकी स्पष्ट उदाहरण महाभारत और रामायण को ही मान ले सकते हैं। महाभारत के युद्ध के समय भीष्मपितामह जब तक शरहीन्या पर लेटे रहे जब तक सूर्य उतरावण नहीं हो गया। सूर्य के उतरावण होने को परध्या ही उन्होंने शरीर का परित्याग किया। उसी प्रकार रामायण काल में सीताजी का भरती में सजाहित होना भी इच्छामृत्यु का ही उदाहरण है। सीतल ने भी अपनी इच्छा से ही सचमुच मर्त्य में जलसमाधि ली थी। समकालीन स्वामी विवेकानन्दजी ने भी योगसमाधि के द्वारा और विनोबाभावेजी ने अपनी इच्छा से इच्छामृत्यु का परण किया था। अतः स्पष्ट है कि इच्छामृत्यु प्राचीन काल से ही वैध थी। इच्छामृत्यु केवल सहायता के द्वारा ही प्राप्त हो सकती थी।

आधुनिक परिदृश्य में जीवन धर्म का सस्तेखन (संभार) सिद्धांत को प्रयोग पद्धति के द्वारा प्राप्त होने वाला इच्छामृत्यु का ही एक प्रकार है। जीवन धर्म की आत्म-उन्नयन की प्रक्रिया सस्तेखन (संभार) कहलाती है। इसमें भावक और मुनि उपवास के द्वारा शरीर को शीत करके शरीर का त्याग करता है। सस्तेखन शब्द सत् और लेखन से बना है जिसका शाब्दिक अर्थ संभार

Self-attested  
Journal

प्रकार से काय और कर्माणों को संभ्रजित करता है। सल्लेखना में बाह्य शरीर एवं आन्तरिक कर्माणों को तथा उनमें कर्माणों का अन्तर्भाग करने क्रमशः कृश (तपान्त) किया जाता है। दिगम्बर जैनशास्त्रों के अनुसार इस प्रकार की सम्पत्ति को सल्लेखना और श्वेताम्बर के अनुसार इसे संभ्रजन कहा जाता है।

कर्माणों से रहित मन को शुद्ध आत्म स्वरूप में कल्पित करते हुए प्राणों का विसर्जन करना ही सल्लेखना है। सभी धर्माचार्यों के अनुसार जीव का अन्तकाल आध्यात्मिक महत्त्वपूर्ण होता है। जैमिनी ने यही तक कहा है कि जीवनभर की तपस्या व्यर्थ होगी अगर अन्त समय में शगद्वेष-आसक्ति रहित होकर सम्पत्ति धारण न की जाये। जैन धर्माचार्यों ने अनुसार सल्लेखना प्रवृत्त करने का एक निश्चित समय होता है। सम्पत्तिधन आचार्य के अनुसार सल्लेखना उपसर्ग (मृत्यु) जाने पर, दुर्भिक्ष (अकाल) के समय, बुढ़ापे में और अस्वस्थ होने पर तथा धर्म की रक्षा के लिये किया जाता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि संभ्रजन एक प्रथममृत्यु का प्रकार है। ये मृत्यु के विरुद्ध रूप आत्महत्या जैसा अशुभ नहीं है क्योंकि संभ्रजन धर्म का रक्षक किया जाने वाला धार्मिक प्रवृत्ति से युक्त धार्मिक संकल्प है। यह अधिस्तिक एवं अध्यात्मिक आत्मस्वतन्त्रता की साधना पद्धति है जिसमें आत्महत्या का उन्मथन होता है।

भगवती आरक्षणा में सल्लेखना के दो प्रकारों का वर्णन मिलता है- आभ्यन्तर एवं बाह्य। सर्वप्रथम आभ्यन्तर सल्लेखना तप के द्वारा मन से कर्माणों (शगद्वेष मोह, लोभ) को दूर करती है तत्पश्चात् बाह्य सल्लेखना द्वारा शरीर को कृश किया जाता है। सल्लेखना वास्तव में शांति के जयसङ्क की आदेश मृत्यु है। जैसे सूर्योदय होने के साथ सूर्यास्त निश्चित है वैसे ही जीव के जीवन के साथ उसका अन्त निश्चित होता है। बस जीव को यह निश्चित करना है कि यह इस प्रथममृत्यु जगत से किस प्रकार की मुक्ति प्राप्तता है? यह इस शाश्वत साथ को सुखपूर्वक ग्रहण करना चाहता है कि इसका मन से शरीर का त्याग करना चाहता है। सल्लेखना सिद्धान्त के द्वारा बताया गया है कि जब जीव को लगता है कि वह मृत्यु के करीब है तो उसे कठिन प्रक्रिया के द्वारा शरीर को कृश करना चाहिए और ये सम्पूर्ण प्रक्रिया गुरु के देख-रेख में होनी चाहिए। सल्लेखना पद्धति द्वारा जीव को मृत्यु सुखपूर्वक उसी प्रकार मिलती है जिस प्रकार एक सैनिक देश की रक्षा के लक्ष्यार्थ सौभाग्य पर युद्ध के समय अपने शरीर को त्यागता है। युद्ध में सैनिक को ज्ञात होता है कि उनकी मृत्यु सम्भावित है उसके बाद भी वह उस सम्भावित मृत्यु से डरते नहीं हैं बल्कि उस धर्मोपदेश पर आगे मृत्यु को सुखपूर्वक ग्रहण करते हैं। सल्लेखना छोटी आयु वाली और स्वस्थ जीव के लिये नहीं है। यह उन मुनिवर्ग और भावकों के लिये जो मृत्यु के समीप हैं। सल्लेखना एक ऐसा महोत्सव है जिसमें जीव सभी दुःखों से मुक्त हो आत्म उन्मथन करता है।

संक्षेप में, आत्महत्या दुःख एवं शोकयुक्त प्रवृत्ति का परिणाम है जबकि सल्लेखना सुखपूर्वक शोकरहित ढंग से मृत्यु के ग्रहण करने की कला है।

Self attested  
Sonal



आत्महत्या कायदा का सुपक है क्योंकि किरूरी में व्यक्ति हीन राज्या में मुक्त होता है, सल्लेखना बीरी का अभूषण है जो धर्म से प्रतिष्ठ होकर किया जाता है। आत्महत्या एक अभयिवाण है जो दूसरों के विचारों से प्रभावित होकर किया जाता है दिल्ली का बुराही काण्ड इसका स्पष्ट उदाहरण है जिसमें अभयिवाणों के कारण एक ही परिवार के 11 सदस्यों में सामूहिक आत्महत्या की गी। आत्महत्या पलायनकारी नीति से प्रभावित होता है। इसने व्यक्ति जब जीवन की चुनौतियों का सामना नहीं कर पाता है तब वह जीवन से पलायन कर लेता है जैसे बरसात बिहार के 300 एम्स ने किया। सल्लेखना में अभयिवाणों को स्थान प्राप्त नहीं है। यह स्वयं की इच्छा से की जाती है। आत्महत्या शोक एवं असंतोष का परिणाम है जबकि सुख और संतोष का फल सल्लेखना है क्योंकि वह जीवनभर की तपस्या के द्वारा प्राप्त होता है। आत्महत्या संसार में मारण को जन्म देती है जिससे संसार में शिला की प्रवृत्ति बढ़ती है जबकि सल्लेखना के द्वारा धार्मिक वातावरण बनता है ये मृत्यु जैसे अवसाद को महोत्सव का रूप देती है। आत्महत्या के द्वारा व्यक्ति सबकुछ खो देता है, सल्लेखना के द्वारा वह परम पुरुषार्थ को प्राप्त करता है। इस प्रकार आत्महत्या में तीन कथारों (रागद्वेष, मोह) के आवेश में आकर शरीर को हाथि पहुँचानी जाती है। यह मृत्यु भौतिक अवसाद का परिणाम है जबकि सल्लेखना प्रमादरहित समधि की अवस्था है जो आध्यात्मिक संतोष की प्राप्ति कराती है।

हिन्दू समाज में जीवन का परमलक्ष्य मोक्ष पुरुषार्थ को प्राप्त करना है। धारक्यनीति में कहा गया है कि "जित मनुष्य ने चारों पुरुषार्थों में किसी एक की सिद्धि नहीं की है तो उसका जीवन मृत्यु के समान होता है।" आत्महत्या के द्वारा प्राप्त मृत्यु हमें पुरुषार्थों की सिद्धि नहीं करने देती है जिसके कारण व्यक्ति आत्मा के प्रथम स्वरूप को समझ ही नहीं पाता है और वो इस संसार से कभी भी मुक्त नहीं हो पाता है। इसके विपरीत इच्छामृत्यु का वरण करने वाला पुरुष आत्मा के प्रथम स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करके मोक्षानुभूति प्राप्त करता है।

निष्कर्षतः आधुनिक समय में आत्महत्या के आकड़ों में उत्तरोत्तर वृद्धि का कारण पारिवारिक कलह और वैवाहिक सम्बन्धों में आई समस्याएँ हैं। अणुप्रस्तता, दहेज, परीक्षा में विफलता, प्रेम-सम्बन्ध में विफलता, शर्मिंदगी, लम्बी और अस्वास्थ्य बीमारी, मानसिक रोग, गरीबी, बेरोजगारी, नशीली दवाओं के व्यसन आदि भी आत्महत्या के उत्प्रेरक घटक हैं। इन समस्याओं को दूर करने का परम फलदायक साधु का है। साधु का कर्तव्य है कि वह एक ऐसा सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक वातावरण निर्मित करे जिसमें प्रत्येक व्यक्ति की मकारात्मक प्रवृत्तियों का निरोधन हो सके और वह व्यक्ति राष्ट्र में जीवन को जीने की एक सकारात्मक राह ढूँढ सके। मृत्यु के शाश्वत सत्य को ज्ञान के साथ स्वीकार करते हुए, मृत्यु के विकृत रूप को हतोत्साहित करते हुए जीवन को एक महोत्सव की भाँति व्यक्ति को जीवन जीने की कला सीखने की चेष्टा करनी

Self-attested  
Small

चाहिए ताकि वह जीवन को पूर्ण लक्षित और पूर्ण उत्साह के साथ जी सके एवं अपने जीवन को एक अर्थ प्रदान कर सके।

युवाओं में इस समस्या को समाधान के विवेक तालवार को समाज में नैतिक शिक्षा का प्रचार प्रसार करना होगा। नैतिक (दार्शनिक) शिक्षा के द्वारा ही शरीर, मस्तिष्क एवं आत्मा का आध्यात्मिक विकास सम्भव है। नैतिक शिक्षा व्यक्ति को उसके अस्तित्व के प्रति एक गहन दृष्टि प्रदान करती है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने भौतिक अवसादों का निरोधन करके एक सन्तुष्ट एवं सुखदायक जीवन जीने की कला सीखता है और आध्यात्मिक संतोष की प्राप्ति करता है।

सन्दर्भ-सूची

1. पञ्चम स्मृति- 4/1-2 मन्वन्त कर्म ५२-७०/२९, महाभारत- १४/२१-२२।
2. महाभारत- २/४।
3. Fatal Freedom: The Ethics and Politics of Suicide, P. no-11, Thomas
4. सत्यकामप्रज्ञापानेकना सत्येकान। सायन सत्यकामप्रज्ञापानेकना व अथर्वण  
सत्यकामप्रज्ञापानेकना सत्येकान। (In Encyclopedia of Jainism.com)
5. आचार्य तुलसी जीवरदन प्रभा, अथाव- ०४, पृ- १३।
6. सत्यकामप्रज्ञापानेकना, श्लोक- 122।
7. गीता- 16-21।
8. धर्मोक्तान्तरेणु सत्येकानेकना व श्लोक। (अथ अथावने कृत्यु सत्येकना व अथर्वण।)



Self-attested  
Jonal

# उन्मेष



Ummesh

---

An International Multilingual Half Yearly Refereed Research Journal

---

Vol. : 3

No. 1

November, 2016-April, 2017

सम्पादकद्वय

डॉ० राधेश्याम मौर्य

शिवेन्द्र कुमार मौर्य

सह-सम्पादक

डॉ० मनोहर लाल

डॉ० अरविन्द्र कुमार

प्रकाशक

जन सेवा एवं शोध शिक्षा संस्थान, प्रतापगढ़-२३०००१ (उ०प्र०)

■	vd'i'y fpūh , d fo'y'ŋ.ɪ <i>जय प्रकाश यादव</i>	181&183
■	hūjɾ e hife i'jpuh di ielt'kL=; v/; ; u <i>सत्यभामा</i>	184&186
■	jɪfrdɪyɪu uɪfrdfoɾi , o nohɪɪ <i>सत्यमी मिश्रा</i>	187&189
■	vɪfn dɪy l hūjɾh; ielt e foKɪu d cnyɾ Lo: iŋ , d ō; k[; k <i>अजय-प्रकाश जयप्रकाश</i>	190&192
■	Yɪd thou vɪj i'fgɾ; <i>डॉ० विजय कुमार खेतवाड़ा</i>	193&197
■	di'ŋ e ; (i iiti dh i'jɛi'j <i>डॉ० उमाशंकर गुप्ता</i>	198&199
■	iɾ; (i ielt'ɪ di'eɪj 'lon'ɪu d vɪyɪd e <i>सतीश विजवादी</i>	200&202
■	tuoh vɪj n'luɪfi fi'g di d'fɪk i'fgɾ; <i>ब्रवीश जयप्रकाश</i>	203&206
■	i'ɪn dh i'ŋn; ; prui <i>गोपाल यादव</i>	207&209
■	yɪd dyɪdɪj 'fɪ[ɪj h Bɪdɪj' di i'ŋɪj fo'ɪk i'nhɪ 'i=f/ɪj' <i>शशीश कुमार यादव</i>	210&214
■	egɪɾei xɪ/ŋ vɪj bɪɾb /e <i>अरुण कुमार सिंह</i>	215&217
■	cɪy' dh n'v e fopɪj vɪj i'ɾ <i>सोनी कुमारी</i>	218&220
■	hūjɾh; hɪ'k'vɪ e i=dɪfjɾi dh 'k; vɪɾ vɪj fgɪnh i=dɪfjɾɪ <i>डॉ० अमित कुमार सिंह कुशाग्रवा</i>	221&226
■	vɪyɪby i'ɛɪpɪj i=ɪ dh v'ɪɾɪɾn di ; oɪ fo'ɪfɪ; h i'j i'nhɪ i'fgɪnh v[ɪcɪj h d oc i'ldj.ɪ d i'ɛɪpɪj , o foKɪu i'j vɪ/hɪjɾ v/; ; u <i>ब्रवीश कुमार</i>	227&232
■	i'fɾeɪ&ɪhB r'fɪk v'ɪɾ y[ɪ <i>सतत कुमार मौर्य</i>	233&235
■	Loɾ=; i'ŋj vɪ/hɪfud xɪ'jɾɪ dh'ɪ d'foɾi dh ɟe[ɪ ɟofu; k <i>समर सिन्हा</i>	236&240
■	dɪe; uɪ vɪj fgɪnh vɪyɪpui <i>अश्वनी कुमार पाण्डेय</i>	241&242
■	v i'v; oɪ.ɪk e fgɪnh n'ku <i>गिरधरा कुमार</i>	243&245
■	v tuɾ; r d vɪbu e ub dgiuɪ <i>शिवाजी लक्ष्मण</i>	246&250
■	d'pɪh di diuu <i>प्रियंका कुमारी मिश्रा</i>	251&253
■	fgɪnh uotɪxj.ɪ i' cɪy'ŋ.ɪ h'v'v d fuc/ɪk dh n'fu; ; <i>डॉ० समीर कुमार यादव</i>	254&263

## दृष्टि के द्वार

विश्व के द्वार

आज भी भारत की अधिकांश जनसंख्या गाँवों में रहती है और जापानिकता की दृष्टि में ये गाँव और यहाँ के लोग बहुत पीछे हैं। हिन्दी साहित्य में इतनी बड़ी जनसंख्या को तुलनात्मक रूप से बहुत कम जगह मिली है। जापानिक युग में भी गाँव के जीवन, यहाँ के लोगों की चुनौतियाँ, खुशियाँ, तकलीफें, सपनों को पूरने सम्झने वाले लेखक बहुत कम हैं। शिवमूर्ति ही ऐसे लेखक हैं, जो गाँव और उससे जुड़े सभी पहलुओं को अपनी लेखनी के माध्यम से उसका सजीव चित्रण करते हैं। वह अपनी कहानियों में ग्रामीण समाज को उलने ही बेटीयों, उलने ही कुत्तों, उलने ही खुरदरे उलने ही विभिन्न रूप में चित्रित करते हैं। चित्रण यह वास्तव में है।

शिवमूर्ति जी का नवीनतम उपन्यास 'कुच्छी का कानून' एक ऐसे विधवा स्त्री की कहानी है जो अपने जोख के अधिकार के लिए पंचायत से लड़ती है और उसे इस लड़ाई में समाज के उपायद्वय व नई पीढ़ी के स्त्रियों व पुरुषों का सहयोग मिलता है और वह इस लड़ाई में जीतती है। यह उपन्यास स्त्री सशक्तिकरण और पितृसत्तात्मक समाज पर चोट करती है। यह आधुनिक स्त्री की एक विजय-गाथा है। इस उपन्यास का केन्द्र भी गाँव है, साथ ही शहरी संस्कृति का प्रभाव ग्रामीण संस्कृति में जैसे परिवर्तन आता है, इसे दिखाते का प्रयास किया गया है।

शिवमूर्ति की कथा संसार के स्त्रीपात्र बड़े ही सजीव व मार्मिक रूप से हमारे ग्रामीण समाज के गरीब व दलित स्त्री वर्ग की उपनोद स्थिति को उजागर करते हैं। 'कुच्छी का कानून' स्त्री संघर्ष की एक नई गाथा है। यह कहानी एक विधवा स्त्री के अपनी मर्जी के पुरुष से बच्चा पाने और भरी पंचायत में अपनी जोख पर अपने हक के लिए लड़ जाने की बेहत सशक्त, मार्मिक और ज्ञानदार कहानी है। इस कहानी में स्त्री पंचायत में हारती नहीं है; वह गाँव के बूढ़ों को अपनी तर्कशक्ति से उन्हीं की भौट में निकलरिक्त कर देती है और एक विजयी के रूप में उभरती है। और उसे इस संघर्ष में नव-यौवना से युक्त समाज का बल मिलता है। इस कहानी को मुख्य पात्र कुच्छी है, जो विधवा है। विधवा होने के पश्चात् परिस्थितियों का सामना ने जाकर बूढ़े सास-ससुरा को सेवा के लिए ससुराल में ही रहने लगती है। उसके पेटक सम्पत्ति पर काबू रखने के लिए जेठ बनारसी से लेकर गाँव के लोग लड़वाई भरी नजरों से देख रहे थे। यह स्त्री पिनेही समाज में अपने सास-ससुरा और अपनी स्वयं की अस्मिता का के लिए संघर्ष करती है और अपनी जोख से किसी और का बच्चा पैदा कर अपनी सम्पत्ति के लिए धारिस पैदा करने का संकल्प लेती है। उसका यह कार्य पितृसत्तात्मक समाज में भूचाल का देता है क्योंकि यह मातृसत्तात्मक शक्ति का विस्तार ही रहा था। उसकी जेठ बनारसी द्वारा पंचायत में उसे कुसटा और अपमानित करने के उद्देश्य से पंचायत बुलाता है। उसे पंचायत में अश्वि गर्भ के लिए धोरा जाता है। लेकिन अशिक्षित कुच्छी टिपेरी और हिम्मत से अपने जोख में पड़ रहे बच्चे को जन्म देने का हक दिखे जाने की बात करती है और कहती है— 'मैं दूसरे से शीज लेकर अपने लिए सहारा पैदा कर रही हूँ। मैं अपनी जोख का उद्धार करना चाहती थी। जोख मेरी है तो हक किसका होगा?'

विधवा कुच्छी पुत्र के नाम के आगे नहीं ले नाम को ही पर्याप्त मानती है। उसे इस बात पर बड़ी ईशानी होती है कि गाँव लिए गये बच्चे को तो पति की धारिसत में हिस्सा मिल जायेगा लेकिन स्वच्छा से किसी पुरुष से पैदा होने वाले बच्चे को हक नहीं मिलेगा। वह कहती है, 'जो मेरी जोख से पैदा होगा, उसका

ज्यादा चाहें जिसका ही लेकिन अन्धा जुनू तो मेरा होगा। गोट चारों बच्चों में तो मेरे जुनू की एक बूट भी नहीं होगी। दोनों में से मेरा ज्यादा सगा लौन हुआ? यह सिर घुमाकर चारों तरफ देखती है— मुझे तो विश्वास नहीं होता कि यह जवाहर लाल नेहरू ऐसा अन्धा कानून पास कराये होंगे, जादू में तो बहुत गल्ल आदमी लगते हैं।

यह कानून पर सवाल उठाने के परचायत पुरुष के आगे मी के नाम को ही पर्याप्त मानते हैं। यह इस तरह को ऐतिहासिक पुराण व आस्था का सहारा लेती हैं। उसका यह निर्णय समाज पर दुरगामी प्रभाव डालने वाला है। जिससे समाज के कृत्रिम विघटन की ज्यादा आशाका है। स्त्री का पुरुष के कब्जे से मुक्त हो उसे स्वतंत्र अस्तित्व के स्थापित हो जाने का मंत्र है जो जन्म-जमौत उत्तराधिकार के साथ उसे आर्थिक सजबूती से ज्यादा स्वतंत्र करता है। कुच्ची का यह निर्णय एक क्रांति की तरह है। जो इक्कीसवीं सदी के समाज में समानता की वकालत करता है।

स्त्री का यौन शोषण होना और प्रतिरोध किये जाने पर उसके ऊपर शारीरिक व मानसिक अत्याचार किया जाना पितृसत्तात्मक समाज की सामान्य प्रवृत्ति है। नारी के जीवन को निर्धारित करने के लिए बहुत सारी नैतिकता रूपी आचार-संहिता निर्धारित की जाती है और पुरुषों को एक खुले साइड की तरह छोड़ दिया जाता है। पंचायत भी पुरुषों को नैतिकता के नाम पर खुली छुट दिया हुआ है जबकि स्त्री के लिए बहुत सारे बंधन। कुच्ची के प्रतिरोध को बल इसी समाज के खुले नियमों ने प्रदान की। और उसका समर्थन वीटिक एग के पुरुष और जागरूक स्त्रियों द्वारा मिलता है। जिसके कारण कुच्ची पर सवाल उठाने वाले खुद सवालियों के धरे में आ जाते हैं और पंचायत से भाग छुड़े हो जाते हैं।

इस उपन्यास में समाज के रिश्तों का जो मोल दिखाई दिया है वह आज के गांव में अभी भी दिखाई पड़ता है। कुच्ची अपने सास-ससुर को मी-बाप की तरह सेवा करती है तो उसका चचेरा जेठ धन-संपत्ति के लिए अनेक कुचक रचना है और अपनी भद्र के अस्मिता पर भी हमला करता है। उसे बदनाम करने के लिए और घर से बाहर निकालने के लिए पंचायत बुलाता है। कुच्ची के मन में आगे इस परिवर्तन के लिए इलाज के दौरान अस्पताल में मिर्ची नर्स और कुच्ची के संगठन ही जिम्मेदार है। कुच्ची के युवा मन में नर्स कुट्टी को बाले सुनकर अज्ञानक आ धमके फैसल के कारण निस्तान रह जाने तथा निस्तानता के कारण परिष्कारिक समिति व सामाजिक प्रजुट छो देने की स्थिति पैदा होने की पीड़ा-असह्य हो उठती है। वह सास को इस बात को लिए तैयार करती है और अपने कोठ में इच्छा-धारण करती है। कुच्ची को बल धन्यु-बाबा से मिलता है जो उसे पंचायत में बहस के लिए जान देते हैं।

शिबमूर्ति जी का उपन्यास कुच्ची का कानून नये स्त्री सशक्तिकरण और नवजागत समाज के उदय से सम्बंधित है। यह पितृसत्तात्मक सत्ता पर चीट करती हुई कथानक है। जब मौयो की पंचायत का बदलता स्वरूप और नारी चेतना का नय स्वरूप दिखाई पड़ता है। इस कथानक का प्रारम्भ कुच्ची के विधवा होने और उसके चचेरे जेठ द्वारा संपत्ति हड़पने की साजिश से प्रारम्भ होती है। कुच्ची के गर्भपती होने से गाँव में उधर-पुधर पंचायत का बैठना और उसमें गर्भ धारण को नैतिक समर्थन मिलना एक नये समाज के उदय को दर्शाता है। शिबमूर्ति जी ने कुच्ची का कानून में पंचायत को एक तरह के शास्त्रार्थ की घंटी की भाँति प्रस्तुत किया है। जहाँ शास्त्रार्थ का विषय किसी निगूठ अन्ध्यात्मिक दर्शन अथवा धार्मिक विचार के निष्पादन से जुड़ा नहीं है। यहाँ विचारगोचर विषय एक विधवा स्त्री के कोठ से अधिकार से जुड़ा है। मी बनने के उस विधवा के संकल्प से जुड़ा है। यहाँ एक विधवा सामान्य अबला है— यह धर्म-शास्त्रों की श्रांता नहीं है किन्तु उसका व्यवहारिक ज्ञान प्रबल है। उसकी साधारण बुद्धि में असाधारण तर्कशीलता समाहित है।

यह उपन्यास सिर्फ नारी के कोठ से अधिकार को नहीं दर्शाता बल्कि भारत के नये गाँव के स्वरूप का दर्शन होता है। इसमें घटी घटना या सफाट गाँव के उधार्थ के करीब होता है। गाँव के प्रचलित पुरानी परम्पराओं का विघटन है तो अकेली स्त्री का नई दिशा में बढ़ने का साहस है। पंचायत को कैसेसे को धन-बल से नहीं बल्कि तर्कपूर्ण सफाट से ही बदले जायेंगे। बाह्य समाज का प्रभाव गाँव में एक नई चेतना आता है। इसका उदुदृश्य मौयो में नये सामाजिक मूल्या को स्थापित करता है।

शिबमूर्ति जी रचनाओं में मुदयत स्त्री विमर्श का मुदटा है किन्तु उनके स्त्री विमर्श के कोण्ड में आज की पढ़ी-लिखी जागरूक भद्र नारी नहीं बल्कि निम्नवर्गीय आड़ों के दैहिक ताप व उलपीड़न किजीविधा

प्रतिरोध परिवारिक झंझट आदि पर केंद्रित है जो परिवार समाज के टांगरे में छुटती है। ये जनपद मरीचक संचित उपेक्षित औरते हैं जो मात्र संघर्षपूर्ण जीवन बिताती हैं। ऐसी परिस्थितियों में वे औरते किस प्रकार अपने आत्मविकास से लड़ते हुए संघर्ष करती हैं। जोख पर स्त्री के अधिकार जैसे मुद्दे से व्रतन भी व्रस कहती में बहुत कुछ गुंसा है जो हमारी सचेतना को भीतर तक आंदोलित करता है। यह किला अस्पताल की व्यवस्था और समाज के भव्य तरीकों को उजागर करते हैं।

शिक्षणों को का लेखन हमेंरा से प्रामाणिक यथार्थ पर लिखने का कार्य किया। यह स्त्री सचिविकरण के पक्ष में लिखे और अपने पात्रों द्वारा समाज के स्त्री महत्तुओं को उजागर कर दिया है। यह अन्य रचनाओं की तरह आम बोलचाल को भाषों, मुहावरों व कथायतों का धड़ल्ले से प्रयोग करके अपनी भाषा को अद्वयन्त स्थानाधिक सुपाह्य एवं रोचक बना देते हैं। उनका उद्देश्य सामाजिक मूल्यों की स्थापना का है। जहाँ बरन्धरा के प्रति विद्रोह की स्थिति है। इसमें उच्च पारम्परिक सिद्धान्तों के दुर्नमूल्यांकन एवं नूतन मूल्यों के प्रतिपादन का है।

### Unit 5

1. इडिया इनसाइड पृष्ठ 20
2. पडी पृष्ठ 21
3. सुमी का कातू शिक्षणों पृष्ठ 26
4. पडी पृष्ठ 27
5. इडिया इनसाइड पृष्ठ 45
6. पडी पृष्ठ 24
7. इडिया इनसाइड पृष्ठ 25

\*\*\*\*\*

# वीक्षा

मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान की अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका

प्रधान संपादक

सदानन्द शाही

संपादक

बृजराज सिंह

कमल कुमार



लीकायत प्रकाशन



	हिन्दी कहानियों में लैंगिक रूप के विविध रूप	१५५-१५६
	राम झा	
	विद्यु अन्तार को लड़िका	१५६-१५७
	सर्वेस विद्यापीठ	
	'सिद्धि' को कहानी के अर्थ में	१५७-१५८
	कालकवीर की	
	समस्या और लक्ष्य : 'अमृतो कृतवन्तः शरी' के विद्योत्तर संदर्भ में	१५८-१६१
	सोहन कुमार मिश्र	
	कालकवीर की साधनात्मक : हिन्दी लक्ष्य का उदात्त मानकवाद	१६१-१६५
	डॉ. अशोक मिश्र	
	'प्रकाशक' में प्रतिपादित साधु-विवेक एवं उस पर संस्थापक का प्रभाव'	१६५-१६८
	सुरेश कुमार शर्मा	
	विद्यापीठ में लक्ष्य का अन्तर्गत लक्ष्य	१६८-१७०
	विद्यापीठ	
	साधु लक्ष्य को अन्तर्गत में लक्ष्य का	
	के अन्तर्गत लक्ष्य/प्राप्त्यर्थी	
	सोहन कुमार शर्मा	
	अशोक मिश्र	१७०-१७५
	कालकवीर लक्ष्य के अन्तर्गत लक्ष्य में अन्तर्गत लक्ष्य का विचार	१७५-१७८
	विद्यापीठ	
	लक्ष्य विचार की लक्ष्य/प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	१७८-१८०
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी	१८०-१८५
	अशोक मिश्र	
	विद्योत्तर रूप की लक्ष्य/प्राप्त्यर्थी	१८५-१८७
	डॉ. अशोक मिश्र	
	लक्ष्य विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	१८७-१८८
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	१८८-१९०
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	१९०-१९१
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	१९१-१९२
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	१९२-१९३
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	१९३-१९४
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	१९४-१९५
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	१९५-१९६
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	१९६-१९७
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	१९७-१९८
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	१९८-१९९
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	१९९-२००
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	२००-२०१
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	२०१-२०२
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	२०२-२०३
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	२०३-२०४
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	२०४-२०५
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	२०५-२०६
	सोहन कुमार शर्मा	
	समय विचार और प्राप्त्यर्थी का अन्तर्गत लक्ष्य	२०६-२०७
	सोहन कुमार शर्मा	

## शिवमूर्ति के गाँव का बदलता यथार्थ

प्रियंका मिश्रा

भारतीय संस्कृति के मूल्यों का आधार ही ग्रामीण जीवन रहा है। जिससे पारम्परिक पधार्थ में साध, भारत जोरान और स्वार्थ रहित। जन्ममरण में बदलते आते प्रम है जो बदलते समय का पधार्थ और कपट को राजसीति भी है।

वेदक युग के आदर्श में धर्मधर्म के ब्रह्म, राजसीति, समाज और धर्म्य व्यवस्था तबसे बदलते आया। सन् ६० के बाद एकीकृत संस्कृति में कई बदलाव आये, बाबा, पारम्परिकता और औपनिवेशिकता को लहर खाता तक, जो परंपरा है। ग्रामीण जीवन का पधार्थ परिवर्तित हुआ। आजकाल के बाद का भारत भी भी ग्रामीण भारत अपनी तबसे विद्वेषताओं और

धर्मिकता हुआ है जो का आधार है 'शिवमूर्ति'। सन् ६० के बाद का बाद प्रगल्भ और गेज का चीज ही है अपने बदलते समय के साथ वह शिवमूर्ति का गाँव भी है। जैसे जो कहा गया है कि— 'जिसमें जिस वर्ग या वर्गों में पैदा होता है। उसी को लोग, आदर्श व आकांक्षाओं को आगेका कर लेता है और समाज में जो उसे मान-समान, विस्मय-पूजा, प्यार, हिंस व भय जो सिद्धा है, वही तबसे अवलोकन का हिस्सा बन जाता है।'

शिवमूर्ति इसी बदलते समय के ग्रामीण जीवन को जीने वाली है अतः इनके आनेतान में भी बदलते समय के लक्ष्य पधार्थ को इनकी रचनाओं (कथा साहित्य) में देखा जा सकता है। आजकाल के बाद के गाँव का रूप अलग है। इसी चिन्ता को उठाते अपने रचनाओं— 'कसाईबाड़ा', गिरिया-चरित्त, भारतवर्षम् गिरा उसका जोर, अकालपद, कसर-कम्पूरी आदि में संकलित किया है। इनके कथा उपन्यासों में अलग को ग्रामीण संस्कृति का सही अंकन मिलता है। प्रेमगत के बाद आने पताकर गेज, राजसीति, गेज वोगों और शिवमूर्ति आदि ने कलात्मिकता के भारत गाँव को बहुविध संविधा का आधार रखा है। उनमें पधार्थ को केवल खेतिहर किसान का पधार्थ समझने के अलावा, ग्रामीण अर्थव्यवस्था में शामिल कई पधार्थ जैसे रबी-जीवन, जलवायु, राजसीति छुटका और आपसी ईर्ष्या आदि को कथात्मक का आधार बनाया।

शिवमूर्ति को एक अति प्रसिद्ध कहानी 'गिरिया-चरित्त' है। जिसमें गाँव के जीवन का पधार्थ हर तरफ से दिखता है। एक लच्छा रबी की दारुण पीड़ा को उसे कलात्मिक में व्यक्त किया गया है। जैसाकि लोकतांत्रिक सबसे बड़ी प्रभावी सत्ता रही है, परन्तु वही लोकतांत्रिक देश को सबसे कमजोर वर्ग के लिए क्या कर पा रही है। 'गिरिया-चरित्त' को नयिका बिल्ली अपने पैरे पर खड़ा होता जो जानती है, परन्तु पुरुष वर्ग के सम्बन्ध को भेदना नहीं जानती है। पारिवारिक संस्कार से बंधी रहती है, पितृसत्ता उसके सफल व्यक्तित्व के बनने में बाधक बनती है। एक स्त्री को आत्मनिर्भर बनने में रोक्ती है और जब इस सफलता को पाने के लिए घर से बाहर जाती है तो स्त्रियों के लिए भयानक, असुरक्षित, बाधित व चरित्त पर दसा पैदा करने वाले संसार के रूप में चित्रित होती है।

'कसाईबाड़ा' और गिरिया-चरित्त से लेकर 'आखिरी छलाक' (उपन्यास) तक जो परिदृश्य है, वह सामकालीन भारत का पधार्थ रूप है। बाँधार, बाबा, कोर्ट, जाति-पति, किसान, दलित वर्ग, साम्प्रदायिकता, खेती-नौकरी पारिवारिक विघटन का जो एक सफ़र चित्र चित्रित होता है जो अनुदर और दण्डार है। प्रत्यक्ष का हल्लाबोल प्रशासनिक व्यवस्था से लेकर सिद्धा के क्षेत्र में भी फैलता गया है, जिसे 'भारतवर्षम्' कहानी में प्रस्तुत किया गया है। पधार्थ को गठ तो दूसरों से अपेक्षित होते हैं, परन्तु बदलते समय में एक संघुसा चरित्त का

शोधार्थ (हिन्दू विभाग),  
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,  
वाराणसी



## An Appraisal of Urban Land Use and Planning of Mirzapur City

Abhishek Nath Tripathy, G.N. Singh and P.R. Sharma

This article discusses urban land use growth, urban expansion and the implications. The urban land use and development of the urban area of Mirzapur city is studied. The study area is Mirzapur city. The objectives of the study are to identify the urban land use and the urban expansion of the city. The study area is Mirzapur city. The objectives of the study are to identify the urban land use and the urban expansion of the city. The study area is Mirzapur city. The objectives of the study are to identify the urban land use and the urban expansion of the city.

The study area is Mirzapur city. The objectives of the study are to identify the urban land use and the urban expansion of the city. The study area is Mirzapur city. The objectives of the study are to identify the urban land use and the urban expansion of the city.

### Introduction

Urban expansion is rapid with the development of Mirzapur city. The urban land use and the urban expansion of the city is studied. The study area is Mirzapur city. The objectives of the study are to identify the urban land use and the urban expansion of the city. The study area is Mirzapur city. The objectives of the study are to identify the urban land use and the urban expansion of the city.

The study area is Mirzapur city. The objectives of the study are to identify the urban land use and the urban expansion of the city. The study area is Mirzapur city. The objectives of the study are to identify the urban land use and the urban expansion of the city.

The study area is Mirzapur city. The objectives of the study are to identify the urban land use and the urban expansion of the city. The study area is Mirzapur city. The objectives of the study are to identify the urban land use and the urban expansion of the city.

*Dr. Abhishek Nath Tripathy*  
*G.N. Singh*  
*P.R. Sharma*  
 26.10.21

## Appraisal of People Centric Sustainable Development Goals in India

**Dr. Akhilendra Nath Tiwary**

Asst. Professor & HOD  
Dept of Geography  
SVV College, Bhabhua, Kaimur  
V.K.S.U, Bihar

**Dr. Meeta Ratawa Tiwary**

Former Reader of Geography  
Dept of Geography  
Yobe State University, Nigeria

### Introduction

The success of AGENDA - 21 in achieving social, economic and environmental goals by all the countries of the world, a post 2015 agenda was adopted known as AGENDA - 2030 w.e.f. 1<sup>st</sup> January 2016 to be achieved by 2030. It had also undertaken complex political issues of peace and partnership. Now the comprehensive meaning of development is sustainable development. In the current paper, an appraisal of people centric five Sustainable Development Goals has been done by SWOT analysis based on data available from 2015-16 to 2019- 2020. among the major findings; good progress in agriculture and rural sector vulnerability of children below five years of age, women in reproductive age (15-49 years) and aged population (above 60) give a red signal and alarm the policy makers to take immediate action to solve the problem. Another serious issue is drug addiction, alcohol and tobacco consumption and increasing stress and crime rates especially against women. Among major recommendations, increasing ICT based services of marketing, credit and health coverage in rural areas, gender sensitization and women empowerment, regular training to ANM, ASHA, Anganvadi and health workers, better testing health facilities, improving educational infrastructure are given. Both UPA and NDA government have done wonderful job so far. Some lacuna could be filled as found and suggested in the chapter.

In order to achieve Sustainable Development Goals by 2030, India has to relook its current development approach and make certain effective policy measures if it has to achieve sustainability. The present paper is an appraisal of the

*Self & Meeta*  
Akhilendra Nath Tiwary

RESEARCH METHODOLOGY IN  
URBAN STUDIES

21

ABSTRACT

Author Name: [Name], Department of Geography, [University Name]  
[Address]  
[City, State, Zip]  
[Phone Number]  
[Email Address]

Introduction

The world is undergoing rapid change. There are more than five thousand urban centers in India occupying more than one third of the population, showing the striking similarity in the quality of urban life in the urban regions. The evaluation of stability of the urban area is a long and tedious process. It is difficult to develop a model to predict the future of the urban area's change. The development of a model requires both statistical and geographical information systems (GIS) (Geographical Information Systems) and RS (Remote Sensing) have been adopted as promising tools and techniques to work

in the study in urban research with some limitations of stability and sufficiency of available data. The digital prepared with the help of these tools and techniques look for. Thus, they can be incorporated to study the social, cultural and economic development. A good research methodology requires urban geography provides accurate information for the sustainable urban living standard. An attempt has been made to focus on the research methodology in urban geography with its relevance in the present practices of urbanization and urbanization. The methodology (GIS) urban application of GIS, and Remote Sensing and land use planning for the development.

Urban geography is the study of the way of thinking in by its content. Urban geographers have evolved the study of a broader spatial context with statistically evaluated and the global impact of human activities. Urban geography has evolved historically from a focus on the spatial distribution of population and land use patterns to a focus on the stability of urban patterns or spatial structure. At the urban regional and local scales, urban geography has tended to focus on issues of or changes in the urban landscape, place based social movements, and the urban form and space (Kilgus and Kilgus, 2000). A geographer's primary interest is in the study of the relationships between people and their habitat. In an urban setting, that habitat comprises not merely the territory of the city but the individual but also the spatial changes between a large number of urban and rural settlements within the region (Brundage, 2000). There are certain kinds of different governmental and non-governmental planning and implementation. It is not possible for a single plan, body, development authority and the individuals involved in different development works to create a proper development of the city and its location. A geographer has the advantage in this field. Only

Dr. [Name]  
[Address]

## Chapter 23

# Spatial Structure and Urban Development in Indian Cities

P.R. Sharma, Akhileendra N. Tiwary, and G.N. Singh

**Abstract** If geographic space is considered as a set of interacting elements or phenomena, spatial structure must be understood on the principle of organization of the geographic entity under study. The spatial structure leads to a systematic theoretical setup as well as formulation of geographic models and development plans. This analysis aims to arrange urban public spaces judiciously, so that such factors as functional morphology, accessibility, connectivity, environmental sustainability, social equality and security, cultural creativity, and economic productivity are ensured. The spatial arrangements of both differentiations and similarities in the real world are interpreted in the spatial structures by geographers. Spatial structure in the urban setting in general and for the developing world in particular has great significance. The developing world is urbanizing every day. The existing models of spatial structure do not signify the real developing world. Therefore, it is needed to have a model of spatial structure for the development planning of this world. The present study concentrates on the urban development of Indian cities, taking as case studies Lucknow and Mirzapur City, both in Uttar Pradesh, India. The former is the capital of Uttar Pradesh State, the latter is a very ancient city having a long cultural heritage.

**Keywords** Developing world • Heritage city • Public-private partnership • Spatial structure • Sustainable urban development • Urban development and planning

---

P.R. Sharma (✉)  
Department of Geography, Banarus Hindu University, Varanasi, Uttar Pradesh, India  
e-mail: prsharma1950@gmail.com

A.N. Tiwary  
Department of Geography, Yobe State University, Damaturu, Yobe State, Nigeria

G.N. Singh  
SAPS College, Bhairatnagar, Varanasi, UP, India

© Springer Science+Business Media Dordrecht 2016  
A.K. Dutt et al. (eds.), *Spatial Diversity and Dynamics in Resources and Urban Development*, DOI 10.1007/978-94-017-9788-3\_23

477

Self-Attested

Akhileendra Nall Tiwary  
25.10.21

## A Geographical Study of Vindhyanchal in Mirzapur City, U.P. India

❖ Author: Dr. Akhilendra Nath Tiwary

*Senior Lecturer and Head  
Department of Geography  
Yobe State University  
Damaturu, Nigeria*

antwary2000@gmail.com

Vindhyanchal is a very famous pilgrimage and tourism site in the west of Mirzapur city, Uttar Pradesh State, India. The main city in east is a commercial centre for cotton, metal ware and carpets. Among the Hindu population, it is believed that the primordial creative forces of the GOD and the power of the GODDESS make respective triangles which superimpose opposite to each other as hexagram at a point or node (*Bindu* (point) + *Vasini* (located) or *Vindhyavasini*, located in a point/node) in Vindhyanchal. The region has served as a natural connecting point between north and south India. Before independence of India from Britain in 1947, it was a flourishing commercial centre. Post-Independence, the negligence of planning authorities and nexus of bureaucrats and politicians started affecting its development. In the meantime, emergence of new industrial cities as Kanpur, Agra, Moradabad, etc., nearer to the capital city of Delhi, posed serious challenges to the development of this small city as many commercial and business activities along with the skilled workforce started shifting to these new cities or to the relatively bigger neighbouring cities of Varanasi in east and Allahabad in west. In the present paper, the significant causes, issues and challenges in development of

Vindhyanchal is discussed with geographical perspective. An attempt has been made to find out the ways to restore the lost glory of the city as a centre of pilgrimage, tourism and commerce.

*Akhilendra Nath Tiwary*

# Water Resources Conservation and Management Strategies

---

**Dr. Akhilendra Nath Tiwary**

*Asst. Professor & HOD Geography, SVP College (A Constituent Unit of V.K.S.U. Ara), Bhabua, Kaimur, Bihar-821101,*

While 67% of Earth's surface is covered by water, only less than 2.7% of global water is freshwater. Most of the freshwater (2.05%) are locked in ice caps and glaciers. Only less than 0.7% is available for human use. It is not scarcity of fresh water but misuse and over use without proper budgeting in our day to day life, commercial and industrial use. Water as a vital resource is sufficient for human consumption if used judiciously. Presently it is consumed in highly unsustainable way which is a matter of shame to the developing society. With growing urbanization and industrialization, demand of water has increased manifold but the urban areas and industries are not following proper measures to restore, recharge and reuse the water after their utilization. At once they are digging deep and taking out ground water, in turn they dump wastage in deep bore wells to avoid government legal action. The refuse/waste and sewer flown away at the surface level badly pollutes the rivers and water bodies at large. In absence of strict laws and sensitivity of immediate communities, this crime of polluting land surface and surface water is omnipresent with nobody to take action or responsibility to ensure their cleanliness. The present article tries to focus on issues related to normalisation of the water cycle, freshwater availability, challenges raised due to urbanization and industrialization. It excludes technical terms and other political water conflict issues and the problems of flood and drought. Its major focus is to adopt

*Akhilendra Nath Tiwary*



**Member's Profile-2021**

LM-B15	<b>Bushra Khalid</b> Experiment in Economics, ITX, AMU, Aligarh, U.P.	LM-C15	<b>Chetan Anand</b> I/M, DDU, Patna, Bihar, India
LM-BM	<b>Brij Raj Prasad Gupta</b> Department of Economics Saradar Vallabhbal Patel College	LM-C16	<b>Chittaranjan Sarapat</b> C/O Dr. K.K. Singh Department of Economics North Bengal University, Dum, Darjeeling, West Bengal
LM-C1	<b>Dr. Chandak Pandey</b> Reader in Economics Maharaja College Azamgarh, Bihar	LM-C17	<b>Chandak Chaturvedi</b> Asstt. Professor Aligarh - Vallabhbal Patel PG Ramra, Meerut Mob: 9770636523
LM-C2	<b>Ms. Chandra Kala</b> Research Scholar, Deptt. of Economics, BHU, Aligarh	LM-C18	<b>Dr. Chetna Rani</b> Assistant Professor, S.D.M. Govt Degree College Dajwala, Dehra-dun Mob: 9412902589
LM-C3	<b>Dr. Chandra Devi Dubey</b> Principal, Mathura Degree College Basara, Ballia	LM-C19	<b>Ms. Chakrapani Tripathi</b> C/O Dr. G.M. Dubey Department of Economics HCU University, Sagar, U.P.
LM-C4	<b>Dr. Chandra Kala Upadhyay</b> Lecturer in Sociology Gramyanchal Vidyaapeeth Mahila Degree College Baitupur, Gangepur, Varanasi	LM-C20	<b>Chandrika Soni</b> Research Scholar (UGC) Department of Economics, BHU, Varanasi Mob No: 7668992021 Email: sonichandrikal@bhu.ac.in
LM-C5	<b>Dr. Chandra Prakash Rai</b> Reader in Eco., DCSK PG College Munimath Bhanjan, Mau	LM-C21	<b>Dr. Chittaranjan Sarapat</b> 133, Gid Institute of Distance Studies sector 'D' Aligarh, U.P. BHU, Varanasi, Mob No: 7668992021 Email: sonichandrikal@bhu.ac.in
LM-C6	<b>Ms. Chhaya Awasthi</b> Research Scholar, Kanpur Univ D/o Sri Ranji Awasthi R-7B, Gali Arafali, Near Rly. Station, Farrukhabad	LM-D1	<b>Dr. Deepa Bhaskar Dubey</b> Lecturer in Economics Kumaon University Naini Campus, Uttarakhand
LM-C7	<b>Dr. Chazan Singh Verma</b> Reader in Eco-48, Jaiyayu Vihar Sector LDA, Ashiana, Lucknow	LM-D2	<b>Dr. Deepak Kumar Tripathi</b> Lecturer in Economics Balrath Degree College, Rampur Jampur
LM-C8	<b>Dr. Chinmayee Chaturvedi</b> Lecturer in Economics N.A.S. College, Meerut	LM-D3	<b>Dr. Dev Raj Singh</b> Reader in Economics Tibetan Institute for Higher Studies Sarnath, Varanasi
LM-C9	<b>Dr. Chandra Kanta</b> Dept. of Economics D.S. College, Aligarh		
LM-C10	<b>Ms. Chitra Bhatiya Arora</b> C-III Pabwanath Flatnum, Greater Noida		
LM-C11	<b>Dr. C.B. Singh</b> Reader, Economics Institute of Economics & Finance Bundelkhand University, Jhansi. Mob: 09415066510		

*Self attested  
Subscripta*

## A Geographical Study of Vindhyachal in Mirzapur City, India

♦ Author: Dr. Akhilesh Nath Mishra

Senior Lecturer and Head  
Department of Geography  
Yashwantrao Chavan University  
Dumka, Jharkhand

andrew2000@gmail.com

### Abstract:

Vindhyachal is a very famous pilgrimage and tourism site in the west of Mirzapur city, Uttar Pradesh State, India. The main city in east is a commercial centre for cotton, wool, wool and carpets. Among the Hindu population, it is believed that the primordial creative forces of the GOD and the power of the GODDESS took respective triangles which superimpose opposite to each other as hexagram at a point or node (Brahm (yash) + Parvati (Kashi) or Vaidhyashini, located in a point/node) in Vindhyachal. The region has served as a natural connecting point between north and south India. Before independence of India from Britain in 1947, it was a flourishing commercial centre. Post-independence, the negligence of planning authorities and census of bureaucrats and politicians started affecting its development. In the meantime, emergence of new industrial cities in Varanasi, Allahabad, Moradabad, etc., nearer to the capital city of Delhi, posed serious challenges to the development of this small city as many commercial and business enterprises along with the skilled workforce started shifting to these new cities or to the relatively bigger neighbouring cities of Varanasi, Allahabad and Lucknow. In the present context, the significant issues, issues and challenges in development of

Vindhyachal is discussed with geographical perspective. An attempt is being made to find out the ways to restore the lost glory of the city as a centre of pilgrimage, tourism and commerce.

Keywords: Commercial centre, Cultural node, Pilgrimage, Tourism, Heritage, Growth

Self Motivated

Akhilesh Nath Mishra

25/10/21

ISSN: 2347-4491  
UGC Journal No. 49095  
IIJF Impact Factor: 2.582

Vol. 7 No. 2 Issue - 2 April - June, 2019

# आयान् *Ayan*

An International Multi-Disciplinary Quarterly Refereed Research Journal



Editor-in-Chief  
Dr. Bindu Bhushan Upadhyay

Executive Editor  
Dr. Vikramaditya Rai

Managing Editor  
Dr. Neeraj Kumar Rai

Editors  
Dr. Vikash Kumar  
Dr. Kumar Varun

## देव की कविता : नैतिकता बनाम स्वाभाविकता

वंशीधर उमाध्याय

शांघ छात्र, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने कविता पर विचार करते हुए लिखा है 'ज्यों-ज्यों हमारी कृतियों पर सम्यक्ता के नए-नए आवरण चढ़ते जाएंगे, त्यों-त्यों एक ओर तो कविता की आवश्यकता बढ़ती जाएगी, दूसरी ओर कवि कर्म कठिन होता जाएगा।' सभ्यता के इस यांत्रिक विकास के दौर में कविता की आवश्यकता भी बढ़ी है और कवियों की संख्या भी। अब सवाल यह है कि क्या अच्छी कविताओं की संख्या भी बढ़ी है। पिछले कुछ दशकों में लिखने वाले कई कवियों का नाम तो आप बता सकते हैं लेकिन उनके द्वारा लिखी गई दस अच्छी कविताओं का नाम बताना कठिन है। इसका एक बड़ा कारण यह है कि समकालीन कविता में रचनात्मक कम ऐसे कवि हैं जिनका अपनी भाषा के प्राचीन कवियों से जुड़ाव है। अपनी भाषा के प्राचीन कवियों से उनका दुराव सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर पर एक खिटा का विषय है। हिन्दी भाषा के प्राचीन कवि और खासकर शैतिकालीन कवि अब विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों में सिमट कर रह गए हैं, वो भी बहुत संकुचित धरातल पर। जब इतिहासबोध की सबसे अधिक जरूरत है, वैसे में इतिहासबोध से दूर खड़े अधिकांश 'वर्तमान कविता' के कवि कितना लम्बा सफर तय कर पाएंगे यह कहना मुश्किल है। हम भाषा के स्तर पर, संस्कृति के स्तर पर इतना संकुचित होते जा रहे हैं कि स्वाभाविकता ही संदेह के घेरे में आ गई है। आज सम्पूर्ण मनुष्य की खोज से पहले जरूरी है स्वाभाविक मनुष्य की खोज। और यह तब सम्भव है, जब अपनी भाषा के प्राचीन कवियों के साथ समकालीन कवि एक संवाद स्थापित करे। संवाद की इस कड़ी में शैतिकालीन कविता के प्रमुख स्वर देव की कविताओं पर एक नजर डालते हैं, क्योंकि देव की कविता मनुष्य जीवन की स्वाभाविक अनुभूतियों की कविता है।

शैतिकालीन कवियों में देव का विशिष्ट स्थान है। उनका काव्य संसार विस्तृत और बड़ा है जिसमें व्यापकता के साथ-साथ गहराई भी है। वे शैतिकालीन कवियों में सबसे अधिक व्यापक अनुभव के भारतीय कवि हैं। उनके काव्य संसार में काश्मीर, तैलंग, उत्कल, सीबीर, द्रविड़, मूटान, आदि देशों की प्रकृति और तरुणियों का जितना स्वाभाविक और सुन्दर वर्णन मिलता है, उतना सच्चा वर्णन हिन्दी में किसी कवि के यहाँ नहीं है। देव की कविताओं में रस, छन्द, अलंकार का जितना सटीक और स्वाभाविक प्रयोग मिलता है उससे उनकी काव्य प्रतिभा का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। देव ने जब अपनी काव्य रचना प्रारम्भ की, उस समय रेवता के प्रमुख शायर वली की धूम थी। मराठी साहित्य में श्रीर और गुजराती में प्रेमानंद मष्ट जैसे प्रतिभाशाली कवि रचनात्मक थे। ब्रज में सुखदेव, वृद्ध उदयनाथ और लाल कवि जैसे कवियों की कविताई चारों तरफ गूँज रही थी। इन सभी कवियों के बीच देव ने अपनी कविताई शुरू की और बहुत कम दिनों में ही वह कवि मंडली और कविता प्रेमियों के यहाँ सम्मान के पात्र हो गए। देव की कवित्व शक्ति का प्रमाण यह भी है कि अपने समकालीन कवियों में सबसे अधिक उनकी का प्रभाव कई अन्य कवियों पर देखने को मिलता है। उदाहरण स्वरूप आप बोधा, बनिप्रवीण, पद्माकर तथा अन्य कई कवियों पर देव की कविताओं की छाप देख सकते हैं।

देव की कविताओं का सबसे प्रमुख रंग अनुराग का है। यहाँ तक की उनका दियोग वर्णन और वैराग्य भी अनुराग से रंजित है। आज भी जीवन और कविता में अनुराग का होना जरूरी है। अनुराग हमारे सागात्मक सम्बन्धों को प्रगाढ़ करता है। सत्ता द्वारा बार-बार इसी सागात्मक सम्बन्ध को नैतिकता के आवरण में लपेट कर मनुष्य के स्वाभाविक वृत्तियों को मार दिया जाता है। देव की कविता इसी नैतिकता के खिलाफ स्वाभाविकता की लड़ाई लड़ती है। उदाहरण रूप में आप उनकी कविता का एक रंग देखिए—

Reg. No. : 600/2009-10

ISSN : 0975 - 7880

# MANAVIKI

*An International Journal of Humanities & Social Science*

UGC List No:-42515

IJF Impact Factor:- 3.097

Vol. XI

No. 1

Issue II

January - June

2019



**Chief Editor**

*Ravindra N. Singh*

**Editors**

*Vikas Kumar Singh  
Amit Kumar Upadhyay  
Niraj Kumar Mishra*

**Associate Editors**

*Ajit Kumar Choudhary  
Amit Ranjan*

**A REFEREED JOURNAL OF THE SOCIETY FOR  
EDUCATION & SOCIAL WELFARE, VARANASI - 221005  
(INDIA)**

# हिन्दी आलोचना और महावीरप्रसाद द्विवेदी

दशमीवार उपाध्याय

सहायक प्राध्यापक, महिला महाविद्यालय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

महावीरप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य के कुछ बड़े साहित्यकारों में हैं, जिन्होंने आधुनिक हिन्दी साहित्य को अनेक विषय क्षेत्रों से जोड़कर व्यापकता प्रदान की है। जहाँ तक हिन्दी आलोचना के विकास का संबंध है, यह कह सकते हैं कि जिस हिन्दी आलोचना का उदभव भारत-युग में हुआ था, उस आलोचना को द्विवेदी जी ने व्यापक और तार्किक बनाया। वे एक कुशल सम्पादक होने के साथ ही साथ हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी, मराठी और बंगाली साहित्य के नर्मदा भी थे। उन्होंने हिन्दी साहित्य को ज्ञान के अन्व अनुशासन और भाषाओं के साथ जोड़कर समृद्ध किया। जैसे तो वे 'सरस्वती' पत्रिका के सम्पादक बनने से पहले प्रसिद्ध हो चुके थे, लेकिन इस पत्रिका के सम्पादक बनने के बाद उन्होंने संगठन समता का परिचय दिया। वैकट शर्मा लिखते हैं - 'सन् 1896 ई. के प्रारम्भ में नामरी प्रचारिणी पत्रिका में उनकी 'वृत्तसम्मद की भाषा' विषयक समालोचना प्रकाशित हुई, जिसका उत्तरवर्ती अश कालिकाकर से प्रकाशित होने वाले 'हिन्दोस्थान' नामक प्रसिद्ध पत्र में छपा। द्विवेदी जी की संस्कृत में नैसर्गिक रुचि थी। उन्होंने सन् 1897 ई. के नवम्बर से सन् 1898 ई. के मई तक वैकटेश्वर समाचार पत्र में 'कालिदास के जतुसंहार की भाषा' पर निरंतर रूप से समालोचनाएँ लिखीं। सन् 1901 ई. में 'कालिदास की समालोचना' प्रकाशित हुई, जिसमें रघुवंश और मेघदूत की आलोचना भी सम्मिलित कर दी गई थी। इस प्रकार कालिदास के ग्रन्थों का समीक्षण हिन्दी में प्रथम बार उनकी लेखनी का समतकार प्रदर्शित करता हुआ समालोचना जगत में सामने आया।'

हिन्दी आलोचना में महावीरप्रसाद द्विवेदी की व्यवस्थित शुरुआत 'सरस्वती' पत्रिका के सम्पादक बनने के साथ 1903 ई. से होती है। 'सरस्वती' के माध्यम से उन्होंने लेखकों का ऐसा दल तैयार किया जो आधुनिक हिन्दी साहित्य में नवीन चेतना के प्रसार करने में उनका सहायक बने। इसके साथ ही वे हिन्दी गद्य के विकास में विभिन्न भाषाओं और विषयों को माध्यम बनाएँ। कविता में ब्रज भाषा की जगह लड़ी बोली को प्रतिष्ठित करना और साम्राज्यवाद विरोध उनके आलोचना कर्म के प्रधान प्रतिमान हैं। रामविलास शर्मा उनकी भाषा विषयक दृष्टि की विवेचना करते हुए लिखते हैं - 'द्विवेदी जी ने हिन्दी भाषा के विकास के अनेक पक्षों पर ध्यान दिया। भारत में अंग्रेजी की स्थिति, भारतीय भाषाओं के बीच सम्पर्क भाषा की समस्या, हिन्दी-उर्दू की समानता और आपसी भेद, हिन्दी और जनपदीय उप-भाषाओं के संबंध आदि पर उन्होंने गहराई से विचार किया।' रामविलास शर्मा ने यह माना है कि द्विवेदी जी के महत्त्वपूर्ण कार्यों में एक भाषा संबंधी परिष्कार है, लेकिन वे साथ ही यह भी मानते हैं - 'भाषा-परिष्कार का काम उनके व्यापक कार्यक्रम का एक अंश मात्र है और वह उसका सबसे महत्त्वपूर्ण अंश नहीं है।' वहीं आचार्य शुक्ल का मानना है कि - 'द्वितीय उत्थान के भीतर बहुत दिनों तक व्याकरण की विधिलता और भाषा की रूपहानि दोनों साथ-साथ दिखाई पड़ती रहीं। व्याकरण के व्यतिक्रम और भाषा की अस्थिरता पर थोड़े ही दिनों में कोप दृष्टि पड़ी, पर भाषा की रूपहानि की ओर उतना ध्यान नहीं दिया गया। पर जो कुछ हुआ वही बहुत हुआ और उसका लिए हमारा हिन्दी साहित्य में महावीरप्रसाद द्विवेदी का सदा जगती रहेगा। व्याकरण की शुद्धता और भाषा की सफाई के प्रवर्तक द्विवेदी जी ही थे। 'सरस्वती' के सम्पादक के रूप में उन्होंने आधी हुई पुस्तकों के भीतर व्याकरण और भाषा की अशुद्धियाँ दिखाकर लेखकों को बहुत सावधान कर दिया। यद्यपि कुछ हठी और अनाड़ी लेखक अपनी भूलों और गलतियों का समर्थन तरह-तरह की बातें बनाकर करते रहे, पर अधिकतर लेखकों ने लाभ उठाया और लिखते समय व्याकरण आदि का पूरा ध्यान रखने लगे। गद्य की भाषा पर द्विवेदी जी के इस शुभ प्रभाव का स्मरण जब तक भाषा के लिए शुद्धता आवश्यक समझी जायेगी तब तक बना रहेगा।' जिस भाषा के परिष्कार का सम्बन्ध शुक्ल द्विवेदी जी की बड़ी उपलब्धि मान रहे हैं उसे रामविलास शर्मा केवल अश

UGC Approved, Journal No. 49321  
Impact Factor : 6.125



ISSN : 0976-6650

शोध दृष्टि

Shodh Dristi

An International Peer Reviewed Refereed Research Journal

Vol. 14, No. 1.1

January, 2023

PEER REVIEWED JOURNAL

## लोकोजन्मुख सांस्कृतिक बोध के कवि ज्ञानेन्द्रपति...

डॉ० नशीम उपाध्याय

ज्ञानेन्द्रपति का परिचय उसी राज्य-यात्रा है, क्योंकि वह जहाँ भी छे वहाँ के लोकोजन्मुख सांस्कृतिक बोध से हिंदी भाषक पाठ को समृद्ध करने छे है। वस्तुतः ज्ञानेन्द्रपति लोकोजन्मुख सांस्कृतिक बोध के कवि छे। उनकी कविताएँ मानवीय स्तर से अत्यंत संवेदनशील आध आत्मी के स्तर से खड़ी होती छे और 'बन-बनु तथा जीवन-मृत्यु' के भिन्नताओं को अलग-अलग कर देती छे। इसीलिए ज्ञानेन्द्रपति की कविताएँ कई स्तरों पर आकर्षित करती छे। आकर्षण इस रूप में और ज्यादा बढ़ जाता छे कि इनके काल्पनिक संसार में मनुष्य के बाद पाठक के सामने एक नई दुनिया निर्मित होती छे। वह दुनिया खड़ी खुशी और संघर्षताओं के बीच बोट आते छे। पाठक को भी अधिक अपनी भावना-यात्रा के स्तर को उभार करने के बाद भी ज्ञानेन्द्रपति के कई प्रेम, जीवन संघर्ष, वैचारिक और सांस्कृतिक पक्षधर रूप अधिक उर्ध्वगामी छे कि पाठक चकित हो जाता छे। कवि का सुंदर मानना छे कि "कविता केवल अपने समय से बृहत्तर दृष्टि की जाती छे, लेकिन वह उस काल-खण्ड से कलित नहीं होती, उसकी भविष्योन्मुखता ही उसकी न मरझाने वाली नवीनता का ब्यक्त होती छे।" [1] ज्ञानेन्द्रपति की कालानुभूति मानवीय अनुभव का ही सिद्धांत छे। वास्तविक-अर्थों में मानवीय अनुभूति कालानुभूति की संज्ञा रखती छे, जब वह अर्थवान को कहीं अधिक सोदेरता के साथ संवेदित कर पाती छे। कालानुभूति का वास्तविक काम छे सामान्य अनुभूति को कहीं अधिक अर्थवान अर्थों में संवेदित करना और ज्ञानेन्द्रपति की 'कालानुभूति की चुनौत' में वह सोदेरता स्पष्ट रूप से दिखती छे।

ज्ञानेन्द्रपति का पहला संग्रह (जोख हाथ बनते हुए) 1970 में आता छे। इस संग्रह की कविताओं में कवि का युवा मन मुग्धता-वीन स्तर पर जुड़ा छे। पहला - जीवन और प्रकृति के इंद्र को समझने के स्तर पर, जहाँ निर्माण की प्रक्रिया शामिल छे। दूसरा - वैचारिक इंद्र के स्तर पर, जहाँ इतिहासबोध की निर्मिती छे। तीसरा - कला के स्तर पर, जहाँ अनुभूति की आत्मसाधिव्यक्ति की प्रक्रिया छे। काल के रूप में उसका कोई मूल्य नहीं, खड़ी सिर्फ प्रकृति का अनुकरण हो। प्रकृति के अनुकरण का मतलब होता छे, प्रकृति प्रदत्त पदार्थ को वापस करना जब तक कोई कवि प्रकृति प्रदत्त पदार्थ को अपनी आत्मानुभूति से नहीं तपसता, सच्ची कविता नहीं बनती छे। ज्ञानेन्द्रपति की कविताओं में जीवन और प्रकृति को समझने की जो वैचारिक लक्ष्य छे वही उनकी कालानुभूति को प्रकृति के अनुकरण से बचाती छे और सच्ची कविता के स्तर पर अग्रसर करती छे। उनके पहले संग्रह की कविता 'एक गर्भवती औरत के प्रति दो कविताएँ' को उदाहरण के तौर पर देख सकते छे।

“वह तुम्हारा उदर ब्रह्माण्ड हो गया छे  
इसमें क्या छे? एक बन रहा सिद्धु भरा?  
किल्ली में लिपटी मांस पालनी केकना बरा?  
किलनी फैसली का रही छे परिधि तुम्हारे उदर की तुम क्या जानो  
कि अन्तरिक्ष तक चली गयी छे यह विरूप तोलाई और ये  
पेट-पीछे, मकान, सड़कें, मैं, वह फूल, वह कुत्ता, उछलता वह भेड़क  
रिपायी माय, काढ़ करता माती, क्षितिज पर का सूख  
सब उनके अन्दर चले गये छे  
और तुम भी” [2]

यहाँ कवि प्रथम मूलक विद्याया के साथ केवल सी के उदर को नहीं देख रहा छे, वह भविष्य की उस आहट को महसूस कर रहा छे जिसके निर्माण में पूरी प्रकृति छे। हाँ, क्यान से यहाँ उदर का ब्रह्माण्ड में बदलना सिर्फ प्रकृति का अनुकरण नहीं छे और न ही इस बदलने की क्रिया में कोई एक रातिक या निरामक छे, बल्कि इस निर्माण में एक सामूहिकता छे जो प्रकृति और मानव के सहभाग से निर्मित हो रही छे। इसलिए यहाँ पेट-पीछे, मकान, सड़कें, फूल, कुत्ता, उछलता हुआ भेड़क, रिपायी हुई माय, काढ़ करता माती, क्षितिज पर का भूलाप छे। इस विभाग में कवि की कालानुभूति संवेदित हो कर बिना विदूषण चर्चा को रचती छे वह कवि का युवा समय छे। सला और पूर्ण समयकारी प्रकृति ने विकास के नाम जो ब्यक्तता की छे उसमें मृत्यु का चरण पर छे। विकास के नाम पर जो रचा जा रहा छे, क्या उनके तर्क-अर्थों हमने क्या दिया छे। उन आदिवासियों के जीवन का विचार जीवन देना जिनके जीवन, जंगल और जमीन के दोहन से चमकती



# पूर्वदेवा

ISSN 0974-1100

सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

**P Ū R V A D E V Ā**

A Social Science Research Journal

Peer Reviewed Bilingual International Research Journal  
The Journal Indexed in the UGC-CARE list.

वर्ष 27 अंक 107 एवं 108

■ संयुक्तांक ■

अक्टूबर, 2021 - मार्च, 2022

प्रधान सम्पादक

डॉ. हरिमोहन धवन



मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी प्रकाशन

# पूर्वदेवा

सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

PŪRVADEVĀ

वर्ष , अंक एवं संयुक्त



प्रधान सम्पादक

डॉ. हरिमोहन धवन



सह सम्पादक

डॉ. प्रेमलता चुटेल



प्रकाशक

पी.सी. बैरवा



मध्यप्रदेश वलिल साहित्य अकादमी

बाल सङ्ग्रह, सेक्टर स्कूल के सामने, उजीन (म.प्र.) 466010

दूरभाष (0734) 2518737

E-mail : [mpdsaujn@gmail.com](mailto:mpdsaujn@gmail.com) Website : [www.mpdsa.org](http://www.mpdsa.org)

# पूर्वदेता

सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

## परामर्श मण्डल

डॉ. प्रकाश बरतुनिया

कुलसचिव- पाया सहोदर अम्बेकर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, मुम्बई

डॉ. रामगोपाल सिंह

पूर्व अध्यक्ष- डॉ. पी. डार, अम्बेकर कर्माधिक विज्ञान विश्वविद्यालय, मुद्र (म.प्र.)

डॉ. रहमान अली

पूर्व अध्यक्ष- इंडियन भारतीय विश्वविद्यालय अम्बेकर कर्माधिक विज्ञान विश्वविद्यालय, उज्जैन

डॉ. जयप्रकाश कर्दम

परिचय साहित्यकाल एवं समाजशास्त्र, इंडियन साहित्य अकादमी, नई दिल्ली

डॉ. रमेशचन्द्र जाटव

अतिरिक्त संचालक, राजकीय सेवाएं, उच्च शिक्षा विभाग, मध्यप्रदेश

डॉ. डी. डी. बैरिया

अध्यक्ष एवं निदेशक, मातृशाला सेवा संस्थान, विज्ञान विश्वविद्यालय, उज्जैन

## सम्पादक मण्डल

डॉ. अंगनन्द शिर्सेसरा

पूर्व अध्यक्ष- अम्बेकर कर्माधिक विज्ञान विश्वविद्यालय, उज्जैन

डॉ. रीलेन्द्र भारादार

पूर्व अध्यक्ष- समाजशास्त्र व अर्थशास्त्र अम्बेकर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, मुम्बई

डॉ. एन.एच. बंसोडा

पूर्व अध्यक्ष- समाजशास्त्र, राज. सेवा, राज. सेवाओंकर महाविद्यालय, उज्जैन

डॉ. अरुण कुमार

समाजशास्त्राध्ययन विभाग, राजकीय शिक्षा महाविद्यालय, जयपुर (म.प्र.)

डॉ. ब्रह्मदीप अहूजे

समन्वयक, व्यक्तिगत विकास प्रयोग, अम्बेकर कर्माधिक, बीकानेर

## पुष्पान सम्पादक

डॉ. हरिमोहन धवन

अध्यक्ष, राजकीय विज्ञान व पूर्व अकादमी, उच्च शिक्षा विभाग, (म.प्र.)

## सह सम्पादक

डॉ. प्रेमलता घुईल

अध्यक्ष, हिन्दू अध्ययनशाळा, विज्ञान विश्वविद्यालय, उज्जैन

प्रकाशक : पी. सी. बैरवा

● स्वायत्तिकावरी : मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी,

बालाघट मार्ग, सेंट्रल स्टेशन के सामने, उज्जैन (म.प्र.)

इस अंक का मूल्य रुपये 150/-

वित्तीय सहयोग

भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

विद्या नवोदय, नारंगी जयपुर

संपादन व प्रकाशन सर्वथा अवैतनिक एवं अन्यायकारिक

**पूर्वदेवा**  
**सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका**

□ अनुक्रम □

1. राजस्थान के सहरीय जनजाति के सैकणिक विकास में आभन  
छात्राध्यासों की भूमिका डॉ. विशनराम चौधरी 1
2. भारत में गरीबी को दशा एवं दिशा डॉ. सुवील कुमार चौधरी 13
3. सतत्व विकास एवं गौधी विचार दर्शन डॉ. कामना बेन 26
4. महाकवि चसंत त्र्यंभक शेवडे प्रणीत विंध्यवासिनी महाकाव्य में भारत का  
प्रकृतिक भूगोल व काव्यमयी राष्ट्र आधारित सार्वभिक जीवन डॉ. इंदरराज मीना 35
5. भारतीय राजनीतिक चिंतन में दत्तितोडार का पूना पैक्ट:  
गांधी बनाम अम्बेडकर डॉ. कैलाशचन्द सामोता 45
6. डॉ. अम्बेडकर के विचारों के परिप्रेक्ष्य में दत्तितोत्वान और  
अस्पृश्यता का प्रश्न डॉ. अजीत कुमार राय 56
7. संत पीताजी का समाज दर्शन : एक विवेचन डॉ. संगतराज नागर 62
8. भारतीय राजनीति और जाति श्री शिवु कुनार 65
9. तलानबादा और परित्यक्ता महिलाओं की संवेगात्मक परिपाकता व  
इनके बालकों की संवेगात्मक स्थिरता डॉ. श्रीमती सुन्दर त्वागी 74
10. भाषा साहित्य डॉ. अम्बेडकर का सामाजिक न्याय श्री संजय कुमार 84
11. पंचतल्प पर महाभारत का प्रभाव डॉ. विशाल चारदाज 102
11. Economic Prospects of Emerging Tourism in Kashmir Valley Dr. Munim A. Beigh 108
12. पुस्तक समीक्षा सुश्री अर्चना वैन्वली 120

पुस्तिका में प्रकाशित लेख एवं उनमें आकृत विचार लेखकों के निजी विचार हैं,  
सम्पादक व प्रकाशक वह उनसे सतमत सेना आवश्यक नहीं हैं ।

## डॉ. अम्बेडकर के विचारों के परिप्रेक्ष्य में दलितोत्थान और असृश्यता का प्रश्न

डॉ. भागीरथ कुमार राय

सहायक प्रोफेसर, संस्कार कालम्पाई पटेल कालेज, ममुजा जैपुर

E-mail: brijambhull@gmail.com

डॉ. प्रियंका कुमारी मिश्रा

पीएच-डीकरीएल पीएल, डॉ.अम्बेडकर अन्तर्राष्ट्रीय केंद्र, नई दिल्ली

### सारांश

जाति व्यवस्था हिन्दू समाज का अभिन्न अंग रही है। प्राचीन समाज में जाति का वितरण मिलता है। साम्राज्य के चोत्र ही जाति बलकर काम के प्रकार पर जातियत विचारण का आधार बना। भारतीय समाज में दलित सामाजिक स्तरीकरण के सबसे अधिक स्तर पर है। प्राचीन भारत में जाति शब्द का प्रयोग किसी भी जगह पर नहीं मिलता है। दैविक साहित्य में वर्ण और अन्न शब्दों में कुल शब्द का प्रयोग विभिन्न कार्यों में निष्कृत लोगों के लिए किया गया है। कालान्तर में यही कुल और वर्ण जाति व्यवस्था में परिष्कृत हो गए। कृषि और गैर-कृषिक काम में लिये जाने वाले लोग हिन्दू वर्ण में वर्ण व्यवस्था के कर्मणा स्वरूप के चमना स्वरूप में बदलने से वे हाशिये पर धकेल दिए गए। आधुनिक भारत में इस समाज को सभी अधिकारों से वंचित रखा गया और उन्हें वंचितकृत किया गया। इसी वंचितकृत समाज को दलित कहा गया।

दलित लोग उन्हें कहा गया जो शुद्र वर्ग से भी ऊपर की श्रेणी में आते थे। मानक हिन्दी शब्द काष्ठ में दलित का अर्थ दलितघर बरिद तथा गना-बीना और बहुत ही निम्न कोटि का कहा गया है। दलित शब्द का प्रयोग आधुनिक समय में सबसे ज्यादा किया जा रहा है। दलित शब्द मुख्यतः मराठी से है जिसका अर्थ 'दुखे' से है। संस्कृत हिन्दी शब्द कोश में दलित का अर्थ दलन किया हुआ, गिरा हुआ और अविश्वसित कहा गया है। वर्तमान समय में उन सभी जातियों के लिए दलित शब्द का प्रयोग किया जाने लगा जो समाज में सबसे निम्न स्तर पर था। और उन्हें कोई सामाजिक, राजनीति, जातिक और धार्मिक अधिकार नहीं प्राप्त थे। इन दलित लोगों को कालान्तर में विभिन्न नामों से पुकारा गया है। जैसे - शुद्र, अन्धकार, असृष्ट, अधूरा, किरायेदार, जाउन-डोकन इत्यादि।

ज्याँतीका फुले ने सर्वप्रथम उन्नीसवीं शताब्दी में 'दलितों की श्रेणी' शब्द का प्रयोग किया गया। लोक प्रभासित रूप से इसका प्रयोग सत्तर के दशक में दलित पंथेरे द्वारा किया गया। आधुनिक समय में दलितों को हरिजन नाम से भी सम्बोधित किया जाता है। हरिजन शब्द का प्रयोग महात्मा गाँधी ने किया था। विभिन्न शब्दकोशों को अनुसार दलित का अर्थ सफ़्त होने के बाद हिन्दी के साहित्यकार और अन्य विद्वान् दलित शब्द को विभिन्न रूप में परिभाषित करते हैं। डॉ. रवीचन्द्र सिंह वैष्णव दलित शब्द की व्याख्या करते हुए कहते हैं- "दलित" वह है जिसे भारतीय संस्कृतान ने अनुसूचित जाति का दर्जा दिया है।" इसी प्रकार केवल भारती का मानना है कि 'दलित' वह है जिस पर अस्पृश्यता का निमग्न लागू किया गया है। जिसे कठारे और मान्दे कार्य करने के लिए कर्म किया गया है। जिसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतन्त्र व्यवसाय करने से मना किया गया और जिस पर अछूतों ने सामाजिक निर्दोषपताओं को सर्वोच्च लागू की, और जो दलित है और इसके अन्तर्गत सभी जातियाँ आती हैं, जिन्हें अनुसूचित जातियों कहा जाता है।\* अनुसूचित जाति शब्द अंग्रेज़ी द्वारा दिया गया। 1930-31 के गोलमेज सम्मेलन में ब्रिटिश प्रशासन द्वारा यह रूप किया गया कि जो जातियाँ हिन्दू समाज में किसी न किसी कारण से उपेक्षित रही हैं, जिनकी एक अनुसूची बनायी जाये। इस कारण 1931 के जनगणना में एक सूची तैयार की गयी। पूजा-पूजा सम्बन्धिता के बाद भारत सरकार अधिनियम 1935 में पहली बार अनुसूचित जाति शब्द का प्रयोग किया गया।\*

जाति-प्रथा वर्ण-व्यवस्था का विकृत रूप था। इस व्यवस्था के कारण प्राचीन काल से ही उच्च वर्ण द्वारा अछूतों को समाज से लगभग अलग कर दिया गया। साथ ही उच्च वर्ण द्वारा अनेक प्रकार से सामाजिक प्रतिशोध निम्न वर्ण के ऊपर चोम दिए गए। उनके खान-पान, रहन-सहन के तीर-तरीके और निवास के निर्दिष्ट और कठोर नियम बने हुए थे। अछूत वर्ण उच्च वर्ण द्वारा प्रवृत्त नदी छत, कुआँ या जलाशयों से पानी नहीं ले सकते थे। मंदिरों में प्रवेश नहीं कर सकते थे। शास्त्रों का अध्ययन, पूजा-पूजा, यज्ञ इत्यादि भी उनके लिए वर्जित थे। उन्हें कोई भी ऐसे अधिकार प्राप्त नहीं थे, जिससे कि वे अपनी स्थिति सुधार सकें। मध्यकालीन भारत में मुसलमानों के आगमन के पश्चात् इनकी स्थिति और बदतर हो गयी। इस्लाम में धर्म परिवर्तन के कारण हिन्दू समाज में भक्ति आन्दोलन का उत्पन्न हुआ और सभी जाति को हिन्दू धर्म में बनाते रहने के लिए कुछ मंदिरों को समाज के लिए हाताकारक बताया गए। और सभी जाति को मुख्यधारा से जोड़ने का प्रयास

साथ सही द्वारा किया गया पर ये प्रयास असफल रहा। इस समय काबीर, वैद्यनाथ, भक्तदास जैसे विभिन्न जातियों के संत परिलक्ष्य थे।

आधुनिक भारत का उदय अंग्रेजों के भारत में राज्य स्थापित करने के समय से माना जाता है। नई सभ्यता और संस्कृति के प्रभाव में भारत में पुनर्जागरण को जन्म दिया। जिसके फलस्वरूप भारत में कई धार्मिक-सामाजिक सुधार आंदोलन हुए। इस जाति-प्रथा की सुप्रभा को समाप्त करने में अंग्रेजी सरकार की नीतियों एवं भारतीय समाज-सुधारकों दोनों का योगदान है। राजाराम मोहन द्वारा स्थापित ब्रह्मसमज, काशी दयानंद सरस्वती द्वारा स्थापित अर्यसमज, चण्डीक का प्रबंधन समज, त्रिविक्रानंद का संस्कृत मिशन जैसी संस्थाओं ने जाति-प्रथा के विरुद्ध जागृता उठाई और इस प्रथा के दुष्परिणाम को समाप्त के सामने रखा। 1917 ई० में विद्वत्भाई पटेल ने जाति-प्रथा को समाप्त करने का प्रयास किया। 1922 ई० में जाति-व्यवस्था को मंग करने के लिए एक संस्था स्थापित की गई।

अंग्रेजों द्वारा विकसित आधुनिकता के संसाधनों के ज्ञान जैसे वास्तुतः के साधनों (रिज, बस इत्यादि) के विकास, औद्योगिकीकरण एवं शहरीकरण की प्रक्रिया, कानून को समझ समानता की नीति, शिक्षा-प्रसार इत्यादि ने जाति-प्रथा को बंधन ढीले कर दिए। राष्ट्रीय आंदोलन एवं कांग्रेस के नेताओं ने भी इस सामाजिक ढोब को दूर करने, विशेषतः अस्पृश्यता को मिटाने एवं हरिजनों को समानता का दर्जा देते के लिए संघर्ष किया। महात्मा गांधी ने इस दिशा में विशेष प्रयत्न किए। उन्होंने अधुनी को 'हरिजन' कहा और उनके उद्धार के लिए अनेक प्रयास किए। उनके प्रयासों के फलस्वरूप 1932 ई. में 'अखिल भारतीय हरिजन संघ' की स्थापना की गई। पूना-गैजट के द्वारा अंग्रेजों को विभाजन की नीति को अस्वीकृत करने हेतु सित्त नवंबर, 1933 से दो अगस्त, 1934 तक लगातार दस महीने तक गांधी ने अस्पृश्यता मिटाने की एक लंबी यात्रा भारत में की। इस यात्री के 'हरिजन दौरा' के नाम से ज्ञाना जाता है। धरम हाजर पंथ सौ मील की इस यात्रा में उन्होंने न केवल अस्पृश्य जन-जागृति पैदा की, बल्कि हरिजन कल्याण कोष की स्थापना की और उसको लिए आठ लाख रुपये भी जमा किए।

महाराष्ट्र के सीमराज अंबेडकर का जन्म 14 अप्रैल 1891 को इंदौर के मद्र. नामक स्थान में हुआ था। उनके पिता रामजी पीज में सुबेदार थे। उनकी माता का नाम सीमाबाई

सनातन या, जब वो महज पांच साल के थे तभी उनकी माता का देहांत हो गया था। अम्बेडकर ने सन् 1907 में मैट्रिक और एन्ट्रान्स एग्जामिनेशन से इंटर की परीक्षा पास की। 1912 में उन्होंने बीए पास करने के उपरान्त न्यूयार्क विश्वविद्यालय से 1915 में एमए की डिग्री हासिल की।

भीमराव अम्बेडकर का जीवन एक प्रकार से स्वर्ण और निम्न वर्ग के हिंदुओं के घरेलू संघर्ष का इतिहास रहा है। उनका जन्म महार जाति में हुआ था, उन्हें बंधन से ही भेदभाव का पता चला। जैसे जैसे वे बड़े होते गए, उनके पास पास घटित कुशाग्रता की बदलाए में उनके मन में अमित छाप छोड़ी, और आहूतों से प्रति उनके मन में कठना की महार उठाना हुई। उनमें मुस्लिमों के बावजूद भी उन्होंने डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। पढ़े लिखे होने के बावजूद भी उनके साथ भेदभाव किया जाता था। उन्होंने इस भेदभाव के खिलाफ कहा था कि— 'जब मेरे जैसा उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्ति को साथ अछूत होने के कारण ऐसा अमानवीय व्यवहार हो सकता है, तब मेरे अनपढ़ बलिष्ठ भाइयों को क्या हाल होगा होगा? सदियों से विद्यमान इस घृणित प्रथा का यदि मैं जन्म नहीं कर सका तो मेरी जान-सालना का मूल्य ही क्या रहेगा।'

डॉ अम्बेडकर ही ऐसे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने हिन्दू वर्ग प्रणियों में, जाति और उच्च-निम्न वर्ग का आलोचनात्मक वैज्ञानिक विश्लेषण करने वाले व्यक्ति थे। उन्होंने उच्च जाति के हिन्दुओं को चुनौती दी और बलिष्ठों के सामने नुक्ति का मार्ग प्रशस्त किया। डॉ अम्बेडकर जी घृणित में भारतीय समाज चार वर्गों में विभाजित था। आरम्भ में यह वर्ग विभाजन क्षमता और दक्षता (कौशल/कौशल) के आधार पर होता था और व्यक्ति अपना वर्ग बदल सकता था। आर्य वर्ग तो व्यवस्था के कार्य की परिवर्तनीयता स्वीकार भी है। उनका मानना था कि वर्ग की उत्तमता स्वाभाविक रूप से हुई है। वह पैतृक व्यवस्था को अपनाया अत्यंतवहिक आदर्श मानते थे। वह आधुनिकता के विरोधी थे, उनका मानना था कि— आधुनिकता ऐसा जहर है, जिससे हिन्दू धर्म बर्बाद हुआ है। वह पुरोहित वर्ग को विशेषक द्वारा नियंत्रण में रखने की बात कहते थे, जिससे पुरोहिताई प्रजातांत्रिक संस्था बन जाये और पुरोहिता बनने के द्वार सभी के लिए खुल जाए।' बाबा साहब का जाति के बारे में मानना था कि जाति पैतृक पेशा को अपनाए पर ही बन जाती है, चाहे कोई अयोग्य हो क्यों न हो। उनका मत था कि 'यदि जाति प्रथा का अर्थ नरत्न, रथ की सुदृढ़ता होती तो फिर किसी को भी उसमें गलत के व्यक्तियों के साथ समागम से जाति की किरम में सुधार करने में आपत्ति नहीं हो



सकती थी। परन्तु ऐसा न तो वैज्ञानिक है और न ही व्यवहारिक है। एक ऐसा संकल्पनात्मक अणुसूत्र भी नहीं है कि जिससे एक ही जाति को उत्तम नर-नारी जायस में विभाजित कर सकें हैं।

अम्बेडकर के विचारों के तीन प्रमुख स्रोत थे। पहला सत्तक अपना अनुसूच, दूसरा-महात्मा ज्योतिबा फुले का सामाजिक आंदोलन तथा तीसरा-बुद्धिज्म। इन स्रोतों की जड़ में भारत की असमानतायें जाति व्यवस्था थी। डॉ. अम्बेडकर ने दलितोत्थान के लिए सर्वप्रथम 1920 ईस्वी में महात्मा पत्रिका 'मूक माधक' का प्रकाशन किया। छत्रपती साहु जी महाराज की आशुता में मई 1920 में नागपुर में अधिल भारतीय दलित वर्ग परिषद का आयोजन हुआ जिसमें महाराज ने पुत्र अम्बेडकर को दलित-अधुलो का मरीहा कहा। जीत इन्दिका डिप्रेस्ड क्लासिफ एसीसिडेशन का मन्त नागपुर में 1926 में हुआ। इसके पहले निर्धारित जायस मन्तस के एम.सी. राजा थे और डॉ. अम्बेडकर उसको एक जगध्वज थे। बाद में उन्होंने इस एसीसिडेशन से त्याग पत्र दे दिया।

डॉ. अम्बेडकर ने बहुसंस्कृत दलितकारिणी सभा की स्थापना की। इस सभा की माध्यम से वह दलितों को सामाजिक और राजनीतिक बुद्धिकोण से समाज के बराबरी के संतर पर लाना चाहते थे। उन्होंने ने दलितों के लिए शिक्षा का प्रसार छात्रवर्ती, पुस्तकालयों और सामाजिक अन्वयन केन्द्रों के स्थापना पर बल दिया है। डॉ. अम्बेडकर ने अपनी सभा की संतर से साइमन कमिशन को एक पत्र दिया जिसमें उन्होंने पिछड़ों के नाम निर्देशक तर्कों की जगह आशुता रखने की मांग की और सत्तक नौकरियों में दलितों के लिए अन्त से शर्तों की मांग की। डॉ. अम्बेडकर के लिए सबसे बड़ा चुनौती का वर्ष 1927 का रहा, जब उन्होंने महात्मा बाबासाहेब फुले के दलितों को जल पिजाने के लिए संस्थापक किया।<sup>10</sup> यह संस्थापक 20 मार्च 1927 को महाराष्ट्र के सावरुड जिले में महात्मा स्थल पर हुआ था। जिसमें अम्बेडकर ने अपने दोनों हाथों से उस संस्थापक का पानी पिया। तिसका अनुकरण उनके हजारों संस्थापकवर्ती ने किया।

डॉ. अम्बेडकर के लिए 1927 का वर्ष उनके जीवन का सबसे प्रमुख वर्ष था। इस वर्ष का प्रारम्भ उन्होंने फोरे रीज को पुद्ध संतरक की मांग से प्रारम्भ की। और पिछड़ों को पुज बल देने वाले महार बाबासाहेब की विरल को मन्त किया। उन्होंने अप्रैल 1927 में बहीष्कृत भारत की पत्रिका का सम्पादन किया। इसी वर्ष असरावती की अम्बादेवी मन्दिर में दलितों के प्रवेश के लिए संस्थापक का आवाहन किया। उसी वर्ष डॉ. अम्बेडकर को बम्बई विधान परिषद का सदस्य नियुक्त किया गया। समान मानव अधिकारों के लिए 22 मार्च

1928 को बम्बई में 500 अछूतों को जनमत धारण करवाया। 1929 में उन्होंने जलपाव की सभा में हिन्दू धर्म छोड़कर अन्य धर्म को आनाने का विचार करने पर बल दिया। उन्होंने अन्य जाति के लोगों को दलितों के प्रति अपनी विचारों को बदलने के लिए कई प्रस्ताव पास किये। 1930 में ब्रिगिट् कार्लाराम मन्दिर प्रवेश के लिए सत्याग्रह प्रारम्भ किया। उन्होंने आत्म सहायता ही सबसे उत्तम सहायता की नीति पर बल दिया और दलितों के लिए नारा दिया कि शिक्षित बनो, संगठित रहो और संघर्ष करो।

डॉ. अम्बेडकर 1930 ई. तक एक आस्थावान हिन्दू की तरह सयोगों से दलितों के लिए मन्दिर प्रवेश का आग्रह और सत्याग्रह करते रहे। गोलमेज सम्मेलन के बाद उन्होंने दलितों के राजनीतिक अधिकार को लेकर ब्रिटिश सरकार के सामने जगन्ना पक्ष रखा। और राजनीतिक भागीदारी की मांग की। भारत के स्वतन्त्र होने के परवाह जब उन्हें संविधान के प्रारूप समिति का अध्यक्ष बनाया गया तब उन्होंने अपने सपने को संविधानिक स्वरूप प्रदान किया।



**सन्दर्भ -**

1. अम्बेडकर डॉ. बाबासाहेब साहब - जे.पी. मॉडिबल सम्पादन 1994 पृ. 22
2. अम्बेडकर डॉ. बाबासाहेब साहब - जे.पी. मॉडिबल सम्पादन 1994 पृ. 102
3. <http://www.ambabhai.org/2009/09/01/ambabhai-ambabhai/>
4. अन्वित्तः प्रसाद, रिजर्वेशन पॉलिसी एंड प्रोविसन इन इण्डिया, ए सीमा टू एन एम्बेडकर, टीप एम टीप प्रिन्सिपल नई दिल्ली 1991, पृ. 18
5. बिलव कुमार, पुण्याई अम्बेडकर - जीवन और दर्शन भारतीय टीप प्रकाशना, नई दिल्ली 1968 पृ. 28
6. भीमराव अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाक्य 1, खण्ड-1 और अन्वित्तः प्रसाद, भारत सरकार, नई दिल्ली 1998 पृ. 20
7. सदी, पृ. 107
8. सदी, पृ. 111
9. बी.आर. अम्बेडकर, राष्ट्रीय आन्दोलन में डॉ. अम्बेडकर की भूमिका, सत्य साहित्य संघ, जयपुर, 1988, पृ. 27
10. सदी, पृ. 21